# मक्सिम गोर्की

# अभागा

# मक्सिम गोर्की लिखित

# अभागा

**यह उपन्यास परिकल्पना प्रकाशन द्वारा प्रकाशित किया गया है व प्रगतिशील साहित्य के वितरक जनचेतना द्वारा कम से कम दामों में जनता तक पहुँचाया जा रहा है। अगर आप पीडीएफ की बजाय प्रिण्ट कॉपी से पढ़ना चाहते हैं तो जनचेतना से सम्पर्क कर सकते हैं। ऑनलाइन खरीदने में कोई समस्या होने पर या जनचेतना को सहयोग करने के लिए नीचे दिये गये नम्बरों पर सम्पर्क करें।**

**लिंक :** http://janchetnabooks.org/product/abha-ga/

**जनचेतना सम्पर्क :** D-68, Niralanagar, Luc-know-226020
0522-4108495; 09721481546
janchetna.books@gmail.com
Website - http://janchetnabooks.org

**इस पीडीएफ फाइल के अंत में जनचेतना द्वारा वितरित किये जा रहे प्रगतिशील, मानवतावादी व क्रान्तिकारी साहित्य की सूची भी दी गयी है।**

# समाज बदलने की चाहत रखने वालों के लिए

- देश-दुनिया की हर महत्वपूर्ण घटना पर मजदूर वर्गीय दृष्टिकोण से लेख
- सुबह-सुबह प्रगतिशील कविता, कहानियां, उपन्यास, गीत-संगीत
- देश के महान क्रान्तिकारियों भगतसिंह, राहुल, गणेश शंकर विद्यार्थी आदि का साहित्य पीडीएफ व यूनिकोड फॉर्मेट में
- बिना ईमेल या सदस्यता के झंझट के, सिर्फ व्हाटसएप्प ग्रुप में जुड़कर
- हमारे ग्रुप में अन्य ग्रुप की भांति दिन में 500 मैसेज नहीं बल्कि दिन में सिर्फ दो तीन ही संदेश मिलेंगे ताकि आप आराम से पढ़ सकें।
- तो जुड़ें हमारे व्हाटसएप्प ग्रुप मजदूर बिगुल से। अपना नाम और जिला लिखकर इस नम्बर पर संदेश भेज दें - 9892808704
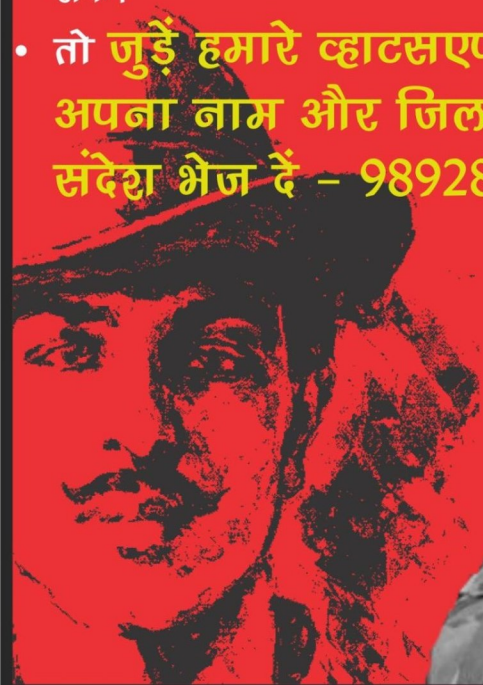
# अभागा

( उपन्यास )

# अभागा

( उपन्यास )

## मक्सिम गोर्की

परिकल्पना प्रकाशन

लखनऊ

# इस पुस्तक के बारे में

*‘अभागा’* **मक्सिम गोर्की** के एक प्रारम्भिक उपन्यास का हिन्दी अनुवाद है। यह उपन्यास अंग्रेजी में *‘लकलेस पावेल’* या *‘आर्फन पाल’* नाम से विगत शताब्दी के पूर्वार्द्ध में प्रकाशित हुआ था। उसी अंग्रेज़ी अनुवाद से **नूर नबी अब्बासी** ने यह हिन्दी अनुवाद किया था जो 1954 में *नवयुग प्रकाशन दिल्ली* से प्रकाशित हुआ था।

नूर नबी अब्बासी उस दौर के सुप्रसिद्ध अनुवादक थे जिन्होंने मक्सिम गोर्की और हावर्ड फ़ास्ट जैसे कई लेखकों की कृतियों से पाँचवें-छठे दशक में हिन्दी पाठकों को परिचित कराने का महत्त्वपूर्ण काम किया था। जनता की संस्कृति और हिन्दी भाषा की महत्त्वपूर्ण सेवा करने वाले ऐसे लोग आज भुलाये जा चुके हैं, यह अफ़सोस की बात है।

इस अनूदित कृति के ऐतिहासिक महत्त्व को ध्यान में रखते हुए, अनुवाद की भाषा में बिना कोई परिवर्तन किये हम इसे अविकल रूप में पुनर्प्रकाशित कर रहे हैं। हमारा यह उद्यम हिन्दी भाषा को समृद्ध बनाने वाले नूर नबी अब्बासी जैसे लोगों के प्रति हिन्दी भाषी समाज और नयी पीढ़ी की ओर से एक तरह का कृतज्ञताज्ञापन भी है।

गोर्की की मृत्यु के उपरान्त उनके काग़ज़-पत्रों के अध्ययन से पता चलता है कि अपने वृहद्काय उपन्यास *‘क्लिम सामगिन का जीवन’* के चौथे और अन्तिम भाग का लेखन समाप्त करने के बाद वे *‘अभागा’* उपन्यास पर फिर से परिश्रम करना चाहते थे। लेकिन असामयिक मृत्यु के कारण संशोधन-परिवर्द्धन का यह काम वे पूरा नहीं कर सके।

गोर्की के इस प्रारम्भिक उपन्यास में असह्य सामाजिक स्थितियों के दबाव तले पिस रहे समाज के सबसे दबे-कुचले लोगों के जीवन के आधिकारिक चित्रण के साथ ही सर्वहारा मानववाद और क्रान्तिकारी स्वच्छन्दतावाद के वे सभी तत्त्व मौजूद हैं, जिन्हें संगठित करके ‘माँ’, ‘अर्तामानोव्स’ जैसे उपन्यासों और आत्मकथात्मक उपन्यासत्रयी में गोर्की ने एक नयी यथार्थवादी दृष्टि एवं शैली विकसित की, जिसे समाजवादी यथार्थवाद का नाम दिया गया। गोर्की की सुदीर्घ रचना-यात्रा के एक प्रारम्भिक मील के पत्थर के रूप में इस उपन्यास का अत्यधिक महत्त्व है।

**– कात्यायनी**
*परिकल्पना प्रकाशन*

लखनऊ
15 जनवरी, 2002

# 1

**मे**रे नायक के माता-पिता बड़े विनम्र लोग थे। वे गुमनाम रहना चाहते थे और इसीलिए उन्होंने अपने नवजात शिशु को एक निर्जन गली में, एक मकान की चारदीवारी के समीप छोड़ दिया और अँधियारी रात्रि में विलीन हो गये। उनके इस कृत्य से प्रकट होता है कि अपनी स्वत: की उस सृष्टि पर उन्हें कोई विशेष गर्व नहीं हुआ और न ही उनमें इतनी नैतिक शक्ति थी कि वे अपने पुत्र का इस प्रकार पालन-पोषण करते कि वह बड़ा होने पर उनके स्वभाव के प्रतिकूल निकलता।

यदि उपर्युक्त विचार ने ही उन्हें पुत्र-त्याग पर विवश किया था तो इसका प्रमाण उस रात में जबकि उन्होंने अपने बालक को समाज के सुपुर्द करने का निश्चय किया था – एक संक्षिप्त पुर्जे से मिलता है। वह पुर्जा बालक के चिथड़ों से, जिनमें कि वह लिपटा हुआ था, चिपका हुआ था। "बालक का नाम रखा गया है, पाल"। वे पूर्ण रूप से मूर्ख या हत्बुद्धि तो नहीं थे क्योंकि उनका ऐसा करना केवल एक ही बात का प्रतीक है कि माता-पिताओं में अधिकांश का यह विचार होता है कि वे अपनी सन्तान को वे ही आदतें, पक्षपातपूर्ण भावनाएँ, विचार और तौर-तरीक़े सिखायें जिन पर उन्होंने अपने जीवन का एक लम्बा समय नष्ट किया है।

चारदीवारी के सहारे छोड़ जाने के कुछ समय पश्चात तक नन्हा पाल एक सच्चे भाग्यवादी की तरह वहाँ पड़ा रहा। वह बड़ी विनयशीलता से मुँह में रखा रोटी का टुकड़ा चूसता रहा। जब वह यह करता-करता ऊब गया तो उसने जीभ से उसे बाहर निकाल दिया और एक हल्की-सी आवाज़ निकाली जिससे रात्रि की निस्तब्धता में शायद ही कोई बाधा पड़ी हो।

वह अगस्त की रात थी, अँधेरी और ताज़गीपूर्ण। ऐसा महसूस होता था मानो पतझड़ समीप है। लचकदार भोजपत्र की शाखाएँ जिन पर पहले से ही बहुत से पीले पत्ते थे और जिनमें से कुछ ज़मीन पर गिर पड़े थे, नन्हें पाल की ओर झुक गये थे। कुछ-कुछ देर में ऐसा होता कि पत्ते आहिस्ता से अपनेआप को शाखाओं से अलग कर लेते, कुछ संकोच के साथ नर्म और घनी हवा में चक्कर लगाते

और धीरे-धीरे ज़मीन पर आ गिरते। दिन में काफ़ी बारिश हुई थी। सन्ध्या होने तक सूर्य ने अस्त होते हुए ज़मीन को पूरी तरह से गरमा दिया था।

कभी-कभी तो पत्ते पाल के नन्हें लाल मुँह पर गिर पड़ते जिसे उसकी माँ ने इस तरह कस कर चिथड़ों में लपेटा था कि मुश्किल से ही उसका कुछ हिस्सा दीख पड़ता था। जब पत्ते इस प्रकार गिरते तो पाल मुँह बनाता और पलकें झपकाता था। वह तब तक इसे बरदाश्त करता रहा जब तक कि उसने अपने चिथड़े न हटा लिए और अपना नन्हा-सा शरीर रात की नमी में खोल न दिया। और न तब अपने को स्वाधीन समझ उसने अपना नन्हा पैर उठा कर मुँह से लगा लिया और उसे चुपचाप चूसता रहा लेकिन साथ ही जो मजा उसे आ रहा था वह भी जाहिर ही है।

लेकिन आप मुझे क्षमा कीजिये। यहाँ मैं बालक के व्यवहार का जो उसने चारदीवारी के सहारे पड़े रहते समय किया था तर्क संगत दृष्टि से ज़िक्र कर रहा हूँ। मैं स्वयं तो उसे नहीं देख रहा था। केवल वह सुन्दर, गहरा आकाश जो सुनहरे तारों से भरा हुआ था, उसे देख रहा था। और दैवीय शक्तियाँ हालांकि वे बहुधा कवियों के और सच्चे भक्तों के होठों पर होती है दुनिया के मामलों के प्रति उस समय भी हमेशा की भाँति उदासीन थीं।

यदि मैंने पाल को उस चारदीवारी के समीप देख लिया होता तो उसके माता-पिता के लिए मेरी क्रोधाग्नि प्रज्वलित हो उठती और बच्चे के प्रति मुझमें अपार दया-भाव उमड़ आता। मैं तुरन्त पुलिस को बुला लेता और उसके बाद अपने को गर्वशाली समझता हुआ मैं घर लौटता। मेरी जगह कोई और व्यक्ति भी यही करता। मेरा वास्तव में इस पर विश्वास भी है। लेकिन उस समय वहाँ कोई नहीं था और इसीलिए उस शहर के निवासी अपने सद्विचारों को सहज प्रदर्शन करने से वंचित रहे। अधिकांशतः लोग अपने सद्गुणों के प्रदर्शन को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और कार्य साधक व्यवसाय समझते हैं। बशर्ते कि वह व्यवसाय अन्य प्रतियोगी हितों में हस्तक्षेप न करे।

लेकिन वहाँ तो कोई था ही नहीं। आख़िरकार पाल ठण्ड में बुरी तरह अकड़ गया। उसका पैर मुँह से अलग हो गया। पहले कुछ हल्की और धीरे-धीरे रोने की आवाज़ आयी और फिर ज़ोर-ज़ोर के रोने-चीख़ने से रात्रि की नीरवता विचलित हो उठी।

उसे देर तक नहीं रोना पड़ा क्योंकि कोई आधे घण्टे में ही एक व्यक्ति घूमने वाले लंबे वृक्ष के तने की समानता लिये हुए आया और बालक की ओर झुका। भारी आवाज़ में बड़बड़ाते हुए उसने कहा, "हरामी कहीं के," और मुँह भर के

एक तरफ थूका। फिर उसने बच्चे को उठा लिया और जैसे भी वह उसे लपेट सकता था बड़ी सावधानी से उसे लपेट कर बच्चे को अपने कोट में ठूँस लिया और इस प्रकार कड़कड़ाती ठण्डी हवा और पाल के रोने को एक साथ उसने बन्द कर दिया।

"हे भगवान, यह एक और आन पड़ा! हरामी कहीं के! अब ये इस गर्मी में तीन हो जायेंगे। कमबख्त कहीं के! एक और टपक पड़ा! पाप, पाप...और अधिक पाप! मैं तो इस पर थूकता हूँ।"

यह था क्लिम विस्लोव, चौकीदार जो नैतिकता का बड़ी कठोरता से पालन करता था पर हाँ, उसकी नैतिकता उसके घोर शराबी होने में कभी बाधक सिद्ध न हुई। न ही उसकी इस भ्रष्टता में उसने हस्तक्षेप किया कि वह माँ, बाप और आत्मा इन तीन प्रतीकों का बड़ा भक्त था।

"इसे ज़रा पुलिस चौकी तक ले चलो!"

यह आज्ञा एक साधारण से सिपाही कार्पेको की थी जो उस शहर का छटा हुआ दौं ज्वां[1] था। उसकी मूँछे लाल और नुकीली थीं और आँखें ऐसी साहसी थी कि वह बड़ी जल्दी किसी भी लड़की के हृदय को प्रज्वलित कर सकता था। यह हुक्म एरिफी गिबली को दिया गया था जो एक सिपाही था, बड़ा ही उदासीन और निराशपूर्ण व्यक्ति जिसे यदि कुछ प्रिय था तो वह एकान्त, पुस्तकें, चहकते हुए पक्षी और घृणा थी तो बकवास से, टैक्सी ड्राइवरों से और स्त्रियों से।

एरिफी गिबली ने नन्हें पाल को अपनी बाहों में ले लिया और वह वहाँ से जाने ही को था कि अचानक रुक गया। उसने बच्चे के चिथड़े खोले ताकि उसका चेहरा दिखायी दे। कुछ क्षण वह बच्चे की ओर निहारता रहा। फिर उसके गाल छुए, उस पर झुका, मुँह भींचा और अपनी जीभ गीली कर ली।

पाल फिर चुपचाप अपना रोटी का टुकड़ा चूस रहा था उसे दिलचस्पी ही न थी कि वह देखे और समझे कि एरिफी गिबली अपने उन विचित्र हाव-भावों द्वारा क्या कहना चाहता है। उसने उत्तर दिया पर वह केवल भवों द्वारा जिससे कोई निश्चित, स्पष्ट या समझने योग्य बात नहीं हो सकी।

और इसके बाद एरिफी गिबली इतनी ज़ोर से हँसा कि उसकी मूँछे उड़ कर उसकी नाक से लगीं। उसकी बड़ी सियाह दाढ़ी हिली, और उसके कानों से जा टकराई। ज्योंही वह सड़क पर चला उसने बड़े ज़ोर से पाल से प्रश्न किया, "अगली पीढ़ी का आदमी है, ऐं – और उत्तर में बालक ने स्वीकार सूचक सिर हिला दिया और गलगल करने लगा।

"अखह! ओक्खो! क्रू-क्रू-क्रू! बुर-बुर!" एरिफी गिबली ने कबूतर की

तरह गुटरगूं किया। एक बिजली के खंभे के पास पड़े ढलवां पत्थर पर बच्चे पर आँखें गड़ाये वह बैठा था मानो बच्चे की ओर से किसी प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा कर रहा हो।

बच्चा उलझन में पड़ गया, एरिफी की फूहड़ भाषा वह न समझ पाया। उसने कई बार सिर हिलाया, लापरवाही से अपनी भवें उठायीं लेकिन रोटी के टुकड़े को मुँह से न निकलने दिया।

एरिफी ठहाका मार कर हँस पड़ा।

"यह पसन्द नहीं, ऊँह? अबे – मच्छर कहीं के!"

इस शब्द "मच्छर" पर बच्चा पूरी तरह समझ गया कि उसे कुछ मिलने-मिलाने वाला नहीं हैं इसलिए उसने अपना मुँह और आँखें फाड़ कर उसे देखा। वह बड़ा गड़बड़ाया-सा लग रहा था लेकिन सच तो यह है कि वह अपनी रोटी चबा रहा था।

एरिफी ने बड़ी फुर्ती से उसे झंझोड़ा और रोटी निकाल फेंकी, फिर बड़ी जिज्ञासा भरी दृष्टि से बच्चे को देखा मानो अपने को यह विश्वास दिलाना चाहता है कि उसने वह रोटी उसके मुँह से नहीं निकाली है।

पाल खाँसने लगा।

"शू-शू।" एरिफी गिबली भाप निकालते हुए रेल के इंजन की भाँति सी-सी की आवाज़ करने लगा। वह बच्चे को हिलाने-डुलाने लगा और उसने समझा कि उसकी यह चाल खाँसी को रोक देगी। लेकिन बच्चा तो उससे भी कहीं ज़ोर-ज़ोर से खाँसने लगा।

"अरे-रे-रे!" एरिफी ने साँस ली। वह उलझन में पड़ गया और इधर-उधर लाचारी से ताकने लगा।

गली सोई हुई थी। कुछ-कुछ देर में सड़क के दोनों ओर रोशनियाँ टिमटिमा उठतीं। दूर कुछ फासले पर ऐसा दीख पड़ता था मानो रोशनियाँ बिल्कुल सटी हुई हैं – एक दूसरे से काफ़ी नजदीक हैं। लेकिन सारी गली की रोशनी धुँधली थी, ऐसा लगता था मानो वह किसी प्रकार की काली दीवार पर झुकी हुई हों जो इतनी ऊँची हैं कि अपने ऊपर फैले हुए आकाश को घूर रही हो, चमकते-दमकते तारों की सजीव झिलमिलाती किरणें ऐसी चमकती थीं मानो तारे मुस्कुरा रहे हों।

एरिफी ने सियाह दीवार से नज़रें हटा लीं और नीचे की ओर देखा।

शहर दीख रहा था, गहरे रंग की इमारतों का समूह ऐसा लग रहा था, मानो एक इमारत दूसरी पर धकेल दी गयी हो और लैंपों की टिमटिमाती रोशनी उन्हें

बार–बार प्रकाशित कर देती थी। कुछ–कुछ देर में मुश्किल से सुनायी देने वाली आवाज़ें उभरतीं और दब जातीं मानो कोई आलसी और उदासीन व्यक्ति अपना सिर ऊपर को करे और फिर झुका ले।

वह निस्तब्ध और भयावह दृश्य देखकर एरिफी को ग्लानि हुई। उसने पाल को अपने खुरदरे कपड़े की जाकेट में ज़ोर से दबा लिया, अपने सीने से लगाकर भींचा और ऊपर आकाश की ओर देख कर गहरी साँस ली। पाल को दबाव के कारण धसका लगा और अब वह दहाड़ने वाला ही था।

"फूहड़ साले!"

शहर के बारे में अपने विचारों को इस बुलन्द बाँग तरीक़े से जाहिर करके एरिफी रपसवां पत्थर से उठा और गली में चलने लगा। उसने बच्चे को अपनी बाहों में दबा लिया था और उसे बड़ी सावधानी से लिए जा रहा था। कुछ देर तक वह एक गली से निकलता और दूसरी में घुस जाता था। जाहिर है वह कुछ विशेष और असाधारण विचारों तले दबा चला जा रहा था क्योंकि सारी सड़क पर उसे यह पता ही न चला कि किस प्रकार गलियाँ एक जगह इतनी सकरी हैं और दूसरी जगह कहीं अधिक चौड़ी हो गयी हैं। कहीं एक दूसरे को काट देती हैं और कहीं मिल गयी हैं। इसी तरह विचारों में डूबा वह अचानक शहर के स्कवायर में आन पहुँचा। लेकिन उसे तब तक यह पता न चला कि वह स्कवायर में है जब तक कि उसे अपने सामने फ़ौवारा और अपनी दोनों ओर लैंप पोस्ट न दीख पड़े। यह फौवारा स्क्वायर के बीच लगा हुआ था। एरिफी पुलिस थाना कहीं पीछे छोड़ आया था।

अपने को व उस बोझ को कोसते हुए वह लौटा। लैंप की रोशनी एरिफी के कंधों पर पड़ी और पाल का नन्हा चेहरा दिखायी दिया जिसे कोट के सफ़ेद कपड़े में बड़ी सख्ती से दबाया गया था।

"सो गया जान पड़ता है!" एरिफी ने बच्चे पर से आँखें हटाये बग़ैर ही धीरे से कहा। उसका गला बुरी तरह रुँध गया और इस तनाव व पीड़ा से बचने के लिए उसने नाक सिनकी। उसने सोचा, कितना अच्छा हो अगर बच्चे अपनी ज़िन्दगी के प्रारम्भिक दिनों में ही यह जान लें कि ज़िन्दगी में कैसी–कैसी हिमाकत भरी पेचिदगियाँ होती हैं। लेकिन अगर ऐसा ही होता तो आने वाली नस्लों का वह इंसान जो उसकी गोद में था गहरी नींद न सो पाता। वह तो शायद ख़ूब ज़ोर–ज़ोर से रोता व चिल्लाता।

एरिफी गिबली पुलिस का सिपाही था और अधेड़ उम्र का था इसलिए ज़िन्दगी की पेचीदगियों से परिचित था। वह जानता था कि अगर आप एक बार

भी चीख़ कर नहीं बोलते तो पुलिस का सिपाही तक आपको नहीं पूछेगा। और अगर आप दूसरों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित नहीं कर सकते तो आप तबाह हो जाते हैं क्योंकि आख़िर इंसान अकेला जीता ही कितना है? सर्दियों तक तो जीता नहीं है। यह विचारहीन बालक ज़रूर तबाह हो जायगा क्योंकि ऐसे ख़तरनाक मौके पर यह सो रहा है।

"अरे ओ!" एरिफी ने थाने के मेहराब के नीचे चलते हुए बड़ी ग्लानि के साथ पुकारा।

"कहाँ से आये हो?" सफ़ेद कोट में विभूषित उसके साथी ने अनापेक्षित रूप से उसके सामने आते हुए पूछा।

"सारी गली की गश्त पूरी हो गयी।"

एरिफी ने एक प्रकार की सन्तोष की साँस ली और बड़ी ख़ुशी-ख़ुशी पाल के गाल के ऊपर अपनी नाक गड़ा दी।

"यह कौन है?"

"अबे चुप कर, बेवकूफ! दीखता नहीं बच्चा है!"

"तुझे शैतान का वास्ता! यह बकवास क्या कर रहा है?"

"कौन है डयूटी पर अभी?"

"गोगोलेव।"

"सो रहा है?"

"घोड़े बेचकर!"

"मारिया कहाँ है?"

"वह भी सो रही है। और क्यों न हो वक़्त भी सोने का ही है।"

"उँह हूँ, वह तो ठीक है। ..." एरिफी गिबली ने खुसर-पुसर के अन्दाज़ में कहा। वह विचार-मग्न था और हिला तक नहीं।

"मेरी डयूटी भी बस अब ख़त्म होने ही वाली है। फिर मैं भी जाकर सो सकता हूँ!" दूसरे ने कहा और चलने लगा।

"ज़रा ठहरो, मिखाइलो!" एरिफी ने ढीले हाथ से उसकी आस्तीन पकड़ कर खींची और फिर राजदाराना अन्दाज़ में उसके कान में कहने लगा :

"मारिया से अगर बात करें तो कैसा रहे? तुम्हारा क्या ख़याल है?"

"हाँ, हाँ, बस इसी के तो वह इन्तजार में है!" मिखाइलो व्यंग्यपूर्ण हँसी हँसा और पाल के शान्त, सोये हुए चेहरे को देखने लगा। "भाई मेरे, वह तो अपने बच्चों से भी ऊब गयी है।"

"अरे तो क्या एक रात भी न रखेगी?" एरिफी ने ऐसे स्वर में कहा जिसको

उसने वह बड़ा तर्क पूर्ण समझा।

"तो फिर मैं क्या करूँ? यह तो सिर्फ़...तुम तो जानते ही हो उसे – मुझे वह यहाँ से निकाल बाहर करेगी...अच्छा, ज़रा दो तो मुझे देखता हूँ क्या होता है।"

एरिफी ने बड़ी सावधानी से पाल को अपनी बाहों से मिखाइलो की बाहों में दे दिया। उसने पंजों के बल चल कर अपने साथी का बरामदे तक पीछा किया और उसके कंधों के ऊपर से बड़ी दिलचस्पी से बच्चे के चेहरे को झाँकने लगा और जब मिखाइलो के भारी बूट की बरामदे के पत्थर के फर्श पर टप-टप की आवाज़ आयी तो उसने अपनी साँस रोक ली। वे चलते-चलते दरवाज़े तक पहुँच गये।

"तुम जाओ, मैं यहीं रुकता हूँ," एरिफी ने सरगोशी के अन्दाज़ में कहा।

मिखाइलो ने दरवाज़ा खोला और अदृश्य हो गया।

एरिफी निश्चल खड़ा रहा। उसे बड़ी व्याकुलता और कसक महसूस हुई। अपने कोट के कफ़ से उसने एक धागा खींच लिया, बड़ी शक्ति से अपनी दाढ़ी कुरेदी, दीवार का कुछ पलस्तर निकाल लिया लेकिन इनमें से किसी भी बात ने उसका दिल हल्का न किया।

दरवाज़े के पीछे से कुछ मौन झगड़े की आवाज़ सुनायी पड़ी।

"गालियाँ तो ख़ूब दीं उसने और बकी-झकी भी पर ले लिया उसे!" मिखाइलो ने दरवाज़ा खोलते हुए ऐलान किया। उसके सफाचट चेहरे पर विजयोल्लास के भाव अवगत हुए।

"वाह, मार लिया शेर!" एरिफी गिबली ने साँस ली। दोनों बाहर आने के लिए बढ़े।

"अच्छा, चल दिये भई! मैं अपने पहरे पर जा रहा हूँ।"

"अच्छा, ठीक है। जाओ।" मिखाइलो ने लापरवाही से कहा। वह एक कोने में गया, कुछ घास-फूस उसने जमा की और अपने सोने के लिए बिस्तरा तैयार करने लगा।

एरिफी धीरे-धीरे सीढ़ियाँ उतरने लगा। जब वह तीसरी सीढ़ी पर पहुँचा तो उसे महसूस हुआ मानो उसके क़दम सीढ़ियों से चिपके जा रहे हों। कई मिनट वह वहाँ निश्चल खड़ा रहा। अन्त में निम्नांकित कथोपकथन लैम्प की उस मद्धम रोशनी में हुआ :

"माइक?"

"अब क्या है?"

"तुम कल उसे छोड़ आओगे?"

"हूँ? बच्चों को? हाँ, हाँ बिल्कुल!"

"अनाथालय में?"

"ना बेवकूफ कहीं के, लुहार के यहाँ!"

कुछ क्षण दोनों मौन रहे। मिखाइलो ने अपने कोने वाले बिस्तर में घास लगाई। उसके बूट फर्श पर फिसलने लगे। एरिफी ने नज़र उठाई और निद्रामग्न शहर को देखा। काली अँधियारी रात्रि ने सारे मकानों को एक सफ़ेद, ठोस दीवार में परिणत कर दिया था। गलियों की सियाह रेखाएँ गहरी दरारें मालूम दे रही थीं। शहर के एक किनारे पर बायीं ओर अनाथालय स्थित था। वह पत्थर की बड़ी इमारत थी, बहुत ही सफ़ेद और दीखने में सख्त। उसमें बड़ी-बड़ी ख़ाली खिड़कियाँ थीं। वहाँ न फूल थे और न ही उन खिड़कियों पर लटकने वाले पर्दे।

"वहाँ तो वह मर जायगा।" एरिफी भुनभुनाया।

"कौन, बच्चा? हाँ हो सकता है। इत्तेफाक है कोई बच जाय क्योंकि – तुम तो जानते हो – वहाँ की सफाई। और वहाँ की जो व्यवस्था है..."

लेकिन यहाँ मिखाइलो पर नींद ऐसी हावी हुई है कि वह खर्राटे लेने लगा। सफाई के ध्वसांत्मक प्रभाव पर जो उसकी राय थी और बच्चों पर जिस प्रकार का नियन्त्रण वहाँ रखा जाता था वह सब बग़ैर किसी व्याख्या या ज़ोर के ऐसे ही रह गये।

एरिफी कुछ ज्यादा देर तक खड़ा रहा; फिर अपने पहरे पर लौट गया।

जब वह वहाँ पहुँचा तो रात ढल चुकी थी और उषा आगमन के कारण वायु में ताजगी पैदा हो गयी थी। जहाँ उसकी झोंपड़ी थी वह कमोबेश जंगल ही था। अब उसे पहले से कहीं अधिक अकेलापन महसूस हुआ, उसे लगा मानो वह सारे शहर से बिल्कुल अलग है! और ये विचार अब उसे पहले से कहीं अधिक दु:खद जान पड़े। पहले कभी इस प्रकार के विचार ने किसी खास भाव अथवा विचार को नहीं उकसाया था लेकिन आज ज़रूर उकसाया। पुरानी भद्दी झाड़ियों से सटी एक बेंच पर जो दरवाज़े के ऐन सामने थी, वह बैठ गया। एरिफी की बुढ़ापे से झुकी कूबड़वाली आकृति वहाँ के वातावरण से बिल्कुल घुल-मिल गयी। वह विचारसागर में डूब गया। बड़े धीरे-धीरे विचार उसके मस्तिष्क को स्पर्श करने लगे। उसके किसी भी विचार को स्पष्ट रूप में और प्रश्न बनकर सामने आने के लिए काफ़ी समय लगता था : क्या लोगों को अधिकार है कि वे बच्चे पैदा करें चाहे उन्हें पाल सकें या नहीं?

जब वह अपनी बुद्धि को पूरी तरह झिझोड़ चुका तो उसने बड़ी दृढ़ता और निष्कर्षपूर्ण स्वर में अपने प्रश्न का उत्तर दिया, "नहीं, उन्हें अधिकार नहीं है।"

तब कहीं जाकर उसका दिल हल्का हुआ। उसने गहरी साँस ली और हवा में अपनी मुट्ठी धमकाने के अन्दाज में लहराते हुए दाँत पीसकर कहा – "सुसरे कहीं के।"

सूर्य उदय हुआ। उसकी पहली किरणों ने झोंपड़ी की खिड़कियों पर अपना प्रकाश बिखेरा और शीशे के रंग को ज्वाला की भाँति सुनहला कर दिया। झोंपड़ी की वे दोनों खिड़कियाँ, ऐसा महसूस हुआ मानो किसी अजनबी राक्षस की हँसती हुई बड़ी-बड़ी आँखें हैं, जिसका बड़ा ही तीव्र हरा सिर है और जो भगवान की धरती को देखने के लिए ज़मीन से निकल रहा है। एल्डर झाड़ियाँ जो सरकते-सरकते छत पर पहुँच गयी थीं बहुत कुछ उस राक्षस के बालों का जूड़ा है। और दरवाज़े में जो दरारें थीं वे उसके सुखी, मुस्कुराते हुए माथे पर नालियाँ-सी प्रतीत हो रही थीं।

## 2

**अ**गले दिन दोपहर को एरिफी मारिया के घर बैठा हुआ था। मारिया के नक्शो-निगार बड़े तीखे और आखें हरी थीं। वह मैली-कुचैली पोशाक पहने थी, उसकी घघरी उसने ऊपर को मोड़ रखी थी और आस्तीनें भी चढ़ी हुई थीं, उसकी हर हरकत वीर-रस प्रधान कविता की भाँति चुस्त और फुर्तीली थी।

एरिफी गिबली उससे बहुत कुछ कहना चाहता था लेकिन चूँकि बोलने की उसे आदत न थी इसलिए उस समय उसके साथ बैठा हुआ वह बहुत अटपटा और भद्दा-सा महसूस कर रहा था। मारिया के शान्त एवं सावधानीपूर्ण व्यापारों ने अपने आत्म-निश्चय और शक्ति द्वारा उसे काफ़ी दबा दिया था। वह नारी जाति से घृणा करने वाला व्यक्ति था और अपनी इस प्रवृत्ति को वह छिपा न सका। जिस प्रकार वह मारिया के चौड़े चेहरे की ओर उदासीनता से निहार रहा था और मुँह भर-भर के फर्श पर थूक रहा था उससे तो उसकी यह जहनियत और भी स्पष्ट होती जा रही थी।

नन्हा पाल मुश्क बेंत की बनी हुई कुर्सियों के गद्दे पर चिथड़ों में लिपटा हुआ लेटा था। वह उस समय शारीरिक व्यायाम में व्यस्त था और हाथों से पैर पकड़-पकड़ कर उसे मुँह में देने की कोशिश कर रहा था। लेकिन उसके लाल, मोटे पाँव ने अवज्ञा प्रकट की और नन्हा पाल उस पर दुखी न होकर ख़ुशी की आवाज़ें निकालता रहा।

"हाँ तो ओ काफिर! क्या करोगे तुम अब इसका?" मारिया ने अपनी कुर्ती

से मुँह पोंछा और एरिफी के रूबरू बैठते हुए कहना शुरू किया। "मैं तो इसे अपने यहाँ रख नहीं सकती, उँ हूँ नहीं। बूढ़ी किताएवा के सिर पटको इसे ले जाकर। दो रूबल लेगी वह तुमसे और इसे पाल देगी। बच्चा एक महीने से ज्यादा का हो गया है और अच्छा खासा तन्दुरुस्त और शान्त बच्चा है। कोई तकलीफ नहीं देगा उसे। ले जाओ और उसे दे दो।"

"और अगर उसने इसे भूखों मार दिया तो?"

"भूखों मार दिया? भूखों क्यों मार देगी?" मारिया ने चुटकी ली।

"और क्या?...वह भी तो औरत है और..."

"ओ ए, बन्द हो जाय तुम्हारी जबान ख़ुदा करे, मरदूद कहीं के!" लो मैं अभी उसे वहाँ ले जाती हूँ ओर बस हो गया काम। सत्तर उसके पहले हैं ही। इकत्तरवां यह हो जायगा। हाँ, हाँ, हाँ!...मजा आ जायगा! भूखो मारेगी? और बच्चे पालता फिर कौन है, तुम्हारे ख़्याल से – तुम जैसे शैतान? अरे! औरत ही तो सारी कूवत है! – तुम जैसे शैतानों को कौन पालता-पोसता है? क्या तुम किसी लौहार की निहाई पर मढ़े गये थे, क्यों? तुम्हें हक मिल गया है ना बातचीत करने का, इसीलिए!"

"अच्छा, भौंके मत जाओ बस," एरिफी ने असल बात पर आते हुए कहा और मारिया की नज़रों से बचने लगा जो किसी खास अन्दाज़ में उस पर गड़ी हुई थी। "मेरा वह मतलब नहीं था। मैं तो यह सोच रहा था..."

"ख़ामोश – बहुत हो गया! तुम्हें ख़ुश करने, के लिए कोई अपने तौर-तरीक़े नहीं बदल दूँगी, समझे! देखते हो कौन कह रहा है यह सब। बहुत बड़ी हस्ती तुमसे बात कर रही है! क्या यह हो सकता है कि मेरी जबान इतनी सख्त और शक्तिशाली हो कि तुम उसे सुनकर मर जाओ? क्या तुम्हारे ख़्याल में किसी और अन्दाज़ में भी तुमसे बातचीत की जा सकती है? तुम जैसे आदमी को तो उठते जूती और बैठते लात पड़नी चाहिए।"

"अच्छा, अच्छा ज़रा समझदारी बरतो।"

एरिफी ने बड़ी सख्ती से महसूस किया कि इस मुँहफट औरत को ख़ूब फटकारे। पर उसने अपने भावों को बदलने का प्रयत्न किया और जब वह दब ही न सके तो उसे और भी घबराहट होने लगी।

"हाँ तो बोलो, क्या किया जाय, जल्दी करो और मैं चली। मैं तुम्हारी बात नहीं बर्दाश्त कर सकती।"

"जी हाँ, क्या कहने हैं आपकी नजाकत के। बुद्धू कहीं की!"

यह सुनना था कि मारिया का झगड़ालू और आक्रामक स्वभाव काफूर हो

गया और गालियाँ–कोसनों का उसका सोता यकबयक सूख–सा गया। सारे घर में वह ऐसी बौखलाई हुई फिरी कि एक क्षण को जो रुकती। सारे काम उसने एक साथ करने शुरू कर दिए, अभी खाना पका रही है तो अभी सी रही है; एक मिनट इस बच्चे को खिलापिला रही है तो दूसरे ही मिनट दूसरे को; कभी चूल्हे के ऊपर के बच्चों को खिलाती है तो कभी उसके पीछे के बच्चों को! कभी पर्दे के पीछे जाकर बिस्तर बिछाती है तो कभी खिड़की में जाकर मुर्गियों को आवाज़ देती है; वहाँ से हटी तो फिर बच्चों के पास आ जाती है जो किसी कोने में पड़े ख़ूब ज़ोर–ज़ोर से अपने राग अलाप रहे हैं। अन्त में वह एरिफी के सामने आन खड़ी हुई और कमर पर दोनों हाथ रख कर उसने निम्नलिखित व्याख्यान दे डाला :

"पहले तो तुम जाओ और उस सूबेदार के पास उससे कहो कि मैं ख़ुद ही बच्चे को रखे लेती हूँ। और इसके बाद हर महीने पेशगी दो रूबल मुझे लाकर दो। मैं उन्हें बढ़िया किताएवा को दूँगी। और एक रूबल कमीज और कंबल के लिए। ...और हाँ, दूसरी चीज़ें तो हैं ही। और उसके बाद – बाहर निकल जाओ यहाँ से! तंग आ गयी मैं तुमसे – मुर्दार कहीं के!"

एरिफी उठा, गहरी साँस ली और चुपचाप बाहर निकल गया।

शाम को बूढ़ी किताएवा मारिया से मिलने आयी। उसकी बायीं आँख कानी थी और चेहरा, रंग व आकार दोनों में मुर्झाई हुई मूली के समान दीखता था। उसकी ठोड़ी एक ज़रा–सी सफ़ेद शाही दाढ़ी से सुशोभित थी। वह खर्रेदार बारीक आवाज़ में बोल रही थी और हर क्षण या हर तीसरे शब्द पर, प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में, किसी न किसी साधु–सन्त को तंग करती थी और या तो उनका हवाला अपनी सच्चाई की गवाही के लिए देती थी या फिर बिना किसी तुक के उनके नाम ले देती थी।

मारिया ने बड़ी रुक्षता से उसे स्थिति समझाई, ज़रूरी आदेश उसे दिये और इस चेतावनी के साथ अपनी बात पूरी की :

"देखो, अब ज़रा सावधान रहना! इस हद तक भी तुम जा सकती हो पर इससे आगे हरगिज नहीं। अपनी मर्यादा देखलो।" उसने किताएवा को धमकाते हुए अपनी उँगली हिलाई।

बूढ़ी किताएवा ने छोटी–सी गेंद बनकर मारिया के सामने सिर झुका दिया। आत्म–ग्लानि की दल–दल में लुढ़कते हुए वह गुलामों की भाँति रूखेपन से मुस्कुराई और करीब–करीब सरगोशी के अन्दाज में उसने कहा :

"मारिया तिमोफियेवना, प्यारी! तुम तो मुझे जानती हो। किसी और से दगा

कर लूँगी पर तुमसे कभी नहीं..." और तब उसने अपना सिर इस प्रकार हिलाया मानो यह प्रकट कर रही हो कि उसे कहना तो बहुत कुछ है मगर शक्ति नहीं कि कह दे।

"बिल्कुल ठीक कहा। मैं तुझे ख़ूब अच्छी तरह जानती हूँ, पारसा, बुड्ढी दगाबाज! हाँ, मैं तुझे ख़ूब जानती हूँ।"

यह कुछ ज़रूरत से ज्यादा ज़ोर के साथ कहा गया था जो कि एक बुढ़िया के लिए नहीं कहा जाना चाहिए था।

नन्हा पाल पहले की भाँति अब भी उसी गद्दे पर चुपचाप लेटा हुआ था। सिर्फ़ उसी वक़्त कुछ अनेच्छा उसने जाहिर की जब बूढ़ी किताएव्वा ने बड़ी श्रद्धापूर्वक धीरे से कहा, "ख़ुदा हम पर रहम करे!" और उसे अपनी बाहों में उठा लिया। तब वह फिर चुप हो गया और अपने को भाग्य के हाथों सौंप कर तब तक चुप रहा जब तक कि बुढ़िया उसे बाहर गली में न ले आयी। गली में आकर सूर्य की ओर देखकर उसने ऐसा मुँह बनाया कि मानो उसके टुकड़े ही तो कर डालेगा क्योंकि सूर्य की किरणें सीधे उसकी आँखों को देख रही थीं, लेकिन उसके चिढ़ाने से कोई मक्सद हल न हो पाया। फिर उसने अपना सिर हिलाया पर उसका भी कोई खास असर न हुआ। सूर्य सीधा उस पर पड़ता रहा और उसके गालों की पतली चमड़ी को जलाने लगा और अब उसने दहाड़ना शुरू किया।

"अरे बदमाश कहीं के! वहाँ घर में लेटा था बिल्कुल चुपचाप था जैसे मुँह में दूध लिये लेटा है और ज्योंही मैं तुझे बाहर लेकर आयी कि चीख़ने लगा। चुप होजा और पड़ा रह ऐसे ही अब!"

बूढ़ी किताएव्वा उसे एक गोद से दूसरी गोद में झूलाती हुई चलती रही। हाल ही में बूढ़ी किताएव्वा को पाँच नन्हें दुधमुहों को पालना पड़ता था जो मुस्तक़िल तौर पर भूख से व्याकुल हो चीख़ते रहते थे और बुढ़िया को क्षण भर की भी शान्ति या विश्राम न मिलता...या ख़ुदा! एक और ले लिया हैं मैंने, अब छः हो जायेंगे, उसने दिल में सोचा। ये लोग हैं तो निश्चित रूप से दर्देसरी पैदा करने वाले लेकिन तसल्ली इस बात की है कि काफ़ी खाने को न भी मिले तब भी आप भूख से मरते नहीं हैं।

सूर्य की तिरछी किरणें धुँधली, पुरानी और हरे रंग की खिड़की में से होकर कमरे में पड़ रही थीं। खिड़की की दरारें पोटीन से भर दी गयी थीं और उसमें खिड़की के शीशे पर एक ख़ूबसूरत डिजाइन बन गया था। ऐसा महसूस होता था मानो सूर्य की किरणें उन दो नीचे कमरों को नौसादर व चूने से भरी गन्ध से सिकुड़ गयी थीं और मुर्झा गयी थीं। कमरों की छतें धुएँ से काली होगयी थीं,

दीवार पर लगे काग़ज़ गन्दे थे और फट गये थे और फर्श बड़े-बड़े दरारों से सुसज्जित था और अपनी दुर्दशा पर कराह रहा था।

पहला कमरा जिसे बच्चों का कमरा कहा जाता था स्पार्टा नगर की-सी सादगी से सजा हुआ था जिसमें तीन लम्बी-चौड़ी बेंचें कचरे से लदी हुई थीं, बस और कुछ नहीं था। कमरा इतना गन्दा था कि जाहिर तौर पर मक्खियाँ भी उस सड़े गन्दगी भरे वातावरण में रहने से डरती थीं और इसीलिए कुछ देर उन बच्चों के कमरे के बदबूदार वातावरण में चक्कर लगाकर वे जल्द ही हार जाती थीं और विरोधस्वरूप झट से भिनभिनाते हुये दूसरे कमरे में चली जाती थीं या फिर एक खुले दरवाज़े में से होकर उस बड़े हाल में चली जाती थीं जो कुछ हरे आइल क्लाथ जैसे कपड़े से ढँका हुआ था।

दूसरा कमरा एक विभाजन द्वारा बच्चों के कमरे से अलग कर दिया गया था और उसमें एक छोटा टेढ़ा-मेढ़ा दरवाज़ा काट कर बना दिया गया था। दरवाज़े के ऐन सामने एक मेज रखी थी जिस पर एक बेरंगा समोवार[2] रखा था जो एक ओर को झुका हुआ था। समोवार बिल्कुल बेकार था और उस पर कई जगह गढ्ढे पड़े हुए थे। वह सदैव सीटरी मारता रहता था और पुराने रोगी की भाँति अक्सर कराहता रहता था। बूढ़ी किताएवा की गृहस्थी में जिस गन्दगी का बोलबाला था उसमें ऐसे समोवार की मौजूदगी कुछ अजब न थी।

उन दोनों कमरों में मालूम होता था कोई है ही नहीं। मक्खियों की निराशाजनक भिनभिनाहट और समोवार की असन्तोष प्रकट करती हुई आवाज़ के अतिरिक्त और कोई आवाज़ नहीं सुनायी देती थी। लेकिन निपट एकान्त का प्रभाव उस समय लुप्त हो जाता था जब कोई दरवाज़े के पास अँधियारे कोने को देख लेता था। वहाँ बेंच पर कोई जीवित वस्तु हिलती रहती थी। वह किसी की टांग थी जो हवा में उठती थी और फिर अर्द्ध वृत्ताकार की आकृति बन जाती थी। कोई भी श्रोता यदि ग़ौर से सुनता तो कुछ बड़ा ही धीमा और बोझिल-सा ठुनकना सुन सकता था।

इस टांग का और उस दूसरी का, भी जो मुड़ी हुई थी और हरी और मुलायम हड्डियों वाली थी मालिक एक बच्चा था जो कोई डेढ़ बरस का था। बूढ़ी किताएवा कभी-कभी जब उस पर क्रोधित हो जाती तो उसे 'गाजर' कहा करती थी। और जितने भी बच्चे उसके यहाँ पालने के लिए रखे गये थे उनमें से सभी को उसने इस क़िस्म के समुचित और मजेदार नाम दे रखे थे। उस मुलायम हड्डियों वाले बच्चे को 'गाजर' बड़ा ही उपयुक्त नाम दिया गया था। उसके चेहरे की झुर्रियाँ ऐसी थीं मानो बुढ़ापे से पड़ गयी हों, बीमारी की वजह से वह

बिल्कुल सूख-सा गया था और उसका शरीर विकृत भी हो गया था। अजीबो-गरीब उलझन के भाव जो उसके चेहरे पर अंकित थे ऐसा आभास दिलाते थे मानो वे उसके छोटे-से मुर्झाये हुए चेहरे पर जम गये हों, मानो वह यह जानने का प्रयत्न कर रहा हो कि आख़िर वह कौन-सी चीज़ है जो मुझे इस दुनिया में इस विलक्षण और लंगड़ाती स्थिति में लाई होगी! मानो यह अनुमान लगा रहा हो कि किसने मेरे साथ यह निर्दय, क्रूर और व्यर्थ का मज़ाक़ किया होगा और क्यों किया होगा। हालांकि ऐसा लग रहा था कि वह यह सब जानने की कोशिश कर रहा है लेकिन साथ ही यह भी स्पष्ट ही दीख रहा था कि वह यह निष्कर्ष भी निकाल चुका है कि ऐसी कोशिशें हैं वृथा ही और इस प्रकार प्रतिकूल परिणामों के कारण सदैव उदास व दुखी ही रहता था।

कई दिन तक वह वहीं कोने में पड़ा रहा। कभी इस टांग को उठाकर, कभी दूसरी मुड़ी हुई टांग को उठाकर वह बड़े ग़ौर से काफ़ी देर तक उनकी ओर देखता रहता था। उसके गहरे नेत्रों में घूरने और एकाग्रचित्तता से देखने की शक्ति और बड़ा ही गम्भीर भाव था जो बहुधा रोगी बालकों की आँखों में दृष्टिगोचर होता है। वह अपनी टांगों का परीक्षण करता और बड़ी फीकी-फीकी आवाज़ में तुतलाहट से बोलता था। उसके पीले, रक्तहीन होंठ उसके दाँतहीन दाड़ों व मसूड़ों का तथा नन्हीं पीली-सी जीभ का पता देते थे। उसके बाजू जो वह हिला न सकता था, एक कड़े में फंसे हुए थे और उसकी कलाइयाँ उसकी बगलों के सहारे रखी थीं। यद्यपि उसकी टांगें घुटनों से ऊपर-ऊपर तो ख़ासीहालत में थीं लेकिन घुटनों से नीचे का भाग धनुष जैसा झुका हुआ था जो टख़्नों के पास से मुड़ा हुआ था। कभी-कभी तो वह अपनी टांगों के परीक्षण व अध्ययन से ऊब जाता था। फिर असमंजस के उसी अपरिवर्तित भाव से वह अपनी दृष्टि छत पर टिकाता जहाँ खिड़की में से दाख़िल होती हुई सूर्य की किरणों से पानी के टब में पड़ने वाला सूर्य का हिलता हुआ प्रतिबिम्ब देखता और फिर छत को घूरने लगता। लेकिन फिर प्रत्यक्ष रूप से जब वह यह समझ जाता कि सूर्य की किरणों को अपना निकटतम परिचित व मित्र बनोने से कुछ लाभ न होगा तो वह फिर अपनी गंभीर नज़रों को छत से हटा कर पैरों पर ले आता जो शायद उसके लिए सबसे ज्यादा रुचिकर थे। सूर्य की किरणों में उसे इसलिए भी दिलचस्पी नहीं थी क्योंकि वह महसूस करता था कि शीघ्र ही ये सब साँसारिक चीज़ें लुप्त हो जायेंगी – उसकी देखने की शक्ति, उसकी विचार-शक्ति, वह स्वयं निकट भविष्य में धरती के ऊपर से नीचे ज़मीन में पहुँच जायगा।

वह बूढ़ी किताएवा के यहाँ अठारह महीने से रहता आया था लेकिन उसे

उसने पैसे दो महीने के ही दिये थे। अब वह उस समय की बड़ी व्याकुलता से प्रतीक्षा कर रही थी जब वह "उसकी कोठरी ख़ाली करेगा" और इसी प्रकार का मंगल भाषण वह उसके साथ किया करती थी।

एक बार वह उसकी माँ की कोठरी में गयी थी उसने उस पीलिया से पीड़ित झुकी हुई गर्दन को पलंग पर बराये नाम ज़िन्दा लेटे हुए देखा था।

"कहो, मन्नी कैसी हो?" कहते हुए बूढ़ी किताएवा जहाँ माँ निश्चल लेटी थी उसी के पास पलंग पर बैठ गयी। "तुम में पैदा करने की तो ताकत थी अब उसे खिलाने के लिए कौड़ी नहीं छोड़ी तुमने? यह तो बुरी बात है। फिर मैंने कोई तुम्हारे पापों का बोझ ढोने का जिम्मेदारी थोड़े ही ले रखी है। मुझे पैसे दो वरना अपने बच्चे को वापस ले जाओ। मैं कोई ऐसी दानशील स्त्री नहीं हूँ।"

माँ की मन्द, नीली आँखें खुलीं और खुली ही रह गयीं, उनमें गहरे दुःख और भय के भाव चमक उठे।

"अम्मा!" उसने रुँधे स्वर में कहा। "मैं सब चुका दूँगी! एक-एक कोपेक चुका दूँगी तुम्हारा। विश्वास रखो सारा हिसाब चुकता कर दूँगी। मैं अपने जिस्म से गोश्त काट कर उसे बेचूँगी और तुम्हारे पैसे अदा करूँगी। मैं कोठा खोल के बैठ जाऊँगी...ज़रा सब्र करो, अम्मा! मुझ पर तरस खाओ, दया करो मुझ पर और उस गरीब पर...आय, आय, आय...दया करो!"

बूढ़ी किताएवा ने उसकी सिसकियाँ और आहें सुनीं और देखा कि उसके पिचके हुए और मुर्झाये हुए गालों पर से आँसू ढुलक रहे हैं। उसने देखा कि उसकी सूखी छातियों में स्पन्दन हो रहा है।

"अरे पतिता! बेशर्म कुलटा! तुम जैसियों को तो ख़ूब ज़ोर-ज़ोर से पीटना चाहिए। हाँ, और क्या!" उसने भिड़कते हुए कहा।

"ओह, अम्मा! वह मुझसे प्यार करता था, मुझसे शादी करना चाहता था!. .."

"वह तो बेटी पुराना रोना है हजार बार सुन चुकी हूँ वह मैं।"

ऐसा प्रतीत हो रहा था कि बूढ़ी किताएवा ने न सिर्फ़ वह रोना रोते सुना था बल्कि खुद भी रोया था। उसने मुँह बनाया खाँसी, झुकी, कुछ क्षण सोचा और बीमार स्त्री का चुम्बन लेकर चली गयी और जाते-जाते यह आज्ञा दे गयी कि वह शीघ्र ही अच्छी हो जाय। लेकिन स्त्री ने आज्ञोलंघन किया और चल बसी। 'गाजर' बूढ़ी किताएवा के अनाथालय में ही रहा। वह जल्द ही उससे ऊब गयी। बाद में उसने उसे एक कोने में डाल दिया और यह आशा की कि कुदरत को जो मंजूर है वह अपने आप हो जायगा। उसने अपने आपको इसी विचार से सन्तुष्ट

किया कि अब वह किसी भी प्रकार अधिक नहीं जी सकेगा और इस प्रकार वह अपने अन्तःकरण में उठते हुए गुबार को शान्त करती रही।

गाजर के अतिरिक्त चार और भी वहाँ थे। तीन का पैसा तो वक़्त पर मिल जाता था और चौथा भीख माँगने जाता था और जो कुछ लाता था उससे कहीं अधिक उसे अपने रहने-खाने के लिए देना पड़ता था। वह मोटा, गोल और गुलाबी गालों वाला छः वर्ष का छोकरा था जिसका नाम था गुर्का बाल। बड़ा ही दिलेर लड़का था वह और बूढ़ी किताएवा की उस पर विशेष कृपा दृष्टि-थी।

"तू आगे चल कर परले दर्जे का बदमाश निकलेगा गुर्का!" जब वह शाम की भीख माँग कर लौटता तो बूढ़ी उसकी इसी तरह प्रशंसा किया करती थी। उसी समय वह अपने चमड़े के कश्कोल में से रोटी के टुकड़े, समोवार के ढक्कन, दरवाज़े से हत्थे, बाट, खिलौने, बत्तियाँ, छोटी कढ़ाइयाँ और इसी तरह का कूड़ा कचरा निकाल कर रख देता था।

"ओह, कैसा बदमाश बन जाऊँगा मैं! सब कुछ चुरा भागूंगा मैं, घोड़े तक भी नहीं छोड़ूंगा मैं!"

"और जो पुलिस वालों ने पकड़ के तुझे भेज दिया सायबेरिया तो?" बूढ़ी किताएवा ने स्नेह भरे स्वर में पूछा।

मैं भाग निकलूँगा! गुर्का ने तुरन्त उत्तर दिया।

और तब बूढ़ी किताएवा उसे सात कोपेक दे देती और बाहर खेलने भेज देती।

बाक़ी तीन लड़के भी एक दूसरे से बहुत भिन्न नहीं थे वे अभी तक कोई वैयक्तिक लक्षण-विशेष अपनाने नहीं पाये थे। ज़रा ज्यादा देर तक भूखे रहे कि तीनों ने चीख़ना शुरू कर दिया और जब उन्हें ज्यादा खिला दिया जाता था तब भी रोते-पीटते थे। जब बूढ़ी किताएवा उन्हें पिलाना भूल जाती तब भी वे अपना राग अलापते थे और जब जबरदस्ती पिला देती थी तब भी वे भिनभिनाते ही रहते थे। और भी बहुत-सी बातें थीं जिनकी वजह से वे रोने लगते थे, लेकिन ये बातें व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से बूढ़ी स्त्री को महत्त्वपूर्ण लगी ही नहीं क्योंकि वह इतनी तीव्रता और ज़ोर के साथ उन बच्चों पर चीख़ती थीं कि तमाम बच्चों का कोरस उसी में डूब जाता था। साधारणतया वह बेचैन बच्चों का गिरोह था जो प्रति दिन भोजन, पानी, सूखे पलुवे हवा और दूसरी चीज़ें माँगते थे जिनके लिए उन्हें शायद ही कोई अधिकार था क्योंकि वे अधिक जिये नहीं थे अभी मात्र जीना प्रारम्भ ही किया था उन्होंने । चूँकि बूढ़ी किताएवा का ऐसा स्वार्थवादी सिद्धान्त था इसलिए वह उन्हें लाड़-प्यार नहीं करती थी और प्रकट रूप में उन्हें

आत्म-विश्वासी बनाने की वह कामना करती थी, चाहती थी कि ये बालक स्वयं इस योग्य हो जायं कि अपने भले के लिए आवश्यक प्रत्येक वस्तु वे स्वयं ही प्राप्त कर सकें।

बूढ़ी किताएवा की दिनचर्या इस प्रकार शुरू होती थी :

गुर्का बाल पाँच बच्चों में सवेरे सबसे पहले उठ जाता था। वह बूढ़ी किताएवा के कमरे में जो बाक़ी चार बच्चों के कमरों से अलग था, सोता था। आँख खुलने के शीघ्र बाद ही वह झट अपने सन्दूकों के बनाये बिस्तर से उछल पड़ता, तकिये के नीचे कुछ टटोलता और एक लंबा मुर्गे का पर खींच लेता। वह दबे पाँव और बड़ी सावधानी के साथ बच्चों के कमरे में दाख़िल होता, बग़ैर कोई शोर किये दरवाज़ा खोल लेता और दबे पाँव फर्श पर से गुज़र जाता। गर्मियों में फर्श के सूखे हुए तख्ते चर्र-चूँ की आवाज़ें निकालते थे और सर्दियों में एक तख्ता दूसरे पर चढ़ जाया करता था। इस प्रकार गुर्का चुपके-चुपके किसी भी बच्चे के पास जा पहुँचता जो सो रहा हो। वह उस पर झुकता और उसकी नाक में पर डालकर गुदगुदी करने लगता। बच्चा एक करवट से दूसरी बदल लेता, सिर इधर-उधर हिलाता, कुछ हास्यास्पद ढंग से गुर्राता और हाथ से अपनी नाक मलता। उस प्रतिक्रिया पर गुर्का अपनी हँसी न रोक पाता और लाल गुबारे की भाँति गाल फुला कर फिर वही हरकत जारी रखता। आख़िरकार बच्चा उठ बैठता और रोने-चीख़ने लगता। शीघ्र ही दूसरी उठ जाता और फिर तीसरा भी यही करता और पहले दोनों की सहानुभूति में चीख़ता जबकि गुर्का अपने पूरे ज़ोर के साथ पुकारता "अम्मा", एक से दूसरे बच्चे की तरफ भागता, सांप की तरह फुंकारता, मुँह बनाता, उनके नथौने में फूँकता और बहुधा इसी प्रकार दिल भर कर वह अपना मनोविनोद करता था।

अब तो एक बाकायदा संगीत मण्डली जम जाती जो ताल और लय तथा बदआवाज़ी में बड़ी ही विलक्षण लगती। बच्चे खाँसते, छींकते चिल्लाते, रोते-रोते बेदम हो जाते, फिर रोने लगते, मानो उन्हें कढ़ाई में भूना जा रहा हो।

'गाजर' को भी कभी कोई चिन्ता नहीं हुई। गुर्का को उसकी घूरने वाली और लगातार टांगों का परीक्षण करने वाली आँखों से बड़ा डर लगता था। एक बार गुर्का 'गाजर' को भी अपने शिकार में शामिल करने की गरज से उसकी ओर जा रहा था कि गुर्का ने देखा वे आँखें उसी पर गड़ी हुई हैं। वे बच्चे की आँखें नहीं दीखती थीं, ऐसा लगता था किसी सिपाही की आँखें हों। और कई कारण थे जिनके डर से गुर्का सिपाही से कुछ घबराता-सा था। वह बड़े बाअदब तरीक़े से एक से मिलकर अपना रास्ता लेता। गुर्का एक बार जो 'गाजर' के पास से पीछे

हटा तो फिर कभी उसने इस मुलायम हड्डियों वाले बच्चे को नहीं छेड़ा।

"ओह – हो – हो! तो कर दिया उन्होंने भौंकना शुरू!... कर दिया माँगना शुरू कमबख्तों ने ... चीख़ रहे हैं! ... चीख़ने दो मरों को !" बूढ़ी किताएव्वा उठ बैठती और बहुत से अनकहे विशेषण याद करती और तरह–तरह से उन्हें दोहरा–दोहरा कर इस्तेमाल करती।

गुर्का अपनी शक्ल गंभीर बना लेता और दूसरे कमरे में चला जाता। गुब्बारे की भाँति अपने को फुलाता और समोवार को घसीट कर हाल में ले आता जहाँ वह उसे यों ही खड़खड़ाने लगता। वैसे आमतौर पर इस ख़ुशबाश लड़के को शोरगुल करने में बड़ा मजा आता था और जितना जबरदस्त शोर होता उतना ही ख़ुश वह होता था।

बूढ़ी किताएव्वा बड़ी सावधानी से बच्चों के नीचे से गीले पोतड़े निकालती।

"हाँ, हाँ चिंघाड़े जाओ, शैतानो! लो जम्हाइयाँ, मेढकों!"

घर पर बूढ़ी किताएव्वा किसी पवित्र पादरी या शहीद का नाम नहीं लेती थी क्योंकि वह सोचती थी कि वह स्वयं भी तो एक शहीद ही है।

बच्चे रोते–पीटते, गुर्का गरजता और कूदता और बूढ़ी किताएव्वा उन पर कोसनों की बारिश करती। बच्चों के कोलाहल से पड़ोसी उठ बैठते और यह निश्चित निष्कर्ष निकालते कि अब सवेरे के छः बज गये हैं।

यह शोर–गुल, हँगामा और चीख़–पुकार निरन्तर दो घण्टे चलती रहती और जब बुढ़िया उनके पोतड़े बदल देती, उन्हें नहला देती और खिला–पिला देती तब कहीं जाकर वह शान्त होते। तब वह चाय पीने बैठती। गुर्का अब तक अपनी चाय पी चुका होता था। वह अपनी झोली निकालता उसे झट टोपी की शक्ल देता, सिर पर ओढ़ लेता और भीख माँगने दौड़ जाता।

चाय के बाद बुढ़िया बच्चों को खींच कर बाहर आँगन में ले आती जहाँ उन्हें वह बुढ़िया, सूखी रेत के सन्दूकों पर बिठा देती। बच्चे कोई तीन घण्टे लगातार धूप में सिंकते और दोपहर के खाने तक वहीं बैठे रहते। इसी दौरान बूढ़ी किताएव्वा पोतड़े धोती, सीना–पिरोना करती, रफ़ू करती, चीख़ती–चिल्लाती, बच्चों को खाना खिलाती और जैसे कि वह कहती थी, "हजार काम करती जिससे उसका बदन चूर–चूर हो जाता।"

कभी–कभी दो–तीन सहेलियाँ आ निकलतीं। और वे सहेलियाँ थीं विविध कद की स्त्रियाँ जो दो पेशे अपनाये हुए थीं एक तो आपको जेल भिजवाने का प्रबन्ध कर सकती थी और दूसरे के सम्पर्क से आप आज नहीं तो कल अस्पताल पहुँच जाते।

इन सहेलियों के साथ दो या तीन बोतलें ज़रूर होती थीं। कुछ ही देर में बाहर गलियों की हवा और पड़ोसियों के कानों पर किसी कटु–गीत का जैसे "विश्वासघाती और बदमाशों" से सम्बन्धित अथवा इसी प्रकार के किसी और गीत का आक्रमण होता। कुछ देर बाद कुछ चुनिन्दा कसमें सुनायी देतीं, फिर "मदद मदद!" की पुकार सुनायी पड़ती और अन्त में दो में से एक चीज़ होती, या तो सहेलियाँ बूढ़ी किताएवा के बाल खींच कर उसे ज़मीन पर गिरा देतीं या बूढ़ी किताएवा अपनी एक और सहेली से मिलकर दूसरों को पीटती थी। लेकिन परिणाम सदैव एक–सा ही रहता था – पहले तो एक गहरी नींद और बाद में दोस्ताना मिलाप।

ऐसे मौकों पर बच्चे अकेले ही छोड़ दिये जाते थे। वे गला फाड़–फाड़ कर चिल्लाते और बड़ी आसानी से या तो भूखों मर जाते या रोते–रोते उनकी आँतें निकल आतीं यदि कोई उस समय उनके बचाव के लिए न पहुँचता। जब युद्धोन्मत्त, लड़ती हुई सहेलियाँ लड़ते–लड़ते थक जाते तो आँगन के एक अँधियारे कोने में एक मढ़इया का दरवाज़ा खुलता और एक थल–थल शरीर वाली स्थूलकाय स्त्री अपना चेचक भरा चेहरा लिये बाहर निकलती।

वह बाहर निकलती, जम्हाई लेती और अपने हाथ से मुँह ढक लेती और फिर अपनी चमकदार, भावहीन नज़रों से आकाश की ओर देखती। रेत के एक सन्दूक के पास जाकर वह किसी बच्चे को वहाँ से हटाती और ख़ुद उस सन्दूक पर बैठ जाती। उसके बाद धीरे–धीरे वह अपनी पोशाक के कालर के बटन खोलती और बच्चे का सिर अपने सीने में घुसेड़ लेती और भूखे बच्चे के दूध पीने की मध्यम–सी आवाज़ सुनायी देने लगती।

उस स्थूलकाय स्त्री के चेहरे पर कोई ऐसा भाव न आता जिससे कि किसी भी देखने वालों को यह आभास होता कि वह जो कुछ कर रही है वह उसके दयालु स्वभाव–स्वरूप कर रही है। उसका चेहरा चेचक के दागों से बुरी तरह छिद्रित था और इसीलिए बड़ा भावहीन और मन्द था। बस यही सब वहाँ देखा जा सकता था।

एक को खिलाने के बाद वह दूसरे के पास जाती और फिर तीसरे के पास और अन्त में वह उस कमरे में चली जाती जहाँ 'गाजर' लेटा हुआ होता। पहले वह उसे अपनी गोद ले लेती और खिड़की तक ले जाती। बच्चा आँखें झपकाता और उस पर पड़ती हुई धूप से बचने के लिए मुँह फेर लेता। इसके बाद स्थूलकाय स्त्री कमरे के बाहर निकल आती और आँगन में पहुँच कर एक रेत के सन्दूक पर जा बैठती और बच्चे के मुँह में अपना दूध दे देती। वह उसका

पीला सिर और गाल थपथपाती रहती है और बच्चा बड़े आलस्य से दूध पीता रहता। जब वह दूध पी चुकता तो वह उसे सन्दूक में बिठा देती और उसके जीर्ण मुलायम नन्हें बदन को रेत से ढकने लगती। यहाँ तक कि सिर्फ़ उसका सिर दिखायी देता बाक़ी सब कुछ रेत में छिप जाता।

जाहिर है इस व्यवहार से 'गाजर' बहुत ख़ुश होता क्योंकि इससे उसकी आँखें चमकने लगतीं और उसके चेहरे की निश्चल भाव-भंगिमा अदृश्य हो जाती। उसे देख कर मोटी औरत मुस्कुराने लगती। इस मुस्कान से उसके चेहरे का सौन्दर्य तो क्या बढ़ता हाँ, उससे वह कहीं अधिक चौड़ा अवश्य लगने लगता। वह लगातार घण्टों उससे बड़-बड़ करती रहती और जब वह रोने लगता तब कहीं उसे महसूस होता कि बच्चा रेत और धूप से जल रहा है। वह उसे गोद में ले लेती और शान्तिपूर्वक झुलाने लगती। वह कुछ प्रसन्न नज़र आता क्योंकि नींद में भी उस चेहरे पर मुस्कान खेलती होती। वह उसे चूमती और कमरे में ले जाती। फिर वह आँगन में चली आती और रेत पर बैठे बच्चों को देखती – उसका चेहरा वही भावहीन और ठोस चेहरा दिखायी देता। कभी-कभी जब वे सोये नहीं होते थे तो वह उनके साथ खेलती थी, उन्हें दोबारा खाना खिलाती थी और झोंपड़ी के उस छोटे दरवाज़े में से लुप्त हो जाती थी जो आँगन में एक दूरस्थ कोने में स्थित था। वहाँ से वह अपने अधखुले दरवाज़े में से देखती रहती थी। और अगर रात हो जाती और किताएवा अब तक अपनी अचेत अवस्था में होती तब भी स्थूलकाय स्त्री वहाँ से आती और बच्चों को सुला देती थी।

कहीं ऐसा न समझिये कि मैं यहाँ किसी कृपालु अप्सरा का चित्रण कर रहा हूँ। नहीं, साहब हरगिज नहीं! वह तो बस एक औरत थी जिसके चेहरे पर चेचक के दाग थे और जिसकी छातियाँ बड़ी विशाल और भरी-पूरी थीं। और वह गूंगी थी। वह एक शराबी लुहार की पत्नी थी। एक बार उसके पति ने इस बेदर्दी और ऊँटपटांग तरीक़े से उसके सिर पर कुछ दे मारा था कि उसने क्रोध में अपनी जीभ के दो टुकड़े कर लिये थे। पहले तो वह इस घटना से दुःखी हुआ पर बाद में वह उसे मूक राक्षसी कहने लगा। और यही बस था।

बूढ़ी किताएवा के वहाँ गर्मियों में बच्चों के रहने-सहने का यही अन्दाज़ था। सर्दियों में वे कुछ और ही ढंग से रहते थे – रेत के सन्दूक आँगन में न होकर स्टोव पर रखे जाते थे। बूढ़ी किताएवा ने रेत को बच्चों के शारीरिक विकास के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण वस्तु समझा था।

नन्हे पाल के और उसके साथियों के पालन-पोषण में कोई विशेष अन्तर न था सिवाय इसके कि कभी-कभी एक बड़ी-सी काली दाढ़ी उसके रेत के

सन्दूक पर झुकती और काली, गहरी आँखें बड़ी देर तक ग़ौर से उसकी ओर देखती रहतीं।

पहले तो पाल इस प्रेत से भयभीत हो जाता था लेकिन धीरे-धीरे वह उसका आदी हो गया। यहाँ तक कि वह अपने नन्हें-नन्हें हाथ उसकी छितराने वाली दाढ़ी में भोंक देता जिससे प्रेत को गुदगुदी होने लगती। न वह अब उन मन्द, अस्पष्ट आवाज़ों से ही डरता था जो उन बड़े-बड़े चमकदार दाँतों में से आती थीं जो उसकी दाढ़ी के बीच में दिखायी देते थे कभी-कभी दो शक्तिशाली हाथ उसे रेत से अलग हटा लेते थे। और उसे हवा में झुला देते थे। नन्हा पाल अपना चेहरा ऐंठ लेता था और डर के मारे चुप हो जाता था। जब झुलाना बन्द होता तो वह बड़े ज़ोर से चीख़ मारता। और चीख़ सुनते ही वह विशालकाय काला व्यक्ति जो उसके सामने खड़ा होता ख़ुद भी चिल्ला पड़ता :

"ऐ औरत! सुनती नहीं हो क्या?"

"सुन रही हूँ भाई, सुन रही हूँ!" किताएवा गुस्से में आकर जवाब देती और कहीं से रेंगती हुई निकल आती। "श, शा, शा नहीं, नहीं मुन्ने कुछ नहीं है बेटा, यह तो अपना ही आदमी है मोती! ओह हो हो हो, रोओ नहीं। बस चुप हो जाओ, शाबाश!"

"ये इतने ज़ोर-ज़ोर से क्यों चिल्ला रहे हैं?" प्रेत की धीमी आवाज़ आँगन में गूंज जाती।

"चीख़ रहे हैं, बुड्ढे बाबा, चीख़ रहे हैं?" वे सब के सब ही चीख़ते हैं! लड़खड़ाती ज़ोर की व्यंग्यपूर्ण आवाज़ फिर सब ओर गूंज उठती।

"तुम इन्हें साफ़ नहीं रखतीं – वे सब गन्दे हैं?"

"हाँ, हाँ भई सब गन्दे हैं। बहुत गन्दे हैं!"

प्रेत की धीमी, असमंजस पूर्ण आवाज़ रुँध-सी जाती और बुढ़िया की चिल्लपों वाली आवाज़ खाँस उठती।

"क्यों ये चीज़ें बेहतर नहीं हो सकतीं?" धीमी आवाज़ वाले ने भिड़कते हुए पूछा।

"नहीं, हो क्यों नहीं सकतीं, हो सकती हैं! बहुत बेहतर हो सकती हैं, कहीं अधिक अच्छी हो सकती हैं।" चीख़ने वाली बुढ़िया ने मज़ाक़ उड़ाते हुए कहा।

"तो फिर ऐसा करती क्यों नहीं हो तुम?" धीमी आवाज़ वाले बूढ़े ने धमकाते हुए कहा।

"अरे मेरे बल्लू! मैं तो अब बूढ़ी हो चुकी हूँ, असहाय हूँ और गरीब हूँ। क्या करूँ यह गरीबी कुछ करने ही नहीं देती। बस यही बात है, और कुछ नहीं।"

चीख़ने वाली बुढ़िया ने आजिजी से कहा।

कुछ क्षण दोनों मौन रहे।

"श...श...श...सो जा मेरे लाल। सो...जा! सो...जा...ना," हवा में हल्की-सी आवाज़ गूंजी।

"अच्छा भई चल दिये, फिर आयेंगे! ज़रा सावधानी बरतती रहो!" धीमी आवाज़ वाले ने अपना कहना ख़त्म किया।

"हाँ, हाँ भई एहतियात बरतूंगी," चीख़ने वाली बुढ़िया ने बड़ी नरमी से जवाब दिया।

और उसके बाद लौटते हुए क़दमों की भारी आवाज़ सुनायी पड़ी।

## 3

**चार** साल बाद बालक पाल एरिफी गिबली की झोंपड़ी में आकर रहने लगा। वह छोटी-छोटी टांगों वाला बड़े सिर का लड़का था, जिसकी गहरी आँखें थीं जो उसके चेहरे में धंसी हुई थी। चेहरा चेचक के कारण विकृत हो गया था।

पाल बातूनी बच्चा नहीं था और इसीलिए वह सदैव किसी ऐसी चीज़ की ओर देखता रहता था जो केवल उसे दिखायी देती थी। यही कारण था कि उसके वहाँ आने से उस झोपड़ी के निवासी सिपाही की एकान्त ज़िन्दगी में कोई बाधा नहीं पड़ी। इन चार वर्षों में एरिफी गिबली के सिर के बाल और दाढ़ी कुछ रुपहली सफ़ेद रंग के हो गये थे जो भांज से लगते थे। अब वह पहले से कहीं अधिक शान्त और गम्भीर हो गया था और पुण्य ऋषियों-मुनियों के जीवन से संबन्धित पुस्तकें पढ़ने में उसकी रुचि अधिक बढ़ गयी थी।

पाल के जीवन के दिन बड़ी ख़ामोशी और समानता के साथ गुज़रते रहे। सुबह के समय पक्षियों की चहचहाहट से, सूर्योदय होते ही उसकी पहली किरणों से वार्तालाप शुरू कर देते थे, उसकी आँख खुलती थी। पाल अपनी आँखें खोलता और स्टोव के पीछे बिछे अपने बिस्तर पर से उन्हें पिजरे में कूदते-फाँदते बड़ी देर तक निर्निमेष देखता रहता। वे पक्षी एक स्थान से दूसरे स्थान पर कूदते, पानी में कूदकर छींटे उड़ाते, बीज कुतरते और अपने-अपने ढंग से चहचहाते रहते। वे गीत तो बड़ी गर्मजोशी से और सशक्ता से गाते थे पर उसमें सुरीलेपन और सुन्दरता का नितान्त अभाव था। हरी चिड़ियों का मधुर गान, सुनहरी चिड़ियों की बोझिल सी-सी और बड़ी-बड़ी चिड़ियों की हास्यास्पद, कर्कश चीखें, कोलाहल के, जो कि उस छोटे धुंओं से भरे कमरे में हो रहा था, लहराते हुए विचित्र प्रवाह में

विलीन हो जातीं थीं।

एक ख़ामोश अपंग चिड़िया भी थी। खिड़की में लटके हुए बड़े पिंजरे में वह अकेली ही थी। वह एक पट्टी पर अपने पाँव जमा देती और उस पर कलाबाजियाँ खाने लगती और निरन्तर अपना सिर हिलाती-डुलाती रहती। अचानक वह पतली-सी लम्बी सीटी बजाती। जिससे बाक़ी सारे पक्षी गड़बड़ा जाते और एक दम चुप हो जाते। वे अपना प्रतिकूल राग रोक देते और इस प्रकार इधर-उधर देखने लगते मानो उस अनोखी सीटी की ध्वनि क्यों और कहाँ से आयी है इसे समझने की कोशिश कर रहे हों । इसके बाद ही मैंना की पड़ोसिन बड़ी चिड़िया एक सबल सेनापति की भाँति अपने सीने पर लाल पर लगाये हुए सहसा आग-बबूला हो जाती और अपने आपको फुला लेती। वह चंचल हो कुलबुलाती, मैना की ओर को अपना सिर – बढ़ाती, पक्षी जाति क`स्वभाव क `बिल्कुल प्रतिकूल सर-सर और सी-सी करती, अपनी चोंच खोलती और अपनी बड़ी-सी जीभ बाहर निकाल लेती। लेकिन मैना उसकी ओर बिल्कुल ध्यान न देते हुए झूमती रहती और फलसफियाना अन्दाज़ में अपना सिर हिलाती-डुलाती रहती। उसके स्याह चेहरे में केवल उसी समय कुछ जान पड़ती जब कोई झींगर उसके पिंजरे में रेंग आता लेकिन यह हुलास भी कुछ क्षण ही रहता था। मैना के सारे बर्ताव में और खासकर उसकी सी-सी में जिसका अन्य पक्षियों पर गंभीर प्रभाव पड़ता था कुछ बहुत ही गहराई और संशयात्मकता थी। ऐसा आभास होता था मानो वे शब्द किसी चतुर वयोवृद्ध व्यक्ति के हैं जो यौवन के जोशीले और आशावादिता से भरे-पूरे भाषणों में कहे गये थे। कभी-कभी मैना पिंजरे में सहसा कूदने-फाँदने लगती और पर फड़फड़ाने लगती। वह अपनी चोंच खोलती, अपने पर नोचती और कुछ ऐसा महत्त्वपूर्ण और दृढ़ रुख इख़्तियार करती मानो अभी सीटी बजाने वाली है – लेकिन वह सीटी न बजाती। वह फिर अपने उस दार्शनिक मौन में जा बैठती मानो दर्शा रही हो कि अभी उसके काम का समय नहीं आया है, या कहीं ऐसा न हो कि उसे यह विश्वास हो गया हो कि वह कुछ ही क्यों न करे जगत-व्यवहार को नहीं बदला जा सकता।

पाल को भी अन्य पक्षियों की निस्बत मैना ही अधिक प्रिय थी क्योंकि वह शक्ल-सूरत में चाचा एरिफी से मिलती-जुलती थी। चाचा एरिफी को भी मैना पसन्द थी और सबसे पहले उसी का पिंजरा साफ़ किया जाता था और उसमें ताजे बीज और पानी रखा जाता था।

सवेरे जब तक एरिफी न आ जाता पाल सोया ही रहता था। पता नहीं क्यों, चाचा एरिफी को अपनी झोंपड़ी अच्छी नहीं लगती थी। दिन हो या रात ज्यादातर

वह बाहर ही रहते थे। चाचा एरिफी बड़े आहिस्ता से और सावधानी से किवाड़ खोलते, अपना स्याह सिर कमरे में घुसेड़ते और पूछते :

"उठ बैठे तुम?"

"हाँ, उठ बैठा!" पाल जवाब देता।

तब चाचा एरिफी चले जाते और समोवार चूल्हे पर चढ़ा देते। समोवार बहुत पुराना था जिस पर टीन के अनेकों भद्दे और असुन्दर पैबन्द लगे हुए थे। हत्थे की जगह घोड़े की नाल लगी हुई थी जो तार से बाँध दी गयी थी। समोवार चढ़ा देने के बाद एरिफी पिंजरे साफ़ करता और तब तक फर्श पर झाड़ू लगाता रहता जब तक कि समोवार की सीटी की पतली आवाज़ उसे न सुनायी पड़ती। फिर वजाहिर नम्रता जताते हुए वह अपनी मोटी और धीमी आवाज़ में पाल को चीख़कर पुकारता :

"चलो उठो और हाथ-मुँह धो लो। और भगवान का नाम लो!"

पाल उठता, हाथ-मुँह धोता और भगवान का स्मरण करता। वह ये तमाम काम बड़ी ख़ामोशी और आहिस्तगी से करता। उसके चेहरे पर गांभीर्य और स्थिरता होती जो बहुत कुछ उस बड़े लड़के के समान होती जो अपने काम की ज़रूरत और अहमियत से पूरी तरह परिचित हो। उसकी यह आकृति, उसके बिखरे बालों और गम्भीर चमकदार आँखों सहित ऐसी प्रतीत होती मानो कोई छोटी छछून्दर हो जो आने वाले दिन का काम करने का संकल्प कर चुकी हो। उसके बाद एरिफी की निगरानी में नहा-धोकर और बालों में कंघा करके वह कृत्रिमता से दबाई हुई ध्वनि में अपनी सुबह की प्रार्थना पढ़ता और उस हास्यजनक व भद्द समोवार के सामने मेज पर बैठ जाता। अब तक वह अपने वहशी आकर्षण का काफ़ी भाग कभी का खो चुकता और उसके दृढ़ महत्त्व की गन्ध कुछ हास्यास्पद बन जाती।

ख़ामोशी के साथ वे चाय पीते थे और उसी ख़ामोशी के साथ वे दिन का अधिकांश भाग व्यतीत करते थे। चाय पी चुकने के बाद एरिफी खाना बनाता। यानी सर्दियों में वह स्टोव जलाता, पतीली में पानी उबालता, उसमें तरकारी डालता और ऊपर से थोड़ा गोश्त डाल देता था। अपने नंगे हाथों से पकड़कर वह पतीली को आग पर रख देता। गर्मियों में अपनी झोंपड़ी के पीछे आँगन में बैठकर थोड़ी-सी आग जलाता और उसमें आलू सेंक लिया करता था। पकाने की क्रिया-विधि स्त्रियों से पूछने की तिरस्कारपूर्ण भावना का कहीं उसे शिकार न होना पड़े इस भय से वह सीधा-सादा खाना तैयार करता था। अपना स्वास्थ्य बिगाड़ने को वह तैयार था पर छुरी-कांटे, बेलन, मथानी और ऐसी ही दूसरी चीज़ें

जो स्त्रियाँ इस्तेमाल करती हैं वह कभी इस्तेमाल न करता था हालांकि ये सब चीज़ें उसके पास थीं ज़रूर।

पाल छोटा चारखानेदार पतलून और चमकीली लाल कमीज पहने बड़ी अकड़ व अदा के साथ एरिफी के साथ-साथ चलता रहा और हर वह चीज़ जो उसे दीख पड़ी बड़ी ग़ौर से देखता गया। चाचा एरिफी से सवाल करने की तो उसे बहुत कम नौबत आती। एरिफी के दो टूक, रूखे जवाबों को सुनकर पाल को बातचीत करने की इच्छा ही न होती। जब एरिफी झोंपड़ी में जा घुसता तो वह कुछ देर तक खड़ा हो उसे देखता रहता फिर वह बाहर गली में निकल जाता। उसे कड़ी आज्ञा थी कि कहीं दूर न जाय।

झोंपड़ी कस्बे के एक छोर पर स्थित थी। उसकी खिड़कियों में से मैदान दिखायी देता था। जिसमें से फौलाद-सी सफ़ेद नदी बहती थी। उससे कुछ दूर एक और मैदान था जो गर्मियों में तो हरा-भरा और आकर्षण होता था पर सर्दियों में रूखा और अकेला पड़ा रहता था। उससे भी दूर जायें तो जंगल की विशाल दीवारें क्षितिज को सँभाले हुए दीख पड़ती थीं। दिन के समय वह अचल, अँधियारा और सुनसान रहता था। लेकिन शाम को जब उसके पीछे सूर्य अस्त होता था तो वह बैंजनी और सुनहरी किरणों से सजा हुआ होता था।

पाल चलता-चलता नदी पर पहुँच जाता, बेद वृक्षों से घिरे हुए वायुमण्डल में वह चट्टान पर जा बैठता और पानी में तिनके फेंकता ताकि उन्हें बहते हुए देख सके। सूर्य की किरणें पानी पर अठखेलियाँ कर रही थीं और वायु ने अपनी नृत्य करती हुई कल-कल ध्वनि से उसे ढँक लिया था। लहरों की तट के तारों को छू-छूकर छेड़ी हुई लोरियाँ सुन-सुनकर वह अक्सर सो जाया करता था।

यदि एरिफी उस समय घर पर ही होता तो वह आकर उसे ले जाता था। वे साथ-साथ दोपहर का खाना खाते थे और पाल फिर शाम तक के लिए नदी की ओर चला जाता था। वह वहाँ अकेला ही खेलता रहता था या फिर तुलका से खेलता था। तुलका एक ऐंची आँख वाली, भिखमंगी और चोर लड़की थी जो आठ साल की थी। वह गन्दी भी थी और शोर भी ख़ूब मचाती थी। एरिफी उसे बिल्कुल पसन्द न करता था। जब कभी वह झोंपड़ी पर आ जाती तो वह उसे वहाँ से निकाल बाहर करता था।

शाम होते समय पाल बैठा सूर्य को अस्त होते हुए जीवित व सुन्दर वन को अंधकार से परास्त होते हुए देखा करता और ख़ुद भी संध्या के बढ़ते हुए अन्धकार में घिर जाता था। उसके बाद वह घर लौटता और जाकर सो रहता। अगर एरिफी घर में हुआ तो वह पहले प्रार्थना आदि कर लेता और अगर वह बाहर हुआ तो

न प्रार्थना होती न कपड़े उतारे जाते बस जाते ही बिस्तर में जा लेटता।

और इस प्रकार दिन पर दिन बीतते गये। एक-एक दिन बोझिल, ख़ामोश और मन्द होता। और जैसा कि सर्वदा होता आया है वे एक जंजीर बना लेते जिनमें रोज कड़ियाँ बढ़ती जातीं, हफ़्ते, महीने और साल बनते जाते और...पाल बड़ा होता गया और उसकी ज़िन्दगी पेचीदा होती गयी। वह विस्मय में डूबा सोचने लगा यह नदी बहती हुई कहाँ जाती है; इस जंगल के पीछे क्या चीज़ छिपी हुई है; ये बड़े-बड़े बादल आख़िर क्यों आकाश में तैरते रहते हैं; यह पत्थर जब ऊपर फेंका जाता है तो अपने आप ही नीचे ज़मीन पर क्यों आ गिरता है। उसे आश्चर्य होने लगता कि गांव में जहाँ छतें इतनी गुंजान हैं क्या होता रहता है और उस गांव के परे कौन क्या करता रहता है। संसार में जहाँ दिन भर इतना कोलाहल मचा रहता है और रात में इस कदर शान्ति व निस्तब्धता छाई रहती है आख़िर क्या हो रहा है। लेकिन ये प्रश्न उसने एरिफी से कभी न पूछे। शायद उसने सोचा हो कि जो शख़्स इतना मौन व ख़ामोश रहता है इन तमाम बातों के बारे में क्या जानता होगा। एरिफी की ख़ामोशी और उसका उदासीन चेहरा लड़के को प्रायः उलझन में डाल देता था।

जब मिखाइलो उससे मिलने कभी-कभी आता तो पाल किसी कोने में बैठकर उससे जी-भर के बातें करता। मिखाइलो भी ख़ूब बातें किया करता था और हमेशा एरिफी से आते ही सवाल करता :

"कहो दरवेश? ज़िन्दा हो अब तक? शादी-ब्याह का कोई इरादा नहीं?" और फिर जब वह देखता कि एरिफी उस ओर से बिल्कुल उदासीन बैठा है तो सहसा ज़ोर का एक ठहाका मारता।

लेकिन इस उदासीनता से मिखाइलो तनिक भी निरुत्साह न होता। वह अपना क्लीन शेव चेहरा रूमाल से पोंछता और बड़े आराम से एक बेंच पर बैठकर "फिर वही पुराना राग अलापने लगता" जिसे उसका उदासीन मित्र (एरिफी) नापसन्द करता था और क्रोधित हो उठता था।

"आज तो भाई साहब, मैंने भी डट के खाना खाया है। मारिया ने जर्मन गेहूँ का काशा पकाया था। ओह, क्या लजीज काशा था वह!...और वह भी दूध और किशमिश के साथ। ऐंह? बड़ा मजेदार था वह! जब मारिया पकाने पर आती है तब क्या कहना, मजा आ जाता है। और दूसरे काम भी जब करती है तो वाह उसी ख़ूबी से। सीना-पिरोना और वैसी ही दूसरी चीज़ें, मैं कहता हूँ हर एक काम वह ज़ोरदार तरीक़े से करती है! आह, कितनी अच्छी बीवी है मेरी आह, हा! तुम भी ऐसी ही कोई औरत ले आओ एरिफी, समझे? ऐसी ही औरत ऐं?"

"कुत्ते की तरह भौंकती भी तो है वह!" एरिफी, या तो समोवार के पास खड़खड़ करता या पहले से ही मेज पर बैठा अपनी मूँछें चाय की प्याली में डुबोते हुए सख्ती से उसे फटकार बताता।

मिखाइलो विस्मय से अपनी भंवे ऊपर को करता।

"क्या कहा तुमने भौंकती है वह? तो फिर क्या हुआ? माना वह भौंकती भी है तो फिर? और यह सच भी है! तुम तो जानते हो कि कोई भी मियाँ–बीबी इससे बचे नहीं रहते। इसके बिना तो काम ही नहीं चलता। हरेक कोई अपने आपको ऊँचा समझता है, कोई भी झुकना नहीं चाहता। मेरी ही मिसाल ले लो। क्या मैं उससे हार मानूंगा? तेरी जानकी कसम ऐसा नहीं रूकंगा। मसलन मैंने ज़ोर से पुकारा, 'मारिया' और अगर उसने मेरी न सुनी तो...दिया मैंने एक झापड़ उसके मुँह पर, और ऐसा ही हरेक के साथ होता है।"

"और वह भी तो तेरे को देती है फिर" एरिफी गिबली ने रूखेपन से जवाब दिया।

"दो अच्छा, हाँ देती हूँ!...दो दे भी दिये तो क्या हुआ? क्या वह मेरी बीवी नहीं है? उसे भी मेरे दो झापड़ लगाने का हक है लेकिन मैं तो उससे हार नहीं मानता। मैं फिर उसे ऐसी करीं मार लगाता हूँ कि..."

"और वह फिर तेरी बेलन से खबर लेती है जैसा कि उस बार किया था. .." एरिफी ने उसकी बात न मानते हुए कहा।

"बे – ल – न – से!...तेरी ऐसी की तैसी! तेरा मतलब है वह मुझे रोज बेलन से ठोंकती है? ठीक है एक बार ऐसा हो गया था, बस। बेलन! बस उसे ही ले बैठा।"

कुछ क्षण ख़ामोशी रही। मित्रों ने चाय पी और एक दूसरे की ओर देखा।

"और हाँ, तुम्हारी चिड़ियों का क्या हुआ? ज़िन्दा हैं सब?"

"देख लो ख़ुद ही।"

"अच्छा, ठीक है। चिड़ियें – आ हा क्या कहने हैं! मैं भी सोच रहा हूँ कुछ चिड़ियें खरीदने का।"

"तुम्हारी घरवाली उन्हें भून खायेगी," एरिफी ने व्यंग्य किया।

"कभी नहीं! उसे तो ख़ुद चिड़ियें पसन्द हैं। अभी कुछ दिन हुए उसने एक कलहँस खरीदा है। और वह भी कैसे!" यकायक मिखाइलो की बाँछें खिल गयीं। "क्या बात पैदा की है उसने! बड़ी चालाक है वह! ज्यों ही किसी शराबी किसान पर उसकी नज़र पड़ी कि लगी फटकारने उसे। 'तुम–तुम शराब पिये हो', वह कहती है, 'और मैं, जानते हो, पुलिस के सिपाही की बीवी हूँ अगर तुमने ठीक

से बात ठीक नहीं की तो मैंने बुलाया अपने आदमी को। अभी पकड़ के ले जायेगा कोतवाली तुम्हें। चाहते हो कोतवाली जाना?'

बेचारे किसान ने सोचा कहीं शराब पिये हुए पकड़ा न जाऊँ और इसी डरके मारे उसने अपना बेहतरीन कलहंस तीस कोपेक में दे दिया। और क्या कलहंस है आय हाय – मोटा, चतुर, बड़ा रोबदार चेहरे वाला – बिल्कुल अपने सार्जण्ट जैसा! हाँ भैया, मेरी बीवी तो हीरा है हीरा। और अगर तुम्हें भी वैसी ही कोई मिल गयी तो तर जाओगे कहता हूँ। तुम्हें अपनी मुट्ठी में कर लेगी और वह भी कैसे? मुँह नहीं खोलने देगी तुझे दोस्त हाँ!"

"तो उससे क्या फायदा होगा?" एरिफी ने मालूम किया।

"उससे क्या फायदा होगा? औरत से! अरे जब घर में औरत आ जाती है तो घर की काया ही पलट हो जाती है। एक तो यह कि बच्चे होने शुरू हो जाते हैं; मकान साफ़ हो जाता है और फिर डांटने फटकारने और मनाने के लिए भी एक इन्सान आ ही जाता है..."

बस अब मिखाइलो लगा स्त्रियों के अनुपम गुणों की सूची बखानने। नारी जाति के प्रति उसका एक अत्यन्त स्वस्थ और प्रशंसनीय दृष्टिकोण था जिसके कारण स्त्रियों की न्यूनताएँ भी उचित जान पड़ती थीं। स्त्रियाँ ही उसके लिए लालसा की वस्तु थीं और उसकी दूसरी लालसा थी खाना। उन दोनों उत्कण्ठाओं की परस्पर ख़ूब स्पर्धा होती रहती थी। स्त्रियाँ उसकी ज़िन्दगी का आदि थी और वे ही उसका अन्त; वे ही ऐसा सीमेंट थी जो जीवन के विविध रूपों को एक ठोस, सम्पूर्ण आकार में गूंथती है। वे ही उसके लिए एक ऐसी शक्ति थी जो प्रत्येक वस्तु को ध्वनि, रंग और सार प्रदान करती थीं। स्त्रियों के बारे में वह बुलन्द आवाज़ में तीन घण्टे तक एक साथ बातचीत कर सकता था। उसके कवित्वपूर्ण मुहावरे एरिफी को परेशान कर देते थे और वह उदास चेहरा लिये नीचे को घुसता जाता मानो अपने मित्र की बातचीत से दूर भागने के लिए मेज के नीचे सरकने की कोशिश कर रहा हो। आख़िरकार जब उसकी सहिष्णुता ख़त्म हो जाती तो वह उठ खड़ा होता और गुर्रा पड़ता :

"मैं ऐसा ही अच्छा! समझे, बस बहुत हो गया। तुम्हारा बस चले तो तुम तो आदमी की जान निकाल लो!"

इस घुड़की से वक्ता एकदम रुक गया लेकिन ऐसा भी नहीं सिटपिटाया कि बिल्कुल चुप हो जाय। अजी नहीं! उसने ज़रा इधर-उधर नज़र डाली और फिर अपना वही राग अलापने लगा।

"अपने स्टोव पर पुताई करवा लेनी चाहिए! देखो तो भला अपने स्टोव को!

छिः! छि! लानत है तुम पर! अब अगर तुम्हारे पास औरत होती ना..."

लेकिन एरिफी ज़रा खाँस देता और अपनी टांग या बाजू उठाकर एक दूसरे पर रखकर अपना क्रोध प्रगट करता।

"नाराज़ न होओ, भैया! ज़रा ठहरो; आ जाओगे रास्ते पर अपने आप ही। तुम जैसे व्यक्ति की इस तरह बरबादी हो यह हरगिज मुमकिन नहीं..."

"माइक! बन्द करो यह सब!" एरिफी ने मुट्ठी मेज पर ठोंकी।

"अच्छा अच्छा। नहीं कहेंगे कुछ। पर तुझे भी शैतान का हवाला!"

कई क्षण तक स्तब्धता छाई रही।

"मैं घर जा रहा हूँ। थोड़ी ही देर में काम कर चला जाऊँगा। मारिया राह देख रही होगी। आय – आय क्या खाना खाया है आज हमने! सूअर के गोश्त का कीमा, बकव्हीट का काशा और फैटबैक। तमाम चीज़ें यखनी में पकाई गयी थीं। मुँह से पकड़ो और फिसल जाय ओह! और तुम यहाँ न जाने क्या कचरा खाते हो! यह भी कोई खाना है? लेकिन अगर तुम्हारे पास... चलो छोड़ो, नहीं कहता। मैं चुप ही रहूँगा – मैं तो अब जा ही रहा हूँ, चल दिया बस। अच्छा फिर मिलेंगे। मैं चलता हूँ। आओ कभी हमारे यहाँ। पाल कहाँ है? पाल, ए शैतान कहीं के, कहाँ है रे तू? यहाँ नहीं है शायद। क्या ख़याल है उसका? ठीक है? गली में रहना होगा वह तो ऐ? अरे रे, क्या ज़िन्दगी है उस गरीब की भी! लेकिन अगर तुम्हारी बीवी होती तो...

अन्त में एरिफी की बड़बड़ाहट सुनकर वह वहाँ से चला जाता। मिखाइलो के चले जाने के घण्टों बाद तक एरिफी कुछ परेशान रहता। उसके सारे शरीर में वायु के दुःखप्रद झोंके झरझरी पैदा करते रहते।

मिखाइलो की बातें हमेशा एक ही जैसी होती थीं। पाल उसके वाक्य के शुरू के शब्द सुनकर ही अन्तिम शब्दों का अनुमान लगाना सीख गया था। उसे न तो मिखाइलो का मुँड़ा हुआ चिकना चेहरा पसन्द था न ही उसकी उदास आँखें अच्छी लगती थीं जो दो बटनों-सी लगती थीं, न उसकी आत्म-सन्तुष्ट धीमी आवाज़ उसे भाती थी और न ही कभी उसे उसकी पूरी भद्दी आकृति अच्छी लगी जिसकी छोटी-छोटी टांगें और बाहें थी और वर्गाकर बालों से भरा सिर था। मिखाइलो और एरिफी के अपने प्रति दृष्टिकोण को देखकर पाल को उनकी विषयासक्तता से घृणा हो गयी और वह उनसे दूर रहने लगा। अपने इस विचार के कारण उसे "छोटा कपटी" की संज्ञा मिल गयी। पाल ने महसूस किया कि चाचा एरिफी बावजूद उनकी काली दाढ़ी, सबल आकृति और कठोर व भयंकर मौन के मिखाइलो की सुन्दरता से कुछ कम नहीं है।

उन दो मित्रों के वार्तालाप से तो पाल कभी कोई निष्कर्ष न निकाल सका लेकिन यहाँ सदैव एरिफी की ही हिमायत करता था। वाचाल मिखाइलो का उसने कभी विश्वास न किया। रफ्ता-रफ्ता पाल ने स्त्रियों के प्रति वही दृष्टिकोण अपनाया जो एरिफी ने अपना रखा था। उसने तो उसका तुलका पर इजहार भी किया। पहले तो वह अचम्भे में पड़ गयी पर बाद में उसे क्रोध आ गया। और आख़िरकार पाल जब घर लौटा तो उसके चेहरे पर खराशें पड़ी हुई थीं और उसके हृदय में स्त्रियों के प्रति एक गुप्त समादार का भाव निहित था।

एरिफी ने बड़ी गहरी आवाज़ में उससे आहिस्ता से पूछा :

"यह क्या हुआ?"

"एक तख्ते पर गिर पड़ा," पाल ने शर्माते हुए जवाब दिया।

"ओह..." एरिफी ने अनिश्चित स्वर में कहा और उसे धोने के लिऐ कहा।

दिन गुज़रते गये और पाल बड़ा होता गया।

अब वह नौ साल का हो गया था पर छोटा, चेचकदार मुँह वाला, फूहड़ और शान्त स्वभावी। उसकी आँखों में बालपन था जिनमें रुखाई और बुद्धिमता झलकती थी। एरिफी और वह एक-दूसरे के स्वभाव को बख़ूबी समझते थे। अपनी ख़ामोशी में भी वे एक दूसरे से स्पष्ट बातचीत कर लेते थे। अब एरिफी ने पाल को पढ़ना-लिखना भी सीखा दिया था। कोशिश तो यह भी की गयी थी कि लड़का स्थानीय मदरसे में पढ़े लेकिन वह सफल न हो सकी। दस दिन में ही पाल स्कूल के वातावरण और वहाँ के लड़कों के उसके प्रति व्यवहार से तंग आ गया। ग्यारहवें दिन जब एरिफी ने उसे जगा कर कहा, "उठो स्कूल का वक़्त हो गया।" तो उसने तकिये में से सिर निकाला और आँखों को जिनमें रात भर जागने से जलन पैदा हो गयी थी, एरिफी के चेहरे पर गड़ाते हुए अपने जन्म के बाद पहला भाषण दिया :

"अब मैं वहाँ कभी नहीं जाऊँगा! चाहे आप मुझे डुबो दें। वहाँ मुझे लड़के कुत्ते से भी बदतर समझते हैं। मुझे हरामी, निबावला, कोचरा, शैतान कहकर चिढ़ाते हैं। चाहे आप कुछ ही क्यों न करें मैं वहाँ नहीं जाऊँगा। मैं तो घर पर ही रहूँगा। मुझे वे ज़रा अच्छे नहीं लगते। उनमें कोई भी मुझे नहीं भाता। मैं तो उनसे हमेशा लड़ता ही रहूँगा। अभी परसो ही मैंने गुरुजी के लड़के की नाक तोड़ दी। गुरुजी ने मुझे एक घण्टे तक बत्तख बनाये रखा। मैं उसे फिर ठोकूँगा, जो भी मेरे हत्थे पड़ा हरेक को पीटूँगा। आप मारिये मुझे, सजा दीजिये! जब वे मुझे मारते हैं तो किसी को पता नहीं चलता। कोई बत्तख नहीं बनाया जाता क्योंकि मैं चुप हो जाता हूँ। अब मैं वहाँ किसी कीमत पर भी नहीं जा सकता, चाहे कुछ ही

क्यों न हो जाय।"

एरिफी ने उसके बचकाने चेचक भरे मुँह की ओर देखा जो असन्तोष और जहर के कारण और भी विकृत हो गया था। वह चुप रहा। लेकिन जब पाल ने अपना भाषण पूरा करके उसी जिद और चुनौती के जज्बे के साथ फिर अपना सिर तकिये में रख दिया तो एरिफी भड़क उठा और उसने इस तरह गरज कर उसे डांटा कि खिड़की के शीशे में कम्पन हो उठा! "अच्छा तो मत जाओ!" और मदरसे की ओर इस भावना से निहारा कि पाल धूजने लगा और, कम्बल के अन्दर दुबक गया।

स्कूल के बारे में फिर भी कुछ नहीं हुआ। घर पर ही सख्त मेहनत के साथ पढ़ाई होती रही। पाल को पढ़ने-लिखने का शौक न था और जब वह किताबें लेकर बैठता तो ऐसा महसूस करता मानो किसी दुर्लभ और दुःखप्रद काम को ले बैठा हो। हालांकि एरिफी के उद्देश्य बड़े ऊँचे और लाभप्रद थे फिर भी वह उन मुर्दा अक्षरों व शब्दों में ज़िन्दगी फूँकने में असफल रहा।

पाल हर रोज़ सवेरे की चाय के बाद मुँह चढ़ाये हुए अल्मारी से किताबें निकालता। बाँहें घुटनों में दबाए, हाथ ठोड़ी पर रखे वह मेज पर बैठता और अस्पष्टता व कर्कश स्वर में कुछ बड़बड़ाने लगता और दायें-बायें तथा आगे-पीछे हिलता-जुलता रहता।

उसकी इस व्यस्तता का सिर्फ़ एक ही नतीजा निकलता और वह यह कि पिंजरे की चिड़ियाँ चुप हो जातीं। वे आपस में परेशानी भरी और उत्सुक दृष्टि से एक-दूसरी की ओर देखतीं। और फिर बड़ी चिड़िया के इशारा करते ही वे सबकी सब अलग-अलग स्वरों में चें-चें, चह-चह शुरू कर देतीं मानो वे यह सब इस अधम ध्येय से प्रेरित हो कर रही हों कि लड़के का विद्याभ्यास की ओर से ध्यान हटाया जाय। और अपने इस उद्देश्य में वे तुरन्त सफल होती थीं।

पाल किताब से अपनी नज़रें हटा कर पहले तो आहिस्ता-आहिस्ता बड़ी चिड़िया जो कि स्वयं एक अच्छी गायिका थी, की ओर देखकर सीटी बजाता। कुछ ही देर में वह अपनी अप्रिय सीटी से चिड़िया को तंग करने लगता। फिर एक छुरी पर दूसरी छुरी घिस कर वह अन्य चिड़ियों को भी विचलित कर देता। आख़िरकार जब इन हरकतों की वजह से घर में अच्छा-खासा झगड़ा खड़ा हो जाता तो बेंच पर खड़ा होकर मैंना से छेड़-छाड़ शुरू कर देता।

यह कुछ इस प्रकार किया जाता था : वह एक तीली या छोटी लकड़ी पिंजरे में दाख़िल कर देता और मैना की चोंच पर मारता और इससे जाहिर है कि चिड़िया नाराज़ होती थी। मैना एक टांग से ही अपने पर मारती हुई सारे पिंजरे

में चक्कर लगाती और अपनी चोंच से उस खपच्ची को पकड़ने की कोशिश करती। कभी-कभी वह खपच उसकी चोंच में आ भी जाती तो दूसरे ही क्षण निकल जाती और वह फिर मौन धारण कर लेती मानो उस खपच में उसकी कतई कोई दिलचस्पी है ही नहीं। जब वह खपच पकड़ने में नाकाम रहती तो ऐसे ज़ोर-ज़ोर से चीत्कार करती कि कान के पर्दे फट जाते।

इन सबसे सन्तुष्ट हो, पाल अपनी किताबों की ओर आता लेकिन उन्हें पढ़ने की गरज से नहीं, बस यों ही। वह अपने ठीक सामने की और इस टिकटिकी के साथ घूरता गोया दीवार के उस पोर कुछ उसे दिखायी पड़ रहा हो। जितना अधिक वह इसे देखने में लगता उतनी ही अधिक ख़ामोश, गहरी और चिन्तनशील उसकी नज़रें बन जातीं। वह किस चीज़ पर सोच रहा है यह शायद वह खुद भी न जानता हो। कुछ ऐसे भी विचार हैं जो रूप या आकार से रहित होते हैं और हमें यह विश्वास करने पर विवश करते हैं कि हम उन्हें महत्त्वहीन करार देकर उनसे बच सकते हैं। लेकिन यह चीज़ ऐसी है ही नहीं क्योंकि इस प्रकार की समझ अपने साथ कायरता व प्रारम्भिक मूर्खता के तत्त्व लिये होती है।

चिड़ियों की निरन्तर चख-चख के दरम्यान पाल दो घण्टे लगातार बैठा रहता। तब एरिफी कमरे में आता और सबक के बारे में पूछता पाल बड़े आराम के साथ चुपचाप बेंच पर बैठ जाता। दृढ़ता से अपनी उँगली किताब की किसी पंक्ति पर रखते हुए वह निम्नलिखित बुद्धिमत्ता का इजहार करता :

"तुम आरों से भी सीते हो –"

"ठहरो ज़रा!" एरिफी रोक देता। "यह नहीं हो सकता वहाँ" और किताब आकर वह खुद पढ़ने लगता, उसके होंठ बिला आवाज़ के हिलते दिखायी देते, "यह कहाँ लिखा है? चलो पढ़ो इसे फिर से।"

"तुम आरी से सीते हो, और तुम सुई से भी सीते हो।"

"हाँ, चलो। क्या लिखा है आरी? है न? आरी से हम क्या करते हैं?"

"आरी से?" पाल उस की ओर देखता और कल्पना करने का प्रयत्न करता। "आप आरी से लकड़ी काटते हैं।"

"यह बात है! और तुम क्या पढ़ रहे थे 'सीना'। यह हरफ 'अ' है 'ई' नहीं, समझे?"

"लेकिन किताब में तो लकड़ी के बारे में कुछ भी नहीं लिखा।"

एरिफी ने तनिक सोचा कि पढ़ाई में यह जो लकड़ी बीच में आ खड़ी हुई है उसे कैसे हटायें। पाल टेका लेकर बैठ गया और बोला :

"मैं यह सब जानता हूँ। हम सुई से सीते हैं, कुल्हाड़ी से हम लकड़ी फाड़ते

हैं, कलम से हम लिखते हैं, लेकिन यह बकवास मैं नहीं पढ़ सकता। अक्षर बहुत ही छोटे-छोटे हैं और सब अलग-अलग क़िस्म के हैं।"

एरिफी ख़ामोश हो सोच-विचार करता रहा। किताब उठा कर उसने फिर से वे सरल वाक्य पढ़े और उसकी राय ढुलमुल होने लगी बच्चे के मस्तिष्क के विकास में उनका क्या महत्त्व है और वे उसमें सहायक भी सिद्ध होंगे या नहीं इस पर उसे सन्देह होने लगा फिर आगे बढ़ते हुए वह लेखक की चतुराई पर चकित हो गया। एरिफी को विश्वास हो आया कि लेखक को पाल के विचार से ज़रूर कष्ट हुआ होगा – कि तुम आरी से सीते हो और सुई से काटते हो।

इस प्रकार पढ़ाई का घण्टा समाप्त हो जाता। एरिफी उसे घर करने के लिए काम देता ताकि पहले के पढ़े हुए सबक दुहरा लिए जाएँ और "इस पंक्ति से लेकर उस पंक्ति तक" भी याद कर लेना। तब दोनों पसीने में शराबोर खाना खाने बैठ जाते। खाने के बाद एरिफी कुछ नींद लेने के लिए लेट जाता। वह पाल को आज्ञा देता कि जब भी कुछ हो जाय मुझे उठा देना।

पाल कपड़े पहनता और बाहर सड़क पर निकल जाता। सड़क से तो उसकी हमेशा से अदावत चली आ रही थी उसके हम-उम्र लड़के उसके उदासीन स्वभाव से कभी आकृष्ट न होते थे। वह स्वयं भी हालांकि उसे उनकी हँसी-दिल्लगी और खेलों से गुप्त रूप से ईर्ष्या होती थी पर उनसे समझौता करने के लिए कभी तैयार न हुआ था। दोस्ती कायम करने के लिए कई कोशिशें की गयीं लेकिन सभी किसी न किसी वजह से या तो शानदार लड़ाइयों के कारण या आपसी तनातनी के कारण नाकाम नहीं। पाल आसानी से उनके खेलों में शरीक न हो सका वह हर चीज़ को सोच-समझ कर और बड़े लड़कों की भाँति किया करता था। इसका दूसरे बालकों पर बड़ा दुःखप्रद और रूखा असर पड़ा। पाल को ऐसा लगता था कि वे उससे जान-बूझकर अलग रहते हैं।

एक बार बाल-वृन्द कुकुरमुत्ता देखने जंगल गया। जंगल की पुरअमन और उदासीन आवाज़ें पाल को बड़ी भाती थीं। उन्हें सुनकर वह नरमी और गर्मजोशी महसूस करता था। उसके साथियों को पता भी न चला और वह उनसे अलग हो गया। वृक्षों के झुण्ड में घूमते हुए उसका सिर इस कदर झुका हुआ था मानो किसी चीज़ की तलाश कर रहा हो और उसी तरह घूमते-घूमते वह एक गीत गुनगुनाने लगा। कीचड़ से लथ-पथ पत्तों की गर्म वे मधुर सुगन्ध पैर के नीचे चरचर करती हुई घास की आवाज़ और छोटे-छोटे कीड़ों-मकोड़ों की आवाज़ें और भाग दौड़ में उसे बड़ा आनन्द आ रहा था। ...दूर कहीं से कुछ आवाज़ें सुनायी पड़ीं :

"अरे वह लौंडा कहाँ रह गया?" किसी ने चीख़ कर पूछा।

"किसे गरज है कहाँ गया? कोई गुम तो जायगा नहीं। ऐसे नसीब कहाँ उनके!"

"वह तो हमेशा ऐसा फूला रहा है जैसे उल्लू, और जैसे एरिफी..."

"अरे कहीं वह पुलिस वाला छोकरे का असल बाप ही न हो!"

"लड़के ज़ोर से खी-खी करके हँस पड़े।

पाल पर पाला पड़ गया। अपमान के विष का घूंट पीकर वह सावधानी से जंगल में से निकल आया। शीघ्र ही अपमान के भाव ने प्रकोप का रूप धारण कर लिया। अब वह उनसे बदला लेना चाहता था और उसे सर्वथा न्यायोचित समझता था।

जब वह जंगल के किनारे पर पहुँचा तो बड़े उत्तेजित और प्रफुल्लित स्वर में ज़ोर से पुकारा :

"ऐ बे, लौंडो, वापस आ जाओ रे! आओ देखो मैंने क्या पाया!"

जब उसकी पुकार पर दो बच्चे दौड़े आए तो वह उन पर टूट पड़ा और उसने उन्हें ख़ूब पीटा। वापसी में सारे रास्ते बच्चे पाल से अलग-अलग चलते रहे, उस पर हँसते रहे और उसे गालियाँ देते रहे लेकिन उसके पास आने का किसी को साहस न हुआ। वह बलशाली था। उससे खुल कर लड़ना ख़तरे से ख़ाली न था। और यह बात उन्होंने अपने दो-तीन बार के तजुर्बे से समझी थी।

पाल घर पहुँच गया। उसके चेहरे पर उदासी छाई थी। एरिफी घर में नहीं था। शाम हुई, घर में अन्धकार व स्तब्धता का दौरदौरा शुरू हो गया। केवल चाफिंच और ग्रीनफिंच[3] ने जो अभी-अभी लाई गयी थीं और ठीक से कह नहीं पाई थीं ख़ामोशी दूर की। पाल का ध्यान उनकी ओर आकृष्ट हुआ। जब वे बड़ी देर तक पिंजरे में तार की सलाखों से कूद-फाँद करते और एक दूसरे से चोंचें लड़ाते रहे तो पाल उन्हें शौक से निहारता रहा। सहसा वह फुर्ती से एक कुर्सी पर जा कूदा, खूंटी से पिंजरा उतारा और दरवाज़ा खोलकर पिंजरे को खुली हुई खिड़की में से फेंक दिया। चिड़ियें उड़ गयीं। पाल ने उनकी आवाज़ पर तनिक भी ध्यान न दिया। विचलित हो वह फिर मेज पर आ कर बैठ गया, हाथ पर सिर रखे वह सोच में डूब गया। ...

जब एरिफी अन्दर आया तो पाल ने उसका इन शब्दों से स्वागत किया :

"मैंने चिड़ियों को उड़ा दिया।" उसके स्वर में धृष्टता थी और नेत्रों में चुनौती।

एरिफी ने पहले दीवारों पर और फिर पाल की ओर देख कर धीरे से पूछा :

"क्यों?"

"यों ही ज़रा!" पाल ने उसी धृष्टता के साथ जवाब दिया।

"अच्छा...तुम्हारी मर्जी।"

"तो आप मुझे डांटते क्यों नहीं?" पाल ने पूछा।

एरिफी की भंवें और मूँछें चढ़ गयीं। उसने बड़ी दयालुता के साथ बच्चे के चेहरे को देखा।

"कभी पहले भी डांटा है तुम्हें मैंने?" उसके स्वर में उदासी थी। वह हथेली घुटने पर फेरने लगा।

"यही तो सारी दिक्कत है। दूसरे सब बच्चों को डांटते हैं। आपको भी शायद ऐसा ही करना चाहिए। अब तो एक ही बात है।"

एरिफी अधीर हो, उलझन में पड़ गया। और बेंच पर बैठ गया। पाल के चेहरे पर तनाव व कटुता की रेखाएँ अंकित थीं।

अब चारों ओर दमघोंट और भारी नीरवता का साम्राज्य था। यहाँ तक कि चिड़ियाँ भी अब मस्त हो होनहार की प्रतीक्षा कर रही थीं। पर होता क्या, पाल अपने घुटने सिकोड़ कर दीवार से टिककर बैठ गया।

पुराना, गन्दा घण्टा जिसका पीला छिद्रित चेहरा था हर सेकण्ड टिक-टिक करता रहा जो अनन्य की अथाह खाई में बड़े रुक-रुक कर गिरता रहा। ऐसा लगा मानो घण्टा इस जबरदस्ती के श्रम से थक कर चूर हो गया हो। घण्टे का पेण्डुलुम आलसी की भाँति आगे-पीछे इस प्रकार हिलता रहा और ऐसी फट-फट की ध्वनि निकालता रहा कि उसे सुन कर दीवार पर बैठे हुआ झींगुर बड़े हास्यास्पद ढंग से अपने मुच्छे हिलाने लगा। चमकते हुए सूर्य की लाल-लाल किरणें घनी झाड़ियों में से होती हुई झोंपड़ी की खिड़की में दाख़िल हुईं और उनके उज्जवल प्रकाश से सारा फर्श जगमगा उठा।

"हाँ तो, तुमने चिड़ियों को उड़ा दिया ऐं – तो क्या हुआ? जो चिड़िया पिंजरे में फड़-फड़ करे उसे तो उड़ा ही देना चाहिए। और अगर वह बहुत ही पालतू हो और उड़ना ही न चाहे तो दूसरी बात है। ऐसी चिड़िया, चिड़िया नहीं रहती। अच्छी चिड़िया हमेशा स्वच्छन्द रहना चाहती हैं।"

पाल ने नज़रें उठा कर एरिफी की ओर देखा।

"वह किस लिए कह रहे हैं आप?"

"यों ही...कोई खास वजह नहीं... यों ही मुझे ऐसा लगा और मैंने कह डाला," एरिफी उलझन में पड़ गया और दाढ़ी खुजाते हुए एक अपराधी की भाँति उसने उत्तर दिया। "हमेशा आदमी वही सब कुछ नहीं कहता है जो वह सोचता है। कभी-कभी हम अपने विचारों के ही चक्कर में पड़ जाते हैं और ऐसे उलझ

जाते हैं कि आयी हुई चीज़ें भी दिमाग़ से निकल जाती हैं, टुकड़े-टुकड़े हो जाती हैं।...और जब वह विचार-श्रृंखला टूट ही गयी तो फिर क्या बाक़ी रहा।"

"क्या कहा?" पाल ने फिर सवाल पूछा, उसका सिर आगे निकला हुआ था और वह ग़ौर से एरिफी की बातें सुन रहा था।

"कुछ भी नहीं। अब तो बातें करना भी मुहाल है। आओ पाल, हम सेंट अलेक्सिस का जीवन-चरित्र पढ़ें।"

"आइये!"

पाल मायूसी में डूबा बेंच पर पड़ा रहा। उसे एरिफी के शब्दों में कुछ नवीनता मालूम हुई और शब्द भी तो अनेक थे। और यह भी आश्चर्यजनक बात थी एरिफी जैसे मौन-स्वभावी के लिए।

एरिफी ने कुछ फटी-पुरानी किताबें शेल्फ से निकालीं। उनमें से एक चुनी, जिसे मेज पर रख दिया। कुछ ही क्षणों में उसकी गहरी धीमी आवाज़ घर भर में फैल गयी। ज्यों-ज्यों किताब में उसकी रुचि बढ़ती गयी उसकी आवाज़ भी गहरी होती गयी। और अन्त में वह अष्टक की तरह काँप गयी। कभी-कभी इस तरह लेट कर आँखें बन्द करके मस्तिष्क में चीज़ों की कल्पना और उन्हें चित्रित करना पाल को बड़ा अच्छा लगता था। उसने उन तमाम ऋषियों की कल्पना की कि वे सब छोटे-छोटे कद के और दुबले-पतले होंगे, उनकी बड़ी-बड़ी, सख्त और चमकती हुई आँखें होगी, शहीद लोग हृष्ट-पुष्ट किसान होंगे जो लाल कमीजें पहने हुए होंगे, उनकी बाँहें चढ़ी हुई होंगी और बूट चर्र-चूँ करते होंगे। बादशाह ईसाइयों पर जुल्म करने वाले छोटी-छोटी टांगों वाले मोटे-मोटे जमींदार होंगे जिनका अक्सर गुस्सा उनकी नाक पर रखा रहता है और वे दुर्व्यवहारी होते हैं। उसने वास्तविक चेहरों की कल्पना की, मठ का पुजारी, पड़ोसी, कसाईखाने के क्लर्क और पुलिस सार्जेण्ट गोगोलेव। पाल उनके चरित्रों की बहुत ही प्रमुख विशेषताएँ निकाल लेता और उनके रूप-रंग के अत्यन्त प्रमुख खदोरखाल तलाश करके उन्हें इतना ऊपर उठाकर सजाता रहता कि वे अन्ततः अपनी तमाम मानवीय समानताएँ खो बैठते और राक्षस बन जाते जिनकी बुलन्द आवाज़ से और राक्षसत्व से उनका सृष्टिकर्त्ता भी भयभीत हो जाये।

चित्रों के मिश्रण का आतंक पाल को भी परेशान कर देता और वह भयभीत हो आँखें खोल अपने आस-पास कमरे को देखने लगता। उसके ठीक सामने एरिफी का बूढ़ा जीर्ण सिर दिखायी पड़ता जिसके विशाल और भद्दे साये दीवार पर पड़ते होते। सारा घर उसकी मन्द ध्वनि से गूंज उठता था। उसकी गहरी सबल साँसों में शब्द बड़े स्पष्ट फूट पड़ते थे। कभी-कभी पाल उन्हें ग़ौर से सुनता

लेकिन वह यह न समझ पाता कि आख़िर ऐसे सरल शब्द शहादत के इतने भयावने चित्र कैसे प्रस्तुत कर सकते हैं। उसकी समझ में यह भी न आता था कि आख़िर क्यों उन शब्दों को सुन कर वह चित्रों को भली भाँति देख पाता था। जो वे शब्द प्रस्तुत करते थे। वह इन्हीं विचारों में लीन कहानी का सिलसिला भूल जाता था और उन्हीं विचारों में डूबा वह सो जाता था। उसके सामने एरिफी था जिसे किसी बात का भी ध्यान था, बस उनके आस-पास घूम रहा था। एरिफी किताब हमेशा आख़िर तक पढ़ता था बाद में भी बड़ी देर तक वह किताब को इस तरह घूरता मानो उसके मुख पृष्ठ के ख़ाली पन्नों को पढ़ रहा हो। इसके बाद वह श्वांस लेता, इधर-उधर नज़रें दौड़ाता, उठता, पाल के पास तक जाता, बड़ी एहतियात के साथ उसे हाथों में उठाता और स्टोव के पीछे लगे उसके छोटे-छोटे बिस्तर पर ले जाकर सुला देता। फिर उस पर क्रास का निशान बनाते हुए वह झोंपड़ी के बाहर पड़ी बेंच पर जा बैठता।

बाहर बैठे-बैठे वह बड़ी देर तक ग़ौर से नदी की कल-कल सुनता रहता, जंगल की अँधियारी दीवारें और तारों से जगमगाते हुए आकाश को निहारता रहता। कस्बे के मरणासन्न कोलाहल वह सुनता और वहाँ से गुज़रती हुई स्त्रियों को सशंक नेत्रों से देखता रहता। बग्घी हाँकने वाले अगर शोर मचाते हुए गुज़रते तो वह उन्हें देख कर बड़ी सख्ती से चिल्लाता, "चुप रहो बे शैतानो!" और यदि वे चुपचाप निकल जाते तो और भी कठोरता से चीख़ता, "चलते जाओ बे!" इस प्रकार चीख़-चिल्लाहट की कोई ज़रूरत तो न थी लेकिन एरिफी तो एक भी बग्घी वाले को बिना इसके गुज़रने ही न देता। उसे तो वे आलसी और भयंकर क़िस्म के निकम्मे लोग लगते थे। वे पूरी तरह से अपने घोड़ों की शक्ति पर ही जीवित थे जिनको एरिफी उनसे कहीं अधिक बेहतर और बुद्धिमान समझता था – क्योंकि कम से कम वे गन्दी भाषा का तो प्रयोग नहीं करते थे।

कभी कोई ट्राइका[4] अपनी घंटियाँ बजाती हुई एरिफी के पास से दौड़ी गुज़र जाती। ड्राइवर गरजते हुए निकलते, औरतें चपर-चपर करतीं और मर्द बड़ी रुखाई से शराबियों की तरह हँसते जाते थे। एरिफी क्रोध के मारे दुहरा हो जाता और चाहता कि उस सारी टोली को पकड़ कर थाने ले जाय। वह अपनी निष्ठुर दृष्टि से देर तक उन्हें गुज़रते हुए देखता रहता था।

जब पाल छः साल का हुआ और बाहर गलियों में खेलने लगा तो एरिफी ने दूसरे बच्चों से सख्ती का व्यवहार शुरू कर दिया। और कुछ ही दिनों में वे उससे खार खाने लगे। वह इस बात पर राजी ही न होता कि वे उसके पाल के साथ इतनी दुष्टता और मूर्खता का बर्ताव करेंगे। शुरू-शुरू में तो वह इन बातों

पर विश्वास भी नहीं करता था लेकिन बाद में एक दिन इत्तफाक से उसने गोद लिए बेटे के सम्बन्ध में दो–तीन विशेषण छिप कर सुन लिये। तब तो उसका ख़याल और भी पक्का हो गया। उसे महसूस हुआ कि उसके सिवाय उसके पाल को कोई प्यार नहीं करता।

यह जाने बिना कि आख़िर यह हुआ क्यों और कैसे उसका और बच्चों का क्रूर शीत युद्ध प्रारंभ हो गया। गली में किसी शोर–गुल या खेल–कूद की आवाज़ उसने बन्द करवा दी। बच्चों पर जो इस प्रकार का ओछा जुल्म उसने किया वह हास्यजनक ही था। आख़िरकार उसने महसूस किया कि अब बच्चों से उसका वास्ता नहीं पड़ रहा जैसा कि जाहिर में लगता था बल्कि उन नौजवान लोगों से वह ऐसा व्यवहार कर रहा था। जिन्होंने बालिगों की तमाम मूर्खतापूर्ण भावनाएँ और पक्षपातादि जैसी विशेषताएँ अपना ली हैं।

अपने इसी पुख्ता ख़याल की वजह से अक्सर एरिफी की कस्बे वालों से सख्त झड़पें हो जाती थीं। इसी तनातनी के दौरान में वह कई मरतबा पाल के खिलाफ अनेकों दुखदाई अपराध सुनने पर विवश हुआ। बहुधा ऐसी भिड़न्तों के बाद तो वह और भी अधिक उदास हो जाता था। उसका सारा चेहरा झुर्रियों से ढक जाता और उसकी आँखें विचलित हो झपकने लगतीं। उसका चेहरा, दाढ़ी, मूछों और भवों के पीछे शरणागत होता हुआ दीख पड़ता।

जब वह अपने प्रिय ऋषियों की जीवन–गाथाएँ पढ़ता तो उसकी आवाज़ भर्रा जाती। कभी–कभी तो वह धातु के विचित्र छल्ले की तरह घूमने लग जाती।

पाल की एरिफी से वही रिश्तेदारी जारी रही – दोनों उसी मौन को अपनाये हुए थे। एरिफी की आवाज़ बहुत कम और महत्त्वपूर्ण थी। वह अपने लड़के से भी उसी तरह बोलता था जैसे दूसरों से – हाँ, बग्घीवालों और औरतों से जिस तरह बोलता था वह लहजा पाल के साथ नहीं होता था। उसकी मामूली बोलचाल का तो बड़ा ही हल्का स्वर होता था। उसी लबो–लहजे में वह सार्जण्ट के सामने रिपोर्ट पेश करता, द्वारपालों को हुक्म देता, शराबियों को घर जाने के लिए तंग करता और उन राहगीरों के सवालों के जवाब देता जो वैसे भी बहुत कम ही उसके पास जाते, उसका लम्बा–चौड़ा डरावना चेहरा, जो घनी काली दाढ़ी में छुपा रहता था, वैसे ही पूछ–ताछ को बढ़ावा नहीं देता था।

ज्यों–ज्यों समय बीतता गया वह झोंपड़ी में बहुत कम देर रहने लगा। यहाँ तक कि रात को भी जबकि गश्त ज़रूरी थी वह बाहर चला जाता और घनी झाड़ियों में पड़ी बेंच पर जा बैठता।

वृक्ष के तने की तरह अचल, वह पौ फटने तक वहीं बैठा रहता।

कभी–कभी तो वह वहीं सो जाता था। लेकिन आम तौर पर ऐसा होता कि वह नदी के पार के मैदानों पर टिकटिकी लगाये देखता रहता और किसी बिन्दु–विशेष से अपनी नज़रें ही न हटाता। कभी वह उठ पड़ता और नदी की ओर चल पड़ता, पत्थरों पर बैठ कर ऐसा ध्यान–मग्न हो जाता मानो कुछ सुन रहा हो। नदी चुपचाप, ख़ामोशी से किनारों से सरगोशियाँ करती हुई आहिस्ता–आहिस्ता बहती रहती।...

जैसे–जैसे पाल बड़ा होता गया, वह भी अपने–आप में खोता गया और पहले से कहीं अधिक उदासीन और मौन रहने लगा। उसके हमउम्र बच्चों के लिए तो उसका ऐसा रवैया बड़ा ही नागवार हो गया था। उनसे मैत्री बनाने की तो उसने कोशिश ही नहीं की क्योंकि वह जानता थाा कि पहले किये गये सारे प्रयास दुःखदायी ही सिद्ध हुए हैं।

ऐसी ही एक कोशिश के बाद वह बड़ा घबराया हुआ घर आया था, उसके दाँत भिंचे हुए थे, आँख के नीचे नीले–काले चिन्ह थे और होंठों से ख़ून टपक रहा था।

"फिर लड़ पड़े किसी से?" एरिफी ने तनिक डांटते हुए पूछा। "अरे भाई तुम तो योद्धा हो योद्धा, जब देखो भिड़े हुए हो!"

पाल ख़ामोश हो बेंच पर बैठ गया, उसने अपने होंठ चूसे और थूका। रोते–झींकते शिकायत के लिए एरिफी के पास दौड़े जाना उसने न सीखा था। वह अपने आप, अपने ही तरीक़े से दुश्मनों से लड़ लेता था। न उसने कभी किसी को अपना कुछ ले जाने दिया और न ही वह कभी रोया–झींका। एरिफी को यह बात पसन्द थी।

"और आज किससे लड़ पड़े? तुलका से? क्यों?"

कोई और वक़्त होता तो एरिफी आगे कुछ न कहता लेकिन आज जब उसने देखा कि पाल कुछ ज्यादा ही रंजीदा दिखायी दे रहा है तो उसने असलियत जानने की कोशिश की। उसे अधिक पूछ–ताछ न करना पड़ी, पाल का सिर झुक गया और मन्द, काँपती हुई आवाज़ में उसने कहा :

"मेरे माँ–बाप कहाँ है?"

एरिफ़ी स्टोव सुलगाने में लग गया और फिर इस तरह सीधा खड़ा हो गया मानो पाल कोई सार्जेण्ट हो। उसकी आँखें खुली रह गयीं और पाल के झुके हुए चेहरे की ओर वह आतंकित हो घूरने लगा। पाल ने एरिफी का रुख और उसका चेहरा न देखा। बड़ी देर तक वह जवाब के इन्तजार में रहा लेकिन कोई जवाब उसे न मिला।

"कैसे थे वे लोग?" पाल ने अपना मुँह उठाया और बड़ी तिरछी मुस्कान

के साथ, जो बच्चों में नहीं पाई जाती, उसने थके–माँदे और भयभीत एरिफी के चेहरे को देखा।

एरिफी को होश आ गया।

"तेरी माँ तो ढोल की खाल थी और तेरा बाप – बदमाश था!" वह बड़े ज़ोर से गरजा और उसकी गरज से सारा मकान गूंज उठा और जिस गाली भरे और घृणापूर्ण अन्दाज में उसने पाल के माता–पिता के बारे में अपनी राय दी थी वह उस लड़के ने न कभी उससे सुनी थी और न बाद में सुनी।

पाल झुक गया और ख़ामोश हो गया।

एरिफ़ी बेंच पर बैठा रहा, उधर स्टोव पर रखे बर्तन का पानी उबल–उबल कर नीचे गिरता रहा और छन–छन की आवाज़ करता रहा पर उसने कोई ध्यान न दिया। बड़ी देर बड़ी परेशानी–भरी निस्तब्धता छाई रही।

पाल ने अन्त में सहमते हुए पूछा, "क्या आप उन्हें जानते थे?"

"हाँ ।..." एरिफी बड़बड़ाया। "मैं क्यों न जानता उन्हें! महज़ यही बात कि उन्होंने अपने बच्चे को एक चारदीवारी के सहारे छोड़ दिया, यह बताती है कि वे – अच्छे लोग नहीं थे!"

"और क्या वे ज़िन्दा हैं?"

"वह मुझे नहीं मालूम...शायद ख़त्म हो गये हों। माँ तो शायद तुम्हारे गम में घुलकर मर गयी – और तेरा बाप वह शराब में तबाह हो गया – या मर गया हो...शायद उसी चारदीवारी के पास... बहुतकर यही हुआ होगा और इस तरह कुत्ते की मौत वह मरा!"

"और आप – आपने देखा है उन्हें?"

"ऐसे दुष्टों को मैंने ज़िन्दगी में कभी नहीं देखा! आपने देखा है!"

पाल ने निष्कर्ष निकाला कि अगर एरिफी ने उसके माँ–बाप को देखा होता तो उसकी मुझसे ऐसी न निभती। वह सब कुछ समझ गया और उस दिन से फिर उसने वह घृणित विषय न छेड़ा। एरिफी ने ख़ुद इस बात पर सिर्फ़ एक बार ज़िक्र किया था और वह भी ऐसे मानो किसी रहस्यमय, रोमाँटिक विचार से वह प्रेरित हो गया हो।

"यह तो साफ़ है कि तुम सीधे–सादे आम लोगों के बेटे नहीं हो। तुम्हारा दिमाग़ भी मामूली नहीं है – और दूसरी भी इसी क़िस्म की चीज़ें यही साबित करती हैं। तुम साधारण नहीं हो।"

यह कहना तो मुश्किल है कि एरिफी ने यह नतीजा क्योंकर निकाला कि पाल पेचीदा और दुनियादार लोगों का बेटा है। पाल ने भी कभी उसे ऐसे नतीजे

की कोई बुनियाद नहीं पेश की। किसी ने अनुमान न लगाया कि उस बच्चे से अपार स्नेह है, यह तो सिर्फ़ एरिफी का ही राज था। और इसके बाद पाल के वंश व परिवार का सवाल फिर कभी नहीं उठाया गया।

क्या कभी पाल ने भी इस पर सोचा? हाँ शायद। उसने इस पर इतना कुछ सोच-विचार किया कि इस सवाल की छान-बीन किये बग़ैर उसे छोड़ देना उसने उचित न समझा।

इन्सान की कल्पना और उड़ानों की कोई सीमा नहीं। और बच्चे की कल्पना शक्ति की तो और भी कोई सीमा नहीं क्योंकि उसकी आत्मा तो एक वयस्क से कहीं अधिक रहस्यमयी होती है। वह उन बालिग लोगों की छोटी-छोटी धाराओं से कहीं स्वछन्द होती है जो कभी के जीवन के लोगों के सम्मुख घुटने टेक चुके होते हैं।

## 4

**ए**क बार जब एरिफी अपनी डयूटी से लौटा तो क्या देखता है कि मैंना बड़े विचित्र ढंग से व्यवहार कर रही है। वह निश्चल अपने पिंजरे में बैठी हुई थी। उसके बाद वह अचानक अपने अड्डे से उड़ी और कलाबाजी खाने लगी। कई बार वह पानी की कटोरी में गिरी। फिर उसने अपने आप को पूरी तरह झकझोरा, चोंच को चाटा और अपने पर फड़फड़ाये। अब के जो वह गिरी तो अड्डे पर लौटने में उसे दिक्कत महसूस हुई हालांकि पहले उन कलाबाजियों में वह आराम से लौट जाती थी। जब वह आख़िरकार अपने अड्डे को लौटी तो वह उसके बीच में नहीं बैठी जैसा कि पहले उसने एक बार किया था बल्कि इस बार वह पिंजरे के सीखचों से सटकर बैठ गयी।

इस खास दिन इस अपंगु मैना ने बड़े अजीब अन्दाज़ से अपने पर फड़फड़ाये और ही टांग पर अपने डण्डे पर बैठी रही। लेकिन जाहिर है उसके लिए वहाँ उस सूरत से बैठा रहना बड़ा मुश्किल था।

"यह अपाहिज चिड़िया मर जायेगी," एरिफी ने चिड़िया को ग़ौर से देखते हुए पाल से कहा।

"नहीं, नहीं!" पाल ने कहा। उसे दूसरी सब चिड़ियों में मैना सबसे ज्यादा पसन्द थी।

"मुझे तो अन्देशा है कहीं मर न जाय, बूढ़ी भी तो काफ़ी हो चुकी है!"

"उसे छुओ मत, ऐसा ही अकेला रहने दो उसे।"

पाल ने बड़ी गमगीन नज़रों से मैना की ओर देखा जो अपने डण्डे पर बैठी बड़े ज़ोर ज़ोर से घूम रही थी।

"ऐसा न करें उसे खुली हवा में ले जायें" एरिफी ने सुझाया।

"ठीक, ऐसा ही करते हैं।"

उन्होंने पिंजरे को खूंटी से उतारा और मकान के सामने बाहर एल्डर[5] झाड़ियों में ले जाकर उसे रख दिया। मार्च का महीना था, धूप निकली हुई थी और सूर्य की किरणें पोखरियों पर पड़ रही थीं बर्फ लुढ़क-लुढ़क कर पिघल रहा था; क्षितिज व्यापक और विशाल लग रहा था और सर्दी की श्वेत धनराशि से पूरी तरह रहित और बिल्कुल साफ़ था। नदी के उस पार चौड़ी सड़क की चितकबरी पट्टी-सी दिखायी दे रही थी। उसके दोनों ओर बर्फ की जमी हुई निर्मल परतें सूरज की रोशनी में चमक रही थीं। आकाश निर्मल था और वसन्तऋतु का नया-नवेला सूर्य बड़ा आनन्दित हो चमक रहा था।

लेकिन इनमें से किसी से भी मैना की हालत न सुधरी। उसने बड़ी सरल और शान्त नज़रों से अपने इर्द-गिर्द देखा, सिर हिलाया देर तक नरमी से शी-शी किया और ज्योंही पाल ने पिंजरे का छोटा दरवाज़ा खोलकर, उसे बाहर निकाल घास पर रखना चाहा कि वह अपने डण्डे पर से गिरी और उसके प्राण पखेरू उड़ गये।

लड़का फुर्ती से पीछे हटा और जब देखा कि मैना का पाँव मौत की ऐंठन से खिंचा रह गया है तो उसकी तरस-भरी आह निकल पड़ी। जब मैना अन्तिम बार लरजी और शान्त हो गयी तो पाल के गालों पर आँसू ढलक आये। उसे पिंजरे से बाहर निकाल कर उसने उसे लौट-पलट कर देखा, उसके आँसू पक्षी के पंखों पर चूने लगे।

"हूँ, तो तुम रो भी सकते हो। यानी जब मैं मरूँगा तो तुम मुझ पर रोओगे," एरिफी ने लड़के पर झुकते हुए शान्तता से कहा।

पाल ने पक्षी को ज़मीन पर फेंक दिया और अपनी बाहें एरिफी के गले में डालकर अपना सिर उसके सीने में गड़ा दिया और सिसकियों के साथ वह अस्पष्ट स्वर में भुनभुनाने लगा।

"ले, अब रो मत, मुन्ने। सब ठीक हो जायेगा। अभी कुछ अच्छे लोग इस दुनिया में बाक़ी हैं। तुम्हें अभी बरसों ज़िन्दा रहना है। सिर्फ़ तुम्हारे लिए कुछ दिक्कत पेश आयेगी, तुम ज़रूरत से ज्यादा जिद्दी हो। तुम झुकना नहीं जानते। तुमने घुटने टेकना नहीं सीखा। और यही अफ़सोस की बात है। लेकिन साथ ही यह भी तो है कि अगर तुम झुके तो वह और भी बदतर चीज़ होगी; क्योंकि तब हर

एक कोई तुम्हें रोंदेगा, कसेगा और तुम पर सवार हो जायेगा। लेकिन चिन्ता की ज़रूरत नहीं है सब अच्छा ही होगा। तुम इस अथाह व अपार भवसागर को सहज ही पार कर लोगे। तुम्हारे लिए महत्त्व की बात तो है – अध्ययन!"

एरिफी के कुल्हाड़ी की तरह धारदार और कठोर शब्द सुनकर पाल चुप हो गया। दोनों ने मिलकर पक्षी की अन्तेष्टि क्रिया की। उन्होंने एल्डर की झाड़ियों की जड़ों में एक छोटा-सा खड्डा खोदा, छोटे-से कफन से उसे ढँका और उस पर मिट्टी छितरा दी।

पाल ने जिसका इस घटना से दिल भर आया था, एरिफी से आज्ञा माँगी कि वह कब्र पर एक क्रास रख दे। वह लकड़ी के एक छोटे से क्रास बनाने में लग गया और दूसरी ओर एरिफी अपने इन भारी विचारों में गुम, जो उसके माथे पर शिकनें डाल रहे थे, एक कोने में बेंच पर जा बैठा और अधखुली आँखों से पाल को देखता रहा।

"मैं सोचता हूँ जल्द ही मर जाऊँगा। कभी-कभी तो मुझे बड़ा बुरा महसूस होता है। इसलिए तुम ज़रा ग़ौर से सुनो।"

पाल ने चाकू मेज पर रख दिया और ग़ौर से सुनने लगा।

"पहली बात तो यह है कि मिखाइलो पर मेरे बत्तीस रुबल और बीस कोपेक आते हैं। उसने मुझसे कर्ज लिये थे। और कोई साढ़े सतरह रुबल मेरे बक्से में पड़े हैं। वह मैं तुझे नहीं दूँगा; उन्हें पोस्ट-आफिस में ले जाकर सेविंग्स बैंक में जमा कर दूँगा। वहाँ से मुझे एक छोटी-सी पीले रंग की किताब मिलेगी। तू उस किताब को सँभाल कर रखना कुछ दिन बाद मैं तुझे एक दूकान पर रखवा दूँगा। पाल, मेरे बच्चे! वह जगह तेरे लिए बड़ी ही ख़राब है। बहुत ही गन्दी। या ख़ुदा! लोग क्या वैसे कुत्तों की तरह भी ज़िन्दगी बसर कर सकते हैं! वे शराब पीते हैं, गालियाँ बकते हैं और सब के सब लम्पट हैं – वह जगह कोई तेरे मौज-मजे के लिए नहीं है। वे तुझे मारेंगे, तुझे गालिया देंगे...छः!"

एरिफी बड़ी तेजी से उठा, खूंटी से उसने अपनी टोपी उठाई, सिर पर रखी और घर से बाहर निकल गया। इधर पाल फिर उस मरहूमा मैना की कब्र पर रखने के लिए क्रास बनाने में जुट गया। एरिफी की मृत्यु की भविष्यवाणी से उसे बड़ा मलाल हो रहा था।

बड़ी रात गये जब एरिफी उस रात अपनी झोंपड़ी में पहुँचा तो पाल सो चुका था। उसके बाद एरिफी ने अपनी मृत्यु की बात पाल से फिर कभी न कही।

और दो महीने बीत गये। सहसा पाल में पढ़ने की प्रबल इच्छा जागृत हो उठी। लगातार कई दिनों तक वह किताबें लिये बैठा रहा लेकिन पढ़ना उसे बड़ी

मुश्किल से आया। बार-बार उसे अपने कुन्दजहन पर चिढ़ होने लगती और वह घबरा जाता। एक-एक शब्द पर कभी उसे बड़ी देर लग जाती, वह पसीने-पसीने हो जाता और फिर एकदम उसे याद आता कि उस शब्द को तो वह बहुत पहले से जानता आया है। इससे उसे बड़ा क्रोध आता। वह अपने आप से सवाल पूछता : ऐसे शब्द यहाँ क्यों लिखे हुए हैं?

एक बार इसी प्रकार जब वह अपनी पढ़ाई पर क्रोधित था उसने एरिफी से ज़ोर के साथ कह दिया कि ये सारी किताबें नफरत के लिए लिखी गयी हैं और उनमें से ऐसी कोई एक भी चीज़ नहीं है जिसकी मुझे ज़रूरत हो।

"तो फिर तुम्हें ज़रूरत किस चीज़ की है?" एरिफी ने पूछा।

"मुझे?" पाल ने सोचा – "देखिये न इसमें लिखा है 'बच्चो, अब बहुत देर हो गयी। घड़ी थी।' और आगे चलकर लिखा है – 'किला, रस्सी, युद्ध, शब्द, दही, थे!' इन सबकी मुझे क्या ज़रूरत?"

"हाँ, कुछ गड़बड़ ज़रूर हो गयी है इनमें। अच्छा आगे पढ़ो तो।"

पाल पढ़ता गया लेकिन उसे इत्मीनान न हुआ। उसके दिमाग़ में जो उलझने वाले प्रश्न थे उसे उनका उत्तर न मिल सका। उस दिन उसने दो कहानियाँ पढ़ लीं और हमेशा की भाँति कुछ उलझन में पड़े हुए सवाल किया : इन सबका आखिर क्या फायदा?

दूर से लड़कों की चीख़-पुकार और हँसी उसे सुनायी पड़ी। खिलखिलाता हुआ सूरज झोंपड़ी की खिड़की में से अन्दर घुस गया। पाल का पारा चढ़ गया। अब वह अपनी किताबों पर ध्यान न जमा सका। चिड़ियाँ ज़ोर-शोर से चहचहाने लगीं और पिंजरों में कूद-फाँद करने लगीं। पाल ने जो घूम कर उन्हें देखा तो उसे वह दिन याद आया जब वह उन सबको आजाद कर देना चाहता था। दूर कहीं से किसी गाड़ी की गड़गड़ाहट की आवाज़ उसके कानों में आयी। पाल ने खिड़की में से देखा एक भटियारा गली में से गुज़र रहा था और उसे एकदम ख़याल आया कि वह भूखा है। किसी वजह से उस दिन एरिफी को घर पहुँचने में बड़ी देर लग गयी थी।

गाड़ी की खड़खड़ समीप से समीपतर आती गयी और अब वह सामने चौराहे पर दिखायी देने लगी। उसमें एक सिपाही बैठा हुआ था। लेकिन वह एरिफी नहीं था, मिखाइलो था। वह क्यों आये? पाल ने सोचा और बाहर आकर दरवाज़े पर आ खड़ा हुआ। दूर से भी मिखाइलो हाथ हिला रहा था मानो उसे बुला रहा हो। पाल ने देखा कि आज उसके बाल अजीब तरह से बिखरे हुए थे। उसकी टोपी भी लापरवाही से सिर पर पड़ी थी और कोट के बटन भी खुले

हुए थे। पाल समझ गया कि हो न हो कुछ अनहोनी हुई है।

"चल रे, जल्दी कर चल बैठ!" मिखाइलो चिल्लाया। "अस्पताल वापस ले चलो!" उसने गाड़ी वाले की पीठ पर हाथ मारते हुए कहा।

"क्या – हुआ?" पाल चीख़ पड़ा, उसके मुँह पर मुर्दनी छा गयी। उसने मिखाइलो की आस्तीन पकड़कर खींची।

"बड़ा बुरा हुआ। एरिफी पागल हो गया है। उसका दिमाग़ सारा उलझ गया है। वह बावला हो गया है समझे? वह सार्जेण्ट के पास गया और बोला, 'मुझे मारो, पीटो, सजा दो मैं ईसाई हूँ। मारो मुझे, मैं तुम से बात नहीं करना चाहता। तुमसे कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहता।' गोगोलेव ने उसके दाँतों पर घूंसा मारा पर उसने ध्यान ही न दिया। 'मारे जाओ, लगाओ, वह कहता रहा 'दियोसक्यूरी मैं कयामत तक ईसाई ही रहूँगा।' अरे मेरे अल्लाह, कैसी बकवास कर रहा था वह! उसके बाद उसने अलमारियों में से चीज़ें निकाल-निकाल कर फेंकना शुरू कर दीं और उन्हें पैरों से कुचलने लगा। तुम्हारी सारी मूर्तियाँ चकना-चूर कर दूँगा', वह कहने लगा और इसी क़िस्म की और भी बातें करता रहा। लेकिन उन्होंने भी उसे फ़ौरन बाँधा और अस्पताल ले गये पर वह बड़बड़ाता ही गया। अरे हाँ, यह बात थी। यह सब उन किताबों का नतीजा है! पढ़ने-लिखने से तकलीफ के सिवा क्या मिलता है? ज़रा सोचने बैठो और सारे बुरे-बुरे ख़याल तुम्हारे दिमाग़ में आने लगेंगे। बस यही 'क्यों' 'क्या' और 'कैसे' का नतीजा है और क्या! लोगों का दिमाग़ ख़राब हो जाता है! बड़े तरस की बात है, पर क्या करें वह है भी तो मेरा पुराना दोस्त।"

पाल के कलेजे पर पहाड़ गिर पड़ा था, वह दुखी और परेशान बैठा था। वह चुपचाप सुनता रहा और कल एरिफी कैसा था परसों कैसा था, उससे पहले कैसा था और इन तमाम वर्षों कैसा था यह याद करने लगा। उस सिपाही में उसे कोई नयी बात न दिखायी दी। सिवाय इसके कि वह दिन-ब-दिन दुबला होता जा रहा था; उसकी आँखें गहरी घुसती जा रही थीं; उसकी आँखें जो अब तक जिद्दी और बेनूर थीं हाल ही में कुछ कपटी हो गयी थीं जो कभी तो अस्वाभाविक रूप से ख़ुश नज़र आतीं और कभी ऐसी नज़र आतीं मानो डर रही हों।

एक बार जिसे बहुत दिन न हुए होंगे, उसने ताशकन्द के बारे में – वहाँ की गर्मी, रेत और असभ्य लोगों और उनकी करतूतों के, जिनके कारण उन्हें चूहों की भाँति मार दिया गया था, बारे में बातचीत की थी। लेकिन उसके बारे में बात करने के बाद वह फिर ख़ामोश हो गया और तब से लेकर आज सुबह तक वह गूंगा बना रहा।

“तो क्या वह अच्छे नहीं होंगे?” पाल ने मिखाइलो के फलफियाना वक्तव्य को बीच में काटते हुए पूछा।

“वह? यह तो तय है ही! ज़रूर वह अच्छा हो जायगा। पर बेचारा डाक्टर क्या जाने क्या होने वाला है? कभी नहीं कह सकता वह? डाक्टर तो इलाज कर सकता है बस। उससे ज्यादा वह कुछ नहीं कर सकता। तुमने दरवाज़े में ताला भी लगाया या नहीं? ड्राइवर, रोको! ताला लगाया था ऐं?”

“क्या वाकई डाक्टर ने कुछ कहा है? मुझे बताइये ना, क्या कहा उसने? अरे आपने ड्राइवर को क्यों रोक लिया? चलिए, चलें, जल्दी कीजिए मिखाइलो चाचा।”

‘क्या मतलब है तुम्हारा, चलो? जब झोंपड़ी खुली पड़ी है तो कैसे चल सकते हैं? क्या अजीब छोकरा है यह! कहता है चलो, चलें अरे सारा घर चुराकर ले जायेंगे वे। ड्राइवर लौटाओ गाड़ी। चलो वापस चलो बेवकूफ कहीं का!”

“अच्छे रे मेरे चाचा! नहीं, नहीं वापस नहीं। चलिए वही चलें एरिफी चाचा के पास। झोंपड़ी को मारो गोली!” पाल ने परेशान हो चीख़कर कहा।

“नहीं, यह नहीं हो सकता, नादान लड़के! मैं ख़ुद वहाँ वापस जाऊँगा। मैं ख़ुद...ड्राइवर चले चलो और इस बच्चे को अस्पताल ले जाओ। अच्छा, जाओ बेटे। पागलखाने ले जाना इसे, अच्छा। और पाल, जब तू वहाँ पहुँच जाय तो पूछना...”

लेकिन गाड़ी घड़घड़ाती हुई चल दी और पाल यह सुन ही न सका कि उसे आख़िर पूछना क्या है। वह गाड़ी में झूमता रहा और ड्राइवर को कोचता रहा, “ज़रा जल्दी चलाओ!”

“जल्दी ही पहुँचेंगे, घबराओ नहीं”, ड्राइवर ने विश्वास के साथ कहा। उसने अपने होंठ काटे, हवा में हण्टर घुमाया और चीख़कर घोड़े को डांटने लगा, “अबे तू चल किधर को रहा है अहमक के बच्चे? क्या तू भी पागल हो गया है?” और फिर लगाम खींचते हुए उसने पहले तो घोड़े को दाहिनी ओर मोड़ा और फिर बायीं ओर। इस पर घोड़े ने गुस्से से घरघर के शब्द मुँह से निकाले और असन्तोष दर्शाते हुए अपनी छोटी दुम पीछे को मारी।

मिखाइलो की दी हुई इस बदखबरी से ऐसा लगा मानो पाल का मस्तिष्क उन घनघोर घटाओं से आजाद हो गया जो उसे उस समय तक घेरे हुए थीं। आज पहली बार वह अपने इर्द-गिर्द वास्तविकता देख सकता था। स्वभावतः ही वह सतर्क था, सशंक और अविश्वासी था। उसने भरपूर ताकत से क्षण-प्रति-क्षण बढ़ती हुई उस हृदय विदारक पीड़ा का गला घोंटना चाहा जो उसके शरीर को भेदकर फूट रही थी। अब वह अकेला और निराश्रय महसूस कर रहा था।

ड्राइवर, गली–गली में चलते हुए लोग – सबके सब आज उसे कल से अधिक अपरिचित व अजनबी जान पड़ें; उन्होंने उसके अन्दर अहितकर एवं अवांछनीय परिणाम का एक भयावना सन्देह उत्पन्न कर दिया। यहाँ तक कि गर्मियों का वह चमकदार आस्मान भी, जो कल गरम था और दुलार कर रहा था, आज ऐसा बेदिल और उदासीन प्रतीत हो रहा था मानो उसे पाल से कोई नाता ही न रहा हो।

"आपका क्या ख़याल है, वह अच्छे हो जायेंगे?" जब वे तारों वाले अहाते के करीब पहुँचे तो उसने ड्राइवर से पूछा। उस अहाते के पीछे ही अस्पताल की पीली इमारत खड़ी थी जो बड़ी रूखी और निषेध करती हुई लग रही थी।

"वह? हाँ वह चंगा हो जायगा। अबे बायीं बाजू शैतान की पिशाच, बायीं बाजू! यह तो साली बस फिजूल त्रास देती है!"

लेकिन इससे पहले कि वह शैतान की पिशाच बायीं ओर मुड़े पाल गाड़ी से नीचे कूद चुका था और पीली दीवार की ओर ऐसा दौड़ा मानो किसी निशाने पर तीर जाकर लगे।

जम्हाई लेते हुए दरवाज़े ने पाल को निग़ल लिया। पर अब कहाँ जाय वह?

"क्या चाहता है रे?" किसी ने कहीं से मालूम किया।

पाल जल्दी–जल्दी कुछ बड़बड़ाया; उसका सिर झुका हुआ था और वह यह कोशिश कर रहा था कि उससे बोलने वाले व्यक्ति की ओर न देखे।

"एक सिपाही पागल हो गया है आज – वह यहाँ लाया गया था – बताओ मुझे – कहाँ है वह?"

"अच्छा, हाँ तो सीधे चले जाओ, बिल्कुल नाक की सीध में। कौन है वह तुम्हारा – बाप है क्या?"

पाल ने अपना सिर उठाया। लाल कमीज में मलबूस एक चौड़ी पीठ वाला व्यक्ति उसके सामने जा रहा था।

"क्या वह तेरा बाप है?" इसी व्यक्ति ने पाल की ओर बिना मुड़े ऊँचे स्वर से पूछा। अचानक वह व्यक्ति ऐसे यकायक और बिना आशा के रुका कि पाल का मुँह उसकी पीठ में जा लगा।

"निकोलस निकोलाविच, यह देखो उस सिपाही का लड़का आया है।"

चश्मा लगाये हुए एक साहब पाल के पास आये और उसकी ठोढ़ी हथेली से उठाकर बड़ी नम्रता से बोले : "क्या चाहते हो लड़के?"

पाल ने चकित नेत्रों से उनकी ओर देखा। इन महाशय का चेहरा दुर्बल, पीला और छोटा था।

"तो क्या चाहते हो तुम, ऐं?"

"मैं उनसे मिलना चाहता हूँ...

"नहीं, तुम उनसे मिल नहीं सकते – उह हूँ।"

पाल के चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ गयीं; वह आहिस्ता-आहिस्ता रोने लगा। उसके सिर में चक्कर आने लगे।

"तो फिर में किस तरह..." उसने रोते हुए पूछा।

लेकिन वह महाशय वहाँ से जा चुके थे। केवल वह लाल कमीज और सफ़ेद एप्रन (ऊपरी वस्त्र) धारी व्यक्ति वहाँ बाक़ी था। कमर पर हाथ बाँधे, होंठ काटते हुए वह पाल को बड़े सोच के साथ देख रहा था। पाल दीवार से बुरी तरह चिपट गया। और दहाड़ने लगा।

"अच्छा, अच्छा आओ, मेरे साथ आओ, जल्दी करो कहीं डाक्टर न देख ले हमें। चलो ना।" और पाल का हाथ पकड़कर वह उसे बरामदे के दूसरे किनारे पर फुर्ती से ले गया।

"वह देखो!"

पाल को पीछे से पकड़कर ऊपर उठा लिया गया और दरवाज़े पर लगे गोल शीशों से उसका मुँह टिका दिया गया। उसी कमरे के अन्दर एरिफी था और उसकी ज़ोरदार बुलन्द आवाज़ गूंज रही थी।

एरिफी एक लम्बा सफ़ेद लबादा पहने कमरे के बीच में खड़ा था और उसके दोनों हाथ कमर पर बाँध दिये गये थे। लम्बी नाइटकैप उसकी पीठ पर लटक रही थी। उसका सिर और चेहरा मुँडा हुआ था जिससे उसके बड़े-बड़े कान और भी भयावने लग रहे थे। उसके गाल पीछे पड़कर पिचक गये थे और गाल की हड्डी साफ़ दिखायी दे रही थी। उसकी आँखें खुली हुई थीं। और अन्दर इस कदर धंस गयी थीं कि काले गढ़े मालूम पड़ते थे। एक आँख के नीचे कुछ चोट का लाल निशान था। उसके बायें गाल पर जो तारा-सा दिखायी दे रहा था उस पर से ख़ून की बूँद रिस रही थीं जो एक फीते की तरह उसके गालों पर चक्र बनाकर, गर्दन तक आतीं और उसके लबादे के कालर में पहुँच कर लुप्त हो जातीं। एरिफी की ऊँचाई और दुर्बलता उसे भयभीत किये दे रही थी।

"तुमने मुझे जबरदस्ती इस कैदखाने में ठूस दिया है।" वह चिल्लाया, उसकी आँखें भयंकर रूप से चमकने लगीं। "मैं भी अपने ख़ुदा के नाम के लिए यह सब कष्ट भुगतूंगा और कयामत तक भुगतता रहूँगा। मैंने तुम्हारी मूर्तियाँ नष्ट की हैं, तुम्हारी वेदियाँ धूल में मिला दी हैं। तुम्हारी वेदियाँ मैंने मिट्टी कर दी हैं। तुमने अब तक मेरी जबान नहीं खींची है इसीलिए मैं तुम्हें अपराधी ठहराता

हूँ, ओ पापियो! तुम सच्चाई के ख़ुदा को भूल गये हो और अँधेरे में भटक रहे हो, तुममें गतिहीनता आ गयी है। श्राप, श्राप, श्राप,। तुम छोटों की आत्माएँ कुलषित करते हो। तुम्हारी कभी मोक्ष नहीं होगी। तुम तो ठीकरे हो, टुकड़े! तुमने मुझे सताया है, त्रास दिया है। क्यों मारा है तुमने मुझे? क्यों पीटा हैं? इसलिए कि मेरे दिल में सत्य है – ईश्वर है।..."

उसकी गहरी आवाज़ कभी गरजन करती और कभी सरगोशी बन जाती – बड़ी उदास, नरम-सी सरगोसी जिसे सुनकर पाल ऐसा काँपने लगता मानो उसे बुखार चढ़ आया हो और डर के मारे खिड़की से पीछे हट जाता।

"मैं अपनी मौत की राह देख रहा हूँ, मूर्तिपूजको! मैं अपने यश की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। वे जल्लाद और दण्ड देने वाले कहाँ हैं?

"शाप, शाप, शाप!"

असभ्य और भयंकर चिल्लाहट से दरवाज़ा हिल गया और जिस शीशे में से पाल वह सब देख रहा था वह भी काँपने लगा।

"अच्छा, बस काफ़ी हो गया अब। जल्दी से घर पहुँच जाओ वरना डाक्टर तुम्हें देख लेगा।"

एरिफी की चीख़-पुकार के मध्य पाल बरामदे से निकल आया और मूर्छा की भाव भंगिमा लिये बाहर आ गया। एरिफी के शाप और उसकी भयंकर फुसफुसाहट उसके कानों में गूंज रही थीं। एरिफी का कोण वाला मुँड़ा हुआ पीला चेहरा उसे भयंकर आकार धारण करता हुआ दिखायी पड़ा, और बड़े ज़ोर से चमकने लगा पर हाय वह चमक काली और अँधियारी थी! फिर सहसा उसके अनेकों छोटे-छोटे चेहरे बन गये जो शनैः-शनैः पाल की आँखों के आगे छिटक जाते और उसके दिल को हजार नज़रों से छेद देते, जिससे उसका हृदय बढ़ती हुई और भारी पीड़ा व ग़म से भर जाता।

पाल ने एरिफी के साथ अपनी ज़िन्दगी के जो दिन गुजारे थे उनके विविध चित्र – जब वह स्वस्थ था, दाढ़ी रखता था और ख़ामोश रहता था – उसकी नज़रों में नाचने लगे। ये तस्वीरें उसे दीखतीं और अदृश्य हो जातीं, दूसरी तस्वीरें सामने आतीं और वे भी अदृश्य हो जातीं। लड़के का दिमाग़ चक्कर में पड़ गया। अब उसका सारा अतीत उसके सामने आने लगा और फिर यकायक वह एक विचित्र अन्धकार में झोंक दिया गया – जिसमें न कोई विचार था न कोई कल्पना। एक बार फिर उसके सामने बीती हुई घटनाओं की एक जंजीर आयी जिसमें क्रम नहीं था। जब उसने उन्हें याद किया तो उसे बड़ा कष्ट हुआ। एरिफी पर उसका तरस, अपने आपका भय और विचारों की अव्यवस्था एक दूसरे से

बदलीं, उनमें मिलीं, और उसका सिर कन्धे और सीना फाड़ने वाला पत्थर बन गयीं।

सामने नदी बह रही थी। उसमें से सर्द हवा के झोंके आ रहे थे अन्धकारमय और कलकल करती हुई वह नदी जो पूरी तरह रात से ढँकी हुई थी दूर तक बहती गयी और गुम हो गयी। उसके ऊपर आकाश था, जिस पर छितरे जीर्ण-क्षीर्ण बादल छाये हुए थे। इन टूटे-फूटे बादलों के टुकड़ों में से कभी दो-तीन तारे चमक उठते थे। सारा आकाश त्रस्त था, बूढ़ा हो चुका था। ऐसा लगता था मानो अभी नीचे आकर शान्त, स्वप्निल नदी में विलीन हो जायगा जिसकी अन्धकारमय लहरों में दयनीय, बेसहारा आसमान के छोटे-छोटे नीले टुकड़े और एकाकी तारों का प्रतिबिंब दीख रहा था। नदी के उस पार क्षितिज अन्धकार पूर्ण और भयंकर रूप से स्तब्ध हो चुका था।

पाल दौड़ता हुआ झोंपड़ी को लौटा लेकिन वहाँ ताला लगा हुआ था। कुछ क्षण वहाँ वह स्थिर खड़ा रहा, फिर एल्डर झाड़ियों के करीब लेट गया और मुँह ऊपर को किये आकाश में तैरते हुए बादलों को देखने लगा – कुछ देर बाद उसकी आँख लग गयी – रात भर नींद में वह भयावने स्वप्न देखता रहा।

## 5

**पी**ठ में ज़ोर-ज़ोर के थप्पड़ों की मार से पाल जग पड़ा। एक क्षण के लिए उसने आँखें खोलीं। लेकिन फ़ौरन बन्द कर लीं क्योंकि धूप सीधे उसके मुँह पर पड़ रही थी और वह उससे बचना चाहता था। उसी क्षण उसने एक जानी-पहचानी सूरत देखी जो उसके ऊपर झुकी हुई थी।

उसी वक़्त उसे सब कुछ याद आ गया।

"अब उठ बैठ!" किसी स्त्री की आवाज़ उसके कानों में पड़ी।

वह हड़बड़ा कर उठ बैठा। सामने खड़ी मारिया दयालू जिज्ञासा-भरे नेत्रों से उसे देख रही थी।

"चल मेरे घर, नामुराद! देख तो कहाँ सोया पड़ा है तू! रात हमारे घर क्यों नहीं आ गया?"

पाल ने कोई जवाब न दिया। उसे मारिया फूटी आँख नहीं भाती थी। वह इसीलिए उसे नापसन्द थी कि वह बहुत लम्बी-चौड़ी और बलशालिनी थी, बहुत ज्यादा गाली-गलौच करती थी, क्योंकि उसकी आँखें भूरी थीं, आवाज़ कर्कश और खर्रेदार थी। असल में मारिया के शक्तिशाली, सदैव सतर्क और झगड़ालू

व्यक्तित्व की कोई भी तो बात उसे पसन्द न थी।

वे साथ-साथ वहाँ से घर गये।

"हाँ तो, अब मरने को मत फिर, समझा? सब ठीक हो जायगा। ख़ुदा और उसके नेक बन्दे तेरी मदद करेंगे। तू ज़िन्दा रहेगा। हाँ, ज़रा होशियार रहना। चीज़ों को देख, अपने को हमेशा पैना बनाये रख और भला-बुरा पहचान। ज़िन्दा रहना सीख, गो वह है बड़ी मुश्किल चीज़। तुझे हमेशा देख-भाल कर चलना होगा, वरना बेवकूफ़ ही रहेगा। शायद इसी में – एरिफ़ी के पागल होने में कुछ बेहतरी होगी। एरिफी ने क्या दिया था तुझे? न ठीक से खैर-खबर ली, न ठीक से पढ़ाया-लिखाया। बस लाड़ प्यार करता रहा। वह तुझे ऐसा ही समझता रहा कि तू अब बड़ा हो गया है। क्या यही तरीक़ा है बच्चों की परवरिश का? तू बच्चा है और तेरे साथ बच्चों जैसा ही व्यवहार होना चाहिए और बुरा न माने तो साफ़ कह दूँ, वह तो मूर्खों का भी शिरोमणि था।

"इन्सान को ज़िन्दा रहना चाहिए और अपनी ज़िन्दगी बेहतर बनानी चाहिए और वह उसके बजाए किताबें पढ़ता रहता था। किताबें पढ़ना कहाँ की अक्लमन्दी है? तुझे यहाँ ज़िन्दा रहना है और दूसरे लोगों से अच्छी तरह पेश आना है! ज़रा ताकत बटोर, लोगों से सम्मान हासिल कर, तेरी सारी किताबों से कहीं ज्यादा महत्त्वपूर्ण काम यह है। ग्यारह साल तक वह सिपाहीगिरी करता रहा और कहीं भी उसे कोई फायदा नहीं हुआ।"

पाल गुस्से में सब कुछ सुनता रहा और मारिया की इस लड़ाकू फिलासफी के विरुद्ध सिर्फ़ कुछ बड़बड़ाया और चुप रहा। पर जब उसने एरिफी को गालियाँ दी और उसे मूर्ख कहा तो उसने बड़े साहस से मारिया की पोशाक ज़ोर से पकड़ कर खींची मानो अपने अभिभावक के बारे में आगे हवाले देने के लिए उसे मना कर रहा हो। लेकिन वह अपने धाराप्रवाह वक्तव्य में इतनी बह गयी थी कि उसका मन्तव्य समझ न पाई और उसी उत्तेजना के साथ जारी रखती हुई बोली :

"दूसरों पर विश्वास न कर। अगर वे तुझसे प्यार-मुहब्बत करें तो समझ ले उसमें कोई झूठ या फरेब छिपा हुआ। अगर वे तेरी बड़ाई करें तब भी उसे झूठ ही समझना; लेकिन अगर वे तुझे डांटें-फटकारें, उलाहना दें तो समझना वे तेरे खैरख्वाह हैं, सच्चे आदमी हैं। चाहे उनकी गालियाँ बहुत ज्यादा ही क्यों न हों। असल बात तो यह है कि हरेक से चौकन्ने रहना। किसी से भी तेरा काम पड़े तो रुक और सोच – कहीं वह तुझसे नाजायज फायदा तो नहीं उठाना चाहता और जब तुझे इत्मेनान हो जाय कि नहीं वह ऐसा नहीं कर रहा तो फिर आगे बढ़। लेकिन तब भी रहना चौकन्ना। अपने निर्णय को बिल्कुल सही और आख़िरी न

समझना। तुझे अपने प्रति भी उतना ही संशक रहना चाहिए जितना कि तू किसी अजनबी से रहेगा। क्योंकि इन्सान हमेशा ही अपना भला-बुरा ठीक नहीं सोचा करता, वह भी प्रायः चूक जाता है। वह समझता तो है, "हाँ यह ठीक है', लेकिन असल में वह भूल करता है। नतीजा यह होता है कि वह गड़बड़ में पड़ जाता है!"

अपने ही तर्क-वितर्क में मारिया इतनी गूंथ गयी कि उसे इसका ध्यान ही न रहा कि वह किसके सामने बातें कर रही है और हर बात को विवरणसहित बयान करते-करते आख़िरकार वह ऐसे नुक्ते पर पहुँची कि अचानक कह गयी :

"और जब औरतों से पाला पड़े तो बड़े चौकन्ने रहना!"

अब सहसा उसकी नज़र अपने श्रोता पर पड़ी। वह ठमक-ठमक कर छोटे-छोटे क़दमों से उसके पीछे चल रहा था, मारिया के मर्दानावार हृष्टपुष्ट क़दमों के साथ क़दम मिला कर चलना उसके लिए बड़ा कठिन साबित हो रहा था। लाल कमीज पहने, नंगे पैर और बाल बिखरे यह चेचक मुँह दाग चेहरे वाला पाल, जिसकी आँखों में अब भी नींद भरी हुई थी इतना गया-बीता और दयनीय लग रहा था कि मारिया की सबल आकृति के सामने बिल्कुल हेच प्रतीत हो रहा था।

ज़ोर के धंसके ने मारिया के वक्तव्य पर विराम का काम किया। फिर वहाँ से अपने घर तक उसने पाल से और कुछ न कहा।

जब वे थाने के बरामदे में दाख़िल हुए तो मिखाइलो हाथ में कोई बर्तन लिये उनके समीप आया।

"अरे, तुम आ गये! बहुत अच्छा हुआ! खाने का वक़्त भी हो गया है, क्यों मारिया है ना? तुम कहाँ चली गयी थीं?" और फिर पाल की ओर घूम कर, "तू कहाँ सो गया था रे?"

"वहाँ...झोंपड़ी के पास।"

"अजीब लड़का है यह!" मिखाइलो ने सोचते हुए कहा और उसके पीछे-पीछे कमरे में दाख़िल हो गया।

"मारिया ने पहले ही अपना कोट उतार दिया था और स्टोव जला रही थी।"

"मैं कुछ ताजा पनीर लाया हूँ, कहाँ रखूं इसे? क्यों?"

"कहाँ से ले आये यह पनीर?" मारिया ने प्रफुल्लित हो पूछा : पति के हाथ में से बर्तन लेते हुए उसने उसे सूँघा, "अच्छा है, ताजा मालूम होता है!"

"एक छोटे-से किसान ने यह भेंट दी है। उसका एक काम कर दिया था–" मिखाइलो ने खुलासा बताते हुए कहा। चालकी से बीबी को ओर आँख

मारते हुए उसने जीभ चाटी।

"अरे हौवे कहीं के!" मारिया ने उसकी पीठ में प्यार से तिक्का नोचते हुए कहा।

"कमाल की औरत है, यह बीवी भी मेरी! मुझे और भी कहना है तुझसे। पर पहले खा लें! ज़रा अच्छी तरह, तबियत से खिलाना, तब बताऊँगा हाँ।"

"हूँ, अब बता दो ना," मारिया ने फुसलाया, उसके चेहरे पर जिज्ञासा झलक पड़ी।

मिखाइलो ने जेब में हाथ घुसेड़ा और कुछ खनखन करती हुई रेजगारी निकाली, उसके मुँह मुँडे हुए चमकदार चेहरे पर भी गंभीरता छा गयी।

"कितने हैं?" मारिया ने ख़ुश हो कानाफूसी के स्वर में कहा।

"डेढ़ रुबल और पाँच कोपेक और एक बाल्टी-भर ककड़ियाँ।

"बस?" मारिया निराशा में भुनभुनायी। "बुध को इससे कहीं ज्यादा लाये थे तुम।"

"वह बुध भी तो था। आज शुक्रवार है। मेले तो आये दिन होते ही रहते हैं। जानती हो आज वह नया सार्जेण्ट कोपेकों है ना, साला मुझे बड़े शक की निगाहों से देख रहा था। सत्यानाश हो उसका! शादी में उसे ईंटों के दो गोदाम मिले थे और ढेरों की रकम अलग से। और अब एक दम से कमबख्त पाकबाज बन गया है। काश, मेरा भी ब्याह वैसा ही होता, ढेरों चीज़ें दहेज में आतीं!"

"ऐ नमकहराम! करूँ तुम्हारा ब्याह इस सींखचे से?"

इस बातचीत के दौरान पाल दरवाज़े पर खड़ा उन्हें देखता रहा। उसे महसूस हो रहा था वह बेकार वहाँ गया, उस पर कोई ध्यान ही नहीं दे रहा मानो उसका उन लोगों से कोई सरोकार ही नहीं। उसने कल्पना करने की कोशिश की कि आख़िर बाद में उस पर क्या गुज़रने वाली है लेकिन सफल न हो सका।

उन दोनों में जो आमोद-प्रमोद का विनिमय हो रहा था उसमें दखल देते हुए उसने कहा, "क्या वहाँ जल्दी ही चलेंगे हम?"

"कहाँ? कहाँ चलेंगे?" मिखाइलो ने उसकी ओर मुँह फेर कर पूछा।

"अस्पताल को।"

"वहाँ जाने की क्या ज़रूरत है तुझे? क्या पागल हो गया है तू? यहाँ पटरी पर बैठ जा और थमा रह। अभी खाना तैयार हुआ जाता है, सब खायेंगे। हमारे बच्चे भी अब स्कूल से आते ही होंगे। फिर तू उनके साथ बाहर जाकर खेलना, अच्छा।"

पाल ग़म में डूबा, पटरी पर बैठ गया। उसके आस-पास क्या हुआ न उसने

देखा और न सुना। जब उसे खाने के लिए बुलाया तो वह मेज पर जा बैठा पर उससे खाया न गया, उसने अपना चमचा नीचे रख दिया।

"यह क्या कर रहा है?" मारिया ने कुछ सख्ती से पूछा।

"मैं नहीं खाना चाहता," पाल ने आहिस्ता से जवाब दिया।

उन दोनों ने बारी-बारी उसे लेक्चर पिलाये। लेकिन इससे उसके खाने की रफ्तार में तनिक बाधा भी न पड़ी। बड़ी चुस्ती के साथ वे शोरबे की भरपूर बड़ी रकाबी जिसमें से चरबी और ख़ूब भरी हुई बन्दगोभी की सुगन्ध निकल रही थी साफ़ किये जा रहे थे।

"शाप!" यह शब्द पाल के कानों में ऐसा गूंजा। मानो धातु के हथौड़ों का मन्द प्रहार हुआ हो।

"शाप!" उसने मन्द स्वर में इसी शब्द को दोहराया और एरिफी के पिचके हुए गालों वाले बेदिमाग़ चेहरे की कल्पना की। पाल के होंठ हिले और वह काँप उठा। उसके चेहरे पर ख़ून उतर आया पर फिर शीघ्र ही एक गरम जहर के साथ लौट गया। उसका चेहरा एक क्षण के लिए दमकता और दूसरे ही क्षण पीला पड़ जाता। उसके गालों और माथे पर के माता के दाग घने लाल दागों में परिणत हो जाते।

"क्या बड़बड़ा रहा है वहाँ तू? कोचरे कपटी ऐं!" मिखाइलो मेज पर से उठ कर चीख़ा।

"मैं जाता हूँ," पाल ने दृढ़ता से कहा और बेंच पर से उठ गया।

"कहाँ?" मारिया ने सख्ती से पूछा।

"मैं अपनी झोंपड़ी में जा रहा हूँ।"

"वहाँ काहे के लिए? यहाँ अब एक सिपाही आ गया है। वह तुझे नहीं जानता। फ़ौरन वहाँ से निकाल बाहर करेगा वह तुझे। बैठ जा यहीं चुप होकर और ज़रा होश की दवा कर, समझा!"

पाल बैठ गया। मिखाइलो उस सूती पर्दे के, जो बिस्तर के ऊपर सजा हुआ था, पीछे जाकर अदृश्य हो गया और जब वह उस पर लेटा तो पर्दे की गम से भरी आह निकल पड़ी।

"और चिड़ियों का क्या होगा?" पाल ने क्षण भर बाद कहा – उसने प्रश्नवाचक दृष्टि से मारिया पर डाली।

मिखाइलो ने पर्दे के पीछे से जवाब दिया, "मैंने वह सब उड़ा दीं। और तेरा सारा सामान-वामान यहाँ ले आया।" उसने लेटे-लेटे जम्हाई ली। "नहीं, नहीं तुझे वहाँ जाने का कोई काम नहीं, समझा।"

"सन्दूक कहाँ है?" पाल ने कुछ देर बाद पूछा।

मिखाइलो अब खुर्राटे भर रहा था। मारिया खिड़की के पास बैठी-सी पिरो रही थी। किसी ने भी उसके सवाल का जवाब न दिया। पाल एक कोने में गया और पटरी पर लुढ़क गया।

"अब मेरा क्या होगा?" उसने सोचा।

उसकी आँखों के सामने नदी में लहरें उठ रही थीं और छोटी-छोटी लकड़ियाँ उस पर तैर रही थीं। उनमें से कुछ तो किनारे पर धकेल दी गयी थी जो वहीं पड़ी रहीं। पाल को वह जमाना याद हो आया जब वह उन्हें उठाकर फिर पानी में फेंक दिया करता था। वे उसे पसन्द न थीं क्योंकि वे अपनी राह पर आगे नहीं बढ़ती थीं। वह चाहता था वे बहती हुई उस जगह तक चली जायं जहाँ नदी मुड़कर गायब हो जाती थी। यह नदी जाती कहाँ है? शायद किसी और नदी में जा मिलती है और फिर दोनों एक साथ समुद्र में विलिन हो जाती हैं। एरिफी ने उसे यही बताया था। समुद्र – जिसमें अथाह पानी है, इतना कि यदि कोई चलता-चलता इतनी दूर चला जाय कि आँखों से ओझल हो जाय तब भी उसे उसका दूसरा किनारा नहीं दीख सकता। उसे कोई एक दिन में क्या दो-तीन दिन लगातार चलने पर भी नहीं देख सकता। कहीं यह एरिफी का अपना विचार तो नहीं था? वह तो पागल हो गया है! क्या हमेशा से तो पागल नहीं था वह?

पाल अपने कोने में बैठा एरिफी, समुद्र और इसी प्रकार की बातें सोचता रहा और सोचते-सोचते हमेशा वह एक ही सवाल पर लौट आता – कल उस पर क्या गुज़रने वाली है?

एक तेज खुसर-पुसर ने उसका विचार-क्रम तोड़ दिया। वे समझे थे वह कभी का सो गया होगा। पर्दे के पीछे दम्पत्ति उसी के बारे में बातें कर रहे थे।

"वह सन्दूक के लिए पूछ रहा था," मारिया ने कहा।

"एं?" मिखाइलो ने चौंक कर पूछा।

"पूछ रहा था सन्दूक कहाँ है?"

"कैसा शैतान है यह छोकरा भी!" मिखाइलो ने हैरान होकर खुसर-पुसर की। चलो झटपट उसे उठाकर सेवलिच पहुँचा दें। जाहिर है उसे मालमू हैं कि सन्दूक में कुछ रुपये-पैसे हैं। अच्छा ऐसा कर मारिया उसे कल ही ले जाना।

"तुम्हें तो ऐसी हबड़-दबड़ लगती है कि बस! कल ही ले जाना। ऐसी कौन आफत आ रही है! तुम तो ऐसे घबड़ा रहे हो जैसे मुर्गी! ऐसा डर काहे का तुम्हें?"

"यों ही, तुम तो जानती नहीं हो अगर उसने अचानक पूछ लिया उसमें पैसे

भी थे? ऊँह? तो क्या जवाब दोगी?"

"बौ – – ड़ – – म!" मारिया ने तिरस्कार-भरे स्वर में भुनभुनाते हुए कहा। उसके बाद उनकी कानाफूसी इतनी धीमी पड़ गयी कि पाल को कुछ सुनायी न दिया।

उनके इस वार्तालाप ने उसमें उनके विरुद्ध कोई नया भाव नहीं उत्पन्न किया हालांकि वह यह समझ गया कि वे लोग उसे लूटने की योजना बना रहे हैं। लेकिन वह उसके प्रति भी उदासीन था। कुछ तो इसलिए कि वह पैसे की शक्ति से अपरिचित था और कुछ इसलिए कि वह एरिफी की दर्दनाक हालत के सिवाय कुछ सोच ही न सकता था। उसका सारा ध्यान उस रहस्यमय 'कल' पर केन्द्रित था जो उसकी अब तक गुज़रने वाली ज़िन्दगी के दरवाज़े बन्द कर देगा।

मारिया और मिखाइलो उसे कभी न भाये और इस खास दिन तो उसकी उनके प्रति ग्लानि और भी बढ़ गयी। उसने महसूस किया कि न वे उसे पसन्द करते हैं और न ही वहाँ रखना चाहते हैं। वह यह भी जानता था कि उसे अधिक दिन उनके साथ नहीं रहना है। वह तो यहाँ तक अधीर हो गया कि कल भी उनके साथ रह सकेगा या नहीं इस पर भी उसे शक होने लगा।

अब जब नींद में वे खुर्राटे लेने लगे तो ऐसा लगा मानो एक दूसरे से होड़ लगी हुई है और उस वक़्त तो वह उसे और भी बुरे लगे। कोने में बैठा हुआ वह ऊँघ रहा था और कल के विचार उसे घेरे हुए थे – कल जिसके बारे में वह कुछ भी न जानता था।

अबासियाँ और कराहें पर्दे के पीछे से सुनायी पड़ रही थीं। मिखाइलो बिखरे बाल लिए, चेहरे पर नींद की खराशें लिए कमरे में लड़खड़ाता आन पहुँचा।

पाल की ओर घूमकर उससे पूछा, "सो रहा है?"

"नहीं!"

"हमारे बच्चे तो नहीं आये थे?"

"जी नहीं।"

"न – हीं, नहीं, जो बात पूछो नहीं कह मारा। मेरा ख़्याल है वे अपनी चाची के यहाँ गांव में चले गये होंगे। समोवार चढ़ा देना चाहिए। जल्दी ही काम पर भी जाना है।"

वह बरामदे में चला गया।

उसके बाद मारिया बिस्तर से उठी। उसने पाल की ओर देखा और बालों में कंघी की। उसका जूड़ा नारियल के गोले की भाँति मोटा था और उसे देखकर

वह सोचने लगा कितनी जवान है, एक बाल भी तो नहीं सफ़ेद हुआ अब तक!

"क्यों रे पाल क्या सोच रहा है? क्या इरादा किया तूने करने का? क्योंकर बसर करेगा ज़िन्दगी?" सहसा मारिया ने उसकी ओर मुँह करते हुए पूछा और मुँह बनाने लगी क्योंकि कंघी बालों को सुलझाने के बजाय उन्हें फाड़ दे रही थी।

"मैं नहीं जानता।" पाल ने सिर हिलाते हुए कहा।

"हूँ-हूँ!" मारिया बुदबुदायी। "तो फिर कौन जानता है? मक्कार कहीं के!"

उसने साँस ली और चुप हो गयी। पाल ने भी कुछ न कहा। यह ख़ामोशी तब टूटी जब मिखाइलो खौलती हुई चायभरा समोवार ले आया। वे मेज पर बैठ गये और निस्तब्ध वातावरण में उन्होंने चाय पी।

"हाँ, तो क्या कहता था तू?" मारिया ने तीसरा प्याला लेते हुए बात शुरू की। वह कभी की गरम हो चुकी थी और इतना पसीना उसे आ रहा था कि उसे अपने ब्लाउज के ऊपरी दो बटन खोलने पड़े।

"सुन लो कान खोलकर मैं क्या कहती हूँ, और याद रखना इसे।" उसने बड़ी आहिस्तगी से कहा और फिर कुछ इतराते हुए रुक गयी। "कल तुझे मैं एक मोची के यहाँ ले चलूँगी, वह मेरा जानने वाला है। वहाँ तू नौसिखुआ बन जाना। ज़रा ठीक से रहना, इधर-उधर बदमाशी मत करते फिरना। काम करना, पढ़ना और मालिक व दूसरे कामकरों की बातें ग़ौर से सुनना। तब कहीं जाकर तू आदमी बनेगा। पहले-पहल ज़रा दुश्वारी होगी; पर ज़रा सब्र से काम लेना। कुछ दिनों में आदत पड़ जायगी तो आसानी होगी। तेरे आगे पीछे तो कोई है नहीं। छुट्टियों के दिन यहाँ चले आना, हमें ही अपना रिश्तेदार समझना अच्छा। यहाँ हमारे साथ खाना-पीना और रहना। हम यहाँ हमेशा तुझे अच्छी तरह बुलायेंगे और ख़ुश होंगे। समझा कि नहीं?" पाल समझ गया और यही जाहिर करते हुए उसने अपना सिर हिला दिया।

"यह मत भूल जाना कि तेरी देख-भाल किसने की? मेरा मतलब हैं हमें मत भूल जाना! हम भी तुझे नहीं भूलेंगे!" मिखाइलो ने इस अन्दाज़ में कहा मानो कोई सबक समझा रहा हो। उसने पाल की ओर उसकी प्रतिक्रिया जानने के लिए देखा।

पाल की निगाहें ऊपर उठीं मानो वह पूछना चाहता हो, "क्यों न भूलूँ तुम्हें?" और फिर निगाहें हटालीं। मिखाइलो ने निराशा से आह भरी और बड़ा उत्तेजित हो अपनी गरम चाय फूँकने लगा।

फिर निस्तब्धता छा गयी। पाल ने उस जोड़े की ओर कनखियों से देखा और

उसे यह ज़रूरत महसूस हुई बल्कि यों कहना चाहिए उस ने यह हक समझा कि कोई ऐसी बात करे जिनसे उन्हें परेशानी हो। पहले तो उसे कुछ कारगर चीज़ न सूझी पर बाद में याद आ गयी।

"सन्दूक कहाँ हैं?" उसने अचानक पूछ लिया।

दम्पति ने आँखें चार कीं।

"सन्दूक मेरे पास है। सन्दूक का तू ख़्याल भी न कर। वह वहाँ हिफाजत से रखा रहेगा। जब तू बड़ा हो जाय तब आकर कहना, 'लाओ मेरा सन्दूक दो।" और मैं फ़ौरन तुझे वह थमा दूँगा। 'यह रहा तेरा सन्दूक पाल, इसे किसी ने छुआ तक नहीं है।' हाँ, हाँ बिल्कुल। और उसमें जो तेरे कपड़े-लत्ते हैं – कमीज, पतलून वग़ैरह वे बेशक तू निकाल ले उसमें से।

भाषण समाप्त हुआ, मिखाइलो ने गहरी साँस ली। उसके मुँडे हुए चेहरे पर दुःख और भय के मिश्रित भाव झलक आये।

मारिया ख़ामोश थी, और पाल के चेहरे पर सन्तोष के भाव ढूँढना चाहती थी।

"लेकिन उसमें पैसे भी तो थे। वह कहाँ रख दिये तुमने?" पाल ने बड़े धीमे स्वर में कहा।

"पैसे?" मिखाइलो ने चकित हो मारिया की ओर देखा उसकी आवाज़ और चेहरे में आश्चर्य झलका।

"मारिया! क्या उसमें कुछ पैसे भी थे? कुछ पैसे सन्दूक में? ऐं? मैंने तो कोई पैसे देखे नहीं भई, तेरे सन्दूक में। उहूँ हूँ, मुझे नहीं दीखे भई पैसे-वैसे। ख़ुदा करे मैं अभी मर जाऊँ जो मैंने देखे हों पैसे!"

"ख़ुदा से क्या कह रहे हो, अहमक कहीं के? क्या वह यह कह रहा है कि तुम झूठ बोल रहे हो? खूसट, कुकुरमुत्ते! तुमने नहीं देखे सो नहीं देखे! ख़ुदा की कसम खाने चले हैं बेचारे!"

"मैंने तो ख़ुदा को अपना गवाह बनाया है, और क्या! क्या यह भी पाप है? बाइबिल में लिखा है; 'फिजूल ख़ुदा का नाम न लो,' और यह कोई फिजूल थोड़े ही है। यह तो मेरी बात की तसदीक के लिए है।"

पाल ने उन्हें ग़ौर से देखा। वह भांप गया कि मिखाइलो उसके सवालों से घबड़ा गया है और अब उस विकट स्थिति में से बाहर निकलना उसे दूभर हो रहा है। लेकिन मारिया के माथे पर शिकन तक न पड़ी थी। लड़का गरम हो गया और बोला :

"उसमें सतरह रुबल रखे थे। और तैंतीस तुम पर आते हैं। समझे! एरिफी

चाचा ने मुझे बता दिया था। और बहुत पहले नहीं हाल ही में कहा था।"

यह सुनते ही दोनों ने ऐसा ठहाका लगाया कि पाल चकित रह गया। मारिया तो हँसते–हँसते लोट गयी। वह पीछे को टिक कर बैठ गयी और उसकी मर्दानावार उभरी हुई छातियाँ हँसी के मारे ज़ोर–ज़ोर से हिलने लगीं उधर मिखाइलो का हँसी के मारे उससे भी बदतर हाल था।

पाल उनका नीति न समझ सका। उसने उन्हें देखा और बड़ी हिचकिचाहट के साथ मुस्कुराया मानो दुविधा में पड़ा हो कि उनके साथ हँसे या न हँसे।

"वह एरिफी भी भई बेशक बड़ा ही मसखरा है। पैंतीस रुबल! क्या रकम बताई है, आहा!" मिखाइलो ने हँसते–हँसते कहा।

"अरे, मूरख! एरिफी ने कहा और तूने उसे सच समझ लिया! वाह वाह, क्या बात पैदा हुई है! बावला साला! अबे, मूढ़ वह तो पागल हो गया है!" मारिया ने उसे चिढ़ाते हुए कहा और हँसी पर कुछ कण्ट्रोल किया।

अब पाल उनकी हँसी का अर्थ समझ गया। उसने एक गहरी साँस ली, रुआँसा मुँह बनाया और क्रोध से काँपते हुए उसने उन्हें फिर फटकारा :

"तुम झूठ बोलते हो! दोनों झूठ बोल रहे हो! यह न समझो कि तुम जो रात को बातें कर रहे थे मैंने सुनी ही नहीं। मैंने हर बात ध्यान देकर सुनी है चोट्टों! तुम दोनों चोर हो! हाँ और नहीं तो क्या!" शब्दों पर ज़ोर देने की गरज से पाल ने मेज पर लात मारी।

मिखाइलो स्तम्भित रह गया। आतंकित हो उसने मारिया की ओर आँखें गड़ाकर देखा। बाहें मेज पर रखे वह निश्चल बैठा रहा। लेकिन मारिया ने फ़ौरन जाहिर कर दिया कि वह बुद्धू नहीं है।

"लो यह भी हो गया!" वह ज़ोर से चिल्लाई मानो डर गयी हो। और जब पाल चीख़ता हुआ, उत्तेजित और पीला हो अपनी जगह पर बैठा तो वह अपनी कुर्सी से कूदी। पाल की आँखों में प्रकोप झलक रहा था।

"अरे ख़ुदा! ओ मिखाइलो, अरे बेवकूफ दौड़ के डाक्टर को लाओ। दौड़ो, लपको! लौंडा भी पागल हो गया है। देखा तुमने कैसा चमक रही है उसकी आँखें या ख़ुदा रहम कर! मुसीबत पर मुसीबत पड़ रही है! न जाने कौन से गुनाहों की सजा है यह! हाय, हाय! बेचारा एरिफी की हालत बर्दाश्त न कर सका। दिमाग़ ख़राब हो गया इसका, पागल हो गया यह!"

जो भी पाल को काफ़ी घबराहट हो रही थी पर वह समझ गया था कि उसे वे बेवकूफ बना रहे हैं। वह रो पड़ा, उसके आँसुओं में कटुता व क्रोध भरा था। सहसा उसे आभास हुआ कि वह इस ज़िन्दगी और इस प्रकार के लोगों से

निबाह नहीं कर पायेगा।

आज पहला दिन था जब वह इस दुनिया में अकेला रह गया था और आज पहली बार उसके ये आँसू बहे थे।

उन्होंने उसे तो डरा दिया लेकिन डाक्टर फिर भी न बुलाया गया। और जब तक वह सो न गया वे बड़ी दुश्वारी के साथ उसकी देख-भाल करते रहे। उन्होंने उसे उठाकर उस कोने में लिटा दिया जहाँ वह दिन भर से बैठा हुआ था। उसकी आँख लगने ही वाली थी कि उसने मारिया की मोटी आवाज़ में कानाफूसी सुनी :

"लौंडा बुद्धू नहीं है। उसकी बड़ी तेज-तर्रार जबान है। अच्छी बात है वह तेज है, यानी अपना काम चला सकता है।"

नींद में पाल ने बहुत से शरारतपसन्द भूतों को देखा। लम्बे-चौड़े और कुरूप, पतले-दुबले और नाटे व सब-के-सब उसके आस-पास जमा हो गये और दाँत कटकटाकर राक्षसीय हँसी-हँसने लगे। उनकी भयावह हँसी से हरेक चीज़ लरजने लगी। पाल भी धूजने लगा। आकाश की जगह एक विशाल, काया शून्य उसके ऊपर फैला हुआ नज़र आया जिसमें से राक्षस एक-एक करके और कुछ जत्थे-के-जत्थे उतर रहे थे। बड़ा ही भयंकर दृश्य था पर साथ ही एक प्रकार से आनन्द दायक भी।...

सेवेरे उसे उठाकर चाय पिलाई गयी और मोची के यहाँ लेजाया गया। पाल बड़े अनमने और उदासीनता से चला जा रहा था। उसे अहसास हुआ कि भविष्य में उसके लिए कोई जगह नहीं है और जाहिर है उसका यह ख़याल गलत न था।

उसे एक नीची छत वाले, अँधियारे कमरे में ले जाया गया जहाँ धुएँ की बदलियों के नीचे चार मनुष्य गा रहे थे और हथौड़े पीट रहे थे। पाल के कन्धे पर हाथ रखकर मारिया ने एक नाटे कद के आदमी से बातचीत की जो दायें-बायें हिलता जा रहा था। उसने भुनभुनाते हुए कहा :

"अरे हमारे यहाँ तो यह फिरदौस है फिरदौस! मामूली बस्ती नहीं है बल्कि स्वर्ग है! और खाना – वह तो बस है ही स्वर्ग वालों का-सा ! हर चीज़ यहाँ की परिपूर्ण है। अच्छा, नमस्ते।"

मारिया चली गयी। पाल फर्श पर बैठ गया और अपने जूते उतारने लगा। उसमें कुछ जा पड़ा था और वह पाव में चुभ रहा था। कुछ आकर उसकी पीठ पर पड़ा। उसने आस-पास देखा तो उसे एक पुरानी नाल फर्श पर पड़ी दिखायी दी। दरवाज़े पर उसी का एक हम उम्र, भद्दी शक्ल का लड़का खड़ा था उसने अपनी जबान निकाली और पुकारते हुए बोला :

“कोचरा मुँह और नाक में छेद
शैतान का हवाला इसे यही है भेद ”

पाल ने मुँह फेरा, साँस ली और अपने बूट खींचने लगा।

“इधर आजा, दोस्त!” उनमें एक जो नीची पटरी पर बैठा था चिल्लाया।

पाल बड़े साहस के साथ उसके पास गया।

“यह सँभाल ज़रा!” और उस शख़्स ने चमड़े का राल लगा मोम का टुकड़ा उसे थमा दिया। “इसे यों मरोड़, लड़के, ज़रा और ज़ोर से मरोड़।”

पाल ने चमड़ा मोड़ा और कनखियों से सारी दुकान की ओर देखा।

इस प्रकार पाल कामगारों की श्रेणी में दाख़िल हुआ जिस दूकान पर वह काम करता था वह मीरोन तोपोकोर्व की थी। तोपोकोर्व एक मोटा, गोल मटोल आदमी था, सूअर की-सी छोटी-छोटी उसकी आँखें थीं और गंजा बड़ा सिर था।

वह बुरा आदमी नहीं था। वह बहुत नरमदिल इन्सान था। और ज़िन्दगी में विनोद प्रियता का कायल था। दुश्चरित्र इन्सानों की कमजोरियाँ वह क्षमा कर देता था हालांकि हँसी-मज़ाक़ भी उसे पसन्द था। जाहिर है, किसी जमाने में उसने अनेकों धार्मिक ग्रंथ पढ़े थे। और उनकी झलक उसकी बातों में हमेशा आती थी। लेकिन अब शराब की बोतलों पर चिपके लेबलों के सिवाय वह कुछ न पढ़ता था। जब वह पिये हुए होता तब तो कुछ हमदर्दाना व्यवहार करता पर जब वह बे पिये काम करता तो कुछ सख्ती बरतता था। परन्तु उन्हें शिकायत करने का मौका उसने शायद ही कभी दिया हो। पियक्कड़ ज्यादा होने के कारण दूकान की ओर उसका कुछ कम ध्यान रहता था।

दूकान की सारी जिम्मेदारी दादा उतकिन पर थी जो पुराना सैनिक था और एक टांग उसकी लकड़ी की थी। बात-चीत और व्यवहार दोनों में सादगी और मुँहफट था और आज्ञाकारिता व आज्ञा की तामील में बड़ा हठी था।

दादा उतकिन के अलावा दो सहायक भी थे, निकन्दर मिलोव और कोल्का शिश्किन। पहले के, बड़े लाल बाल थे, बड़ा हौसलेवर आदमी था, गानों का उसे शौक था और उससे भी बढ़कर शौक था शराब का। वह ख़ूब अच्छी तरह जानता था कि जब वह अपनी प्रमुदित हरी आँखें तिरछी करता और भंवें संवारता तो उसका चेहरा असाधारण रूप से सुन्दर लगने लगता।

दूसरा सहायक तो बिल्कुल फीका, दबा-कुचला और बीमार दीख पड़ता था। वह था भी बड़ा दुश्चरित्र। जब लल्लो-चप्पो करता तो कमबख्त सबको अपनी तरफ कर लेता। और शीघ्र ही बाद में कुछ ऐसी आकस्मिक और बेहूदा बात कर देता कि श्रोता उससे अलग हट जाता। वहाँ काम करने के दूसरे ही दिन

से पाल को कोल्का से नफरत हो गयी।

एक आर्तियुश्का नामक लड़का भी वहाँ काम करता था। छेड़छाड़ की उसे बुरी लत थी। वह ज़रा-सी देर में पाल से हाथापाई पर आ जाता और उन दोनों में डट कर लड़ाई होती। आर्तियुश्का को अचंभा हुआ जब पाल ने उसे पीट दिया। हफ़्ते-भर वह पाल पर गुसैली नज़रें डालता रहा और हर वक़्त अपनी हार का बदला लेने की सोचता रहा। पर जब उसने देखा कि पाल उसकी छेड़-छाड़ के प्रति बिल्कुल उदासीन है तो उसने सुलह करने की ठानी।

"देख तुझसे एक बात कहूँ कोचरे, हमारी तुम्हारी आज से सुलह!" उसने कहा। "झगड़े की ऐसी-तैसी! तूने मुझे पीट लिया तो क्या हुआ। तू है भी तो मुझसे तगड़ा। पर ज़रा देखता रह। तेरा सारा तगड़ापन झड़ जायगा। तब देखना कैसा ठोंकता हूँ मैं तुझे। मंजूर?"

उसने पाल की ओर हाथ बढ़ाया और पाल ने बिना कुछ कहे अपना हाथ उसके हाथ में दे दिया।

"पर एक बात याद रखना, तू यहाँ पर अभी-अभी आया है। हम सबसे पीछे है तू यह न भूल जाना। चूँकि तू हम सबसे बाद में यहाँ आया है इसलिए सारा गन्दा काम तुझे करना पड़ेगा समझा? मंजूर है वह काम?"

पाल ने उसके भद्दे, कुरूप चेहरे की ओर देखकर कहा हाँ उसे मंजूर है।

"अच्छा!" अर्तियुश्का ने चकित स्वर में कहा। "अच्छी बात है। यही मुझे पसन्द भी है। यही सबको करना भी चाहिए। तू दूकान साफ़ किया करना, समोवार, चूल्हे पर चढ़ाना, लकड़ियाँ फाड़ना, स्टोव सुलगाना, आँगन में झाड़ू लगाना और बाक़ी जो काम हों वह सब कर दिया करना।"

"और तू?"

"और मैं? कमाल करता है तू भी! मेरे लिए तो सैकड़ों काम और है! मुझे तो और भी ज्यादा काम है।"

इस प्रकार श्रम-विभाजन कर देने के बाद आर्तियुश्का के लिए कोई काम बाक़ी न रहा। पाँच दिन तक तो वह मौजें मारता रहा और देखता रहो कि कैसा धोखा दिया उसने उस छोकरे को जो उसके सारे काम कर-करके पसीने में नहाए जा रहा है।

लेकिन दादा उतकिन ने यह चालबाजी भांप ली और आर्तियुश्का को अपने पास बुलाया। जूते का फर्मा उसके सिर पर मारते हुए उन्होंने कहा, तू बड़ा बदमाश है बे, लेकिन मैं तेरी सब बदमाशी निकाल दूँगा। फिर आर्तियुश्का को काम बता देने के बाद उन्होंने पाल को बुलाया और कहा – तू भी बेवकूफ ही है। और

उसका काम उसे बता दिया।

उस दिन के बाद से पाल और आर्तियुश्का के स्पष्ट और अलग-अलग काम नियत थे। पाल को तो तमाम गन्दा काम दिया गया था – वह सारा गन्दा काम जिसका मोची के काम से कोई ताल्लुक न था। आर्तियुश्का को एक पीपे पर बिठा दिया गया और धीरे-धीरे व्यापार के सब रहस्य उसे बता दिये गये। अब क्या कहना था, यह ओहदा मिलने पर तो वह पाल पर और भी रौब गांठने लगा। कभी-कभी वह अफ़सर की भाँति पाल पर चीख़ भी उठता था।

उसके बाद कई दिनों तक पाल सोचता रहा कि आख़िर स्थिति बदलने के लिए दादा उतकिन ने यह क्या और क्यों किया है। हर बात वैसी ही हुई जैसा कि अर्तियुश्का ने मंसूबा बाँधा था। फिर भी उतकिन दादा कहते थे कि वह सारा किया-कराया उन्हीं का है।

एरिफी की झोंपड़ी में जो शान्त और ध्यान-तत्पर जीवन उसने बिताया था उसके विपरीत जब वह इस ज़िन्दगी में दाख़िल हुआ यह ज़िन्दगी – जो गालियों और गानों से भरपूर थी और जिसमें तम्बाकू का धुआँ और चमड़े की गन्ध मिली हुई थी – पाल के लिए गला घोंटने वाली साबित हुई। निरन्तर कई दिनों तक अकेला रहने की या सिर्फ़ एरिफी के साथ रहने की उसे आदत हो गयी थी और इसीलिए अब चार कमकरों से छोटे से समुदाय में लगातार रहने की उसे बड़ी कठिनाई के बाद आदत पड़ी। सुबह से लेकर रात तक ये चारों व्यक्ति ख़ूब गाते थे, ख़ूब बातें करते थे, जिन्हें पाल न समझ पाता था। एक दूसरे पर जी भर के हँसते थे और बिना किसी कारण के ऐसे-ऐसे भयंकर और घोर अपशब्दों का खुल कर इस्तेमाल करते थे कि यदि एरिफी बाहर होता तो उनके एक-एक शब्द के लिए उन्हें जेलखाने में ठूँस देता। पाल अपने से ऊँचे रुतबे वालों को बड़ी खिन्नता और अहित की दृष्टि से देखा करता था। वह उनके स्वभाव को न समझ सका और इसीलिए उनसे हमेशा कुछ डरता रहता था। उसका इस प्रकार का रवैया देखकर वे उसकी और हँसी उड़ाते थे और कभी-कभी तो उसे इतना तंग करते और उकसाते थे कि गुस्से के मारे उसकी हरी आँखें लाल-सुर्ख हो जातीं थीं और वह हाथा-पाई के लिए तैयार हो जाता था। इससे वे और भी अधिक मजा लेते और अपनी छेड़-छाड़ भी बढ़ा देते थे। इससे पाल उनसे और ज्यादा दूर होता गया।

वे अक्सर उसके जन्म का क़िस्सा सुनाने लगते और दूसरी बातों के बाद घूम फिर कर फिर वहीं आ जाते। क़िस्सा कुछ यों शुरू होता : सुना तुमने बरस गुज़रे एक बार एक चारदीवारी के पास एक चेचक मुँह दाग बच्चा पड़ा हुआ

मिला। पाल के जन्म की वह दुखदायी कहानी उन लोगों ने अपने मालिक से सुन रखी थी। कभी–कभी वे कहानी में ऐसी नमक–मिर्च लगाते और इस दिलचस्प व मजेदार अन्दाज़ से उसे पेश करते कि पाल को यह महसूस होने लगता मानो वह किसी तमतमाते हुए गर्म तवे पर बैठ गया हो। इन्सानी ज़िन्दगी के निन्दाशील ब्यौरे में जब वे व्यक्ति जाते और बड़ा मजा ले–लेकर उसे सुनाते तो पाल को बड़ा गहरा धक्का महसूस होता। तब तक उन चीज़ों के बारे में न तो पाल ने कुछ सुना था और न ही उसे उनका पता था। जब वे उससे माता–पिता का ज़िक्र करते और हास्यपूर्ण ढंग से उनका हुलिया और पेशा बयान करते तो पाल का दिल भर आता, उसे महसूस होता उसके सीने में कोई खंजर चला रहा है, उसका दम घुटने लगता।

जब–जब इस क़िस्से की पुनरावृत्ति होती तब–जब ये ही विचार और भी भयानक रूप से उसके हृदय में आग बनते जाते। उसका चेचक भरा चेहरा ऐसा तमतमाता कि उसे देखने से डर लगता। जब वे दुष्ट लोग पेट भर के उसे चिढ़ा लेते, उसका कलेजा छलनी कर देते तो अन्ततः उसे अकेला छोड़ देते और भूल जाते। लेकिन वह जो सारी खिल्ली व उपहास के दौरान में ख़ामोश रहता था, अब अपना तमाम क्रोध व तिरस्कार एकत्रित कर लेता था।

वह दिन–ब–दिन और अधिक चुप रहने लगा। वह इतना क्रोध करता और गुर्राता था कि फलस्वरूप उसकी नाक के ऊपर एक गहरी, कत्थई रंग की झुर्री पड़ गयी थी। उस झुर्री, उसकी चुप्पी, झुके हुए सिर और क्रोधपूर्ण दृष्टि के कारण उसका नाम नन्हा बूढ़ा बाबा रख दिया गया था। इस नामकरण का शायद उसे बुरा नहीं लगा और इसीलिए जब कभी कोई कुछ कहता वह ख़ुशी से उसका जवाब दे देता था। हालांकि दिल में वह यही समझता था कि वह अभी बच्चा है। सभी कोई उसे जी का जंजाल और स्वार्थी समझते थे। आख़िरकार वह दिन भी आ गया जब वे उसे शक की नज़रों से देखने लगे मानो वह कोई अनहोनी कर दिखाने वाला हो।

एक बार निकन्दर को दूर की सूझी, कहने लगा इस नन्हें बूढ़े बाबा ने ज़रूर किसी न किसी आदमी का कत्ल किया है और अब किसी और की घात में है, या शायद यह बात हो कि इसकी उस असील सिमिनोवना से इश्कबाजी चल रही हो ज़ोरों से। पर कोल्का शिशकिन इस अनुमान से सहमत नहीं था। उसका ख़याल था कि नन्हे बूढ़े बाबा में घमण्ड बहुत आ गया है और अगर नियमित रूप से उसे मार लगाई जाय तो बहुत जल्दी वह गंजा हो जायगा। आर्तियुश्का ने भी एक नुस्खा सुझाने का साहस किया। उसने सुझाव दिया कि नन्हे बूढ़े की एड़ियाँ फाड़

कर जख्मों में सुअर के छोटे–छोटे कड़े बाल भर दिये जायें। फिर वह ऐसा खुश होगा कि दिन–रात नाचता फिरेगा।

उतकिन दादा ने यह सब सुनकर कहा :

"कुत्ते के बच्चो! छोकरा मेहनती है। मग़रूर है तो होने दे तुम सबकी तरह इधर–उधर भटकता नहीं फिरता है इसीलिए ना? वह काम चौकस करता है तो क्या बुराई है उसमें? वह गंभीर लड़का है और उसी प्रकार का उसका स्वभाव है।"

इसके बाद उन्होंने किसी रेजीमेण्टल कमाण्डर का क़िस्सा सुनाया जो पाल की तरह शान्त स्वभावी था और मछली की हड्डी चूसता हुआ मर गया था।

पहले हफ़्ते के आख़िर तक तो सभी कमकरों ने पाल के बारे में एक खास निन्दनीय दृष्टिकोण अपना लिया था। उसे इसका अफ़सोस ज़रूर हुआ पर वह जानता था कि उसका इसमें क्या बस है। दरअसल उसने तो सोचा कि इस बारे में वह कुछ कर ही नहीं सकता। जो कोई काम भी उसे दिया गया उसने बड़ी ख़ामोशी के साथ, दिल लगाकर और सन्तोषजनक ढंग से पूरा किया। फिर भी, कभी छटे–छमासे जब दूकान के कमकर योंही जिज्ञासा के लिए उसके साथ सहानुभूति भरी बातें करते तो वह दो–तीन शब्दों में उन्हें जवाब दे देता था। इस रुखेपन से उन्हें बड़ा असन्तोष होता और वे उसे छेड़ना और उसकी खिल्ली उड़ाना फिर जारी कर देते। उनकी इन हरकत से पाल उलझन में पड़ गया। आख़िरकार, जो भी नेक लफ्ज़ वे उसके लिए मुँह से निकालते वह उसे एक तरह का जाल समझता जिसमें वे उसे फंसाना चाहते थे, उसे ऐसा घेर लेना चाहते थे ताकि उस पर ख़ूब हँस सकें। तब वह मजबूर हो गया और उनकी हर बात और भी अधिक गुस्से और शक से देखने लगा।

यही ढर्रा कोई महीने–भर तक चलता रहा। पाल को धीरे–धीरे इस बात की आदत हो गयी कि वह अपने आपको, उन सबसे अलग समझने लगा क्योंकि उसके साथ एक बाहर वाले की हैसियत से ही व्यवहार किया जाता था। अन्त में उसके सन्देह फीके पड़ गये। दुकान भी उसके शान्त स्वभाव की आदी हो गयी। सारी कटुता अब फीकी पड़ गयी थी पर उससे स्थिति में कोई अन्तर नहीं आया।

पाल उसी ख़ामोशी के साथ काम करता रहा। उसके चांटे लगाये गये, पीटा गया, मार–मार के शरीर पर बद्धियाँ डाल दी गयीं और सिर में खराशें डाल दी गयीं। लेकिन इन तमाम बातों को वह ख़ुशी–ख़ुशी बर्दाश्त भी करता था। वह इसकी कल्पना ही नहीं कर सकता था कि इस धुआँदार, नारकीय सूराख से तथा

इन लबार लोगों से और भी किसी चीज़ की आशा की जा सकती है।

हर इतवार को कमीज की जेब में काली रोटी का एक टुकड़ा दुबकाये वह घूमने जाया करता था। तीन बार सारे शहर का चक्कर लगाने के बाद उसे कस्बे से कोई लगाव बाक़ी नहीं रहा था। इसके बाद वह बहुत जाता तो बस तोपोर्कोव के सुनसान बागीचे में हो आता था। बागीचे में हमाम के पीछे एक बड़ा सुन्दर गड्ढा था जिसका तला घने झाड़-झंकाड़ों से भरा हुआ था। पाल वहाँ जाकर लेट जाता और ऊपर को मुँह किये घण्टों आकाश की ओर टिकटिकी लगाये देखता रहता। हवा उसके इर्द-गिर्द छोटे-मोटे पेड़ों से अठखेलियाँ करती हुई बहती; जंगली झाड़ियों के आस-पास मक्खियाँ जमा होकर भिनभिनाती और कुछ काले कीड़े-मकोड़े इधर-उधर घूमते हुए नज़र आते। यही वह जगह थी जहाँ पाल ने धीरे-धीरे सोचना विचारना सीखा।

दुकान तो अब उसके लिए लगभग निरर्थक हो चली थी। वह उसके लिए कुछ ऐसी बेमानी पहेली बन गयी थी जिसे हल करने की उसे कोई इच्छा न थी। यहाँ गड्ढे में लेटे-लेटे दुकान की सारी दिनचर्या पूरे विवरण के साथ – सोमवार की सुबह से शनिवार की शाम तक – उसके सामने जुलूस की तरह आती और गुज़र जाती। एक बार इसी तरह जब वह ये तमाम बातें सोच रहा था उसके दिमाग़ में एक प्रश्न उठा : यह सब आख़िर ज़रूरी क्यों है? हम दूसरों के लिए बूट बनाकर ख़ुद नंगे पैर क्यों फिरते हैं? हम उतकिन दादा की तरह शराब क्यों पीते हैं? कोल्का की तरह हम क्यों जुआ खेलते हैं? हम 'लौंडियों का रोना क्यों रोते हैं' और फिर निराशा या खिन्नता से शिकायत भी करने लगते हैं – जैसा कि हर सोमवार को निकन्दर करता है? जब देखो किसी 'छोकरी' को पटाने के कारनामे की बात करेगा तो कभी-अपनी लड़ाइयों की, कभी उस 'छोकरे' से या पुलिस से दूर भागने की बात सुनायेगा। आख़िर हम अपनी मजदूरी के पैसे दारू पर क्यों बर्बाद करते हैं, क्यों हम अपने मालिक की तरह हमेशा वोडका की लत पर हँसने लगते हैं? क्यों – आख़िर क्यों?

पाल ने सोचा कि अगर एरिफी अच्छा होता तो वह ये सारी बातें उसे समझा देता। लेकिन एरिफी तो बेचारा अस्पताल में पड़ा हुआ था।

पाल दो बार अस्पताल जा चुका था। पहली बार तो उन्होंने उसे अन्दर आने ही नहीं दिया। दूसरी बार जब वह पहुँचा तो उन्होंने उससे कहा कि एरिफी अब कभी अच्छा नहीं हो सकता और पाल के वहाँ आने की ज़रूरत तो खैर थी ही नहीं हाँ उसका वहाँ फिर जाना ख़तरे से ख़ाली नहीं था। इस घोषणा को सुनकर उसे महान आश्चर्य हुआ। डाक्टर की ओर उसने घूर कर देखा तो पर वह प्रश्न

उससे न पूछ सका जो पूछना चाहता था।

वह लौटा और दु:खी हो वहाँ से चला आया।

उसने निश्चय किया कि मिखाइलो के यहाँ जाना बेकार है, कौन बैठा है वहाँ उसके जाने पर ख़ुश होने वाला?

दिन उसी रोती-झींकती रफ्तार से बीतते गये। पाल को उनसे कोई बैर न था पर साथ ही उन्हें बेहतर बनाने की इच्छा भी उसमें पैदा न हुई थी। उन दिनों के मन्द, रूखे विचार-मात्र उस पर बोझ बने हुए थे और कुछ समय बाद उन्होंने कुछ अवास्तविक स्वरूप धारण कर लिया था जिसका वास्तविक जीवन से दूर का भी वास्ता न था।

ज़िन्दगी जैसी कटनी होती है कटती जाती है और लोग जिस तरह जीते हैं जिए जाते हैं। जाहिर है होनहार यही होनी थी। तो फिर यह तो अच्छी बात होनी चाहिए थी। कभी-कभी ऐसे उद्‌गार उसके कानों में पड़े। "लानत है इस ज़िन्दगी पर!" या "यह तो कुत्ते से भी बदतर ज़िन्दगी है!" लेकिन इनका उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। अव्वल तो इसलिए कि उसने यह अक्सर सोमवार के दिनों को सुना था – और दूसरे इसलिए कि "कुत्ते की-सी ज़िन्दगी" उसके नजदीक कोई बुरी ज़िन्दगी नहीं थी। कुत्तों को करना-धरना तो कुछ होता नहीं है। वे तो स्वच्छन्द और सुखी होते हैं और लोग बहुधा उन्हें पालते हैं, उनसे दोस्ती करते हैं और उन्हें चूमते भी हैं।

शुरू-शुरू में उसने कमकरों और मालिक के बर्ताव और उनके उद्देश्यों को समझने की कोशिश की। लेकिन उन लोगों ने जो रवैया इख्तियार किया उससे उसकी सारी दिलचस्पी पर पानी फिर गया। वह रस्मी, निरुत्साह और मशीन की तरह जड़ बन गया। उसने अपने लिए कुछ विशेष तौर-तरीक़े निकाले और कुछ खास क़िस्म की ज़िन्दगी बसर करने का ढंग अपना लिया जिससे कि अपना काम वाला दिन बिता लेता था। वह कुछ-कुछ छोटी मशीन जैसा लगने लगा जिसमें हमेशा के लिए चाबी भर दी गयी है और जो तब तक चलती रहती है जब तक उस पर जंग न लग जाय या टूट न जाय।

दूसरे उसे मूर्ख समझते थे और वे सही भी थे। वास्तव में उसके धीमे, आलस्यपूर्ण चलने-फिरने में, उसके एक शब्द के जवाबों में, उन चीज़ों में जो उसके इर्द-गिर्द होती थी और जिनमें सब हिस्सा लेते थे उसको उनमें दिलचस्पी न लेने व उनसे आनन्दित न होने में मूर्खता ही तो थी वरना क्या वजह थी कि वह चुप रहता और सिर्फ़ काम से काम रखता।

हर इतवार को बगीचे में उस गढ़हे में लेटे-लेटे वह कल्पना-गगन में

विचरण करने लगता और पूछता : सूर्य नीले आकाश पर घूमते-घूमते थक क्यों नहीं जाता जैसा कि एक सिपाही जो हमेशा एक ही स्थान के इर्द-गिर्द घूमता-घूमता उससे भटक जाता है? पाल प्रायः सोचता कि यदि उसे मनमानी करने दी जाय तो वह सूर्य का रंग कुछ और कर दे या उसे उसी समय आकाश में निकाल दे जबकि चन्द्रमा निकला हुआ हो – कितनी मजेदार बात होगी?

दो वर्ष बीत गये, समय के साथ-साथ वह भी दुर्बल होता गया और उसकी चंचलता व फुर्ती भी ढीली पड़ती गयी। उसके चेहरे के चेचक के दाग पहले की निस्बत अब कुछ फैल गये।

इस दौरान में आर्तियुश्का ने सहायकों का ओहदा छोड़ दिया और सनद हासिल करके नौसिखुआ बन गया। उसने लाल-सिर वाले निकन्दर की जगह ले ली जो किसी छोटे-से अपराध में तीन महीने के लिए जेल में ठूँस दिया गया था। कोल्का शादी करके अपनी ख़ुद की दूकान खोलने का इरादा कर रहा था। उतकिन दादा अब बहुत पीने लगे थे और उनकी दमे की शिकायत ज़ोर पकड़ गयी थी जिससे उनके हाथ लरजने लगे थे और काम में बाधा होती थी। यह सब देखते हुए मालिक अब घर पर बैठकर पीने लगे थे, शराबखाने पर उनका जाना अब कम हो गया था। पर वह समझ गये थे कि अब बुड्ढे के लिए दूकान सँभालना मुश्किल हो गया है।

धीरे-धीरे पाल को मोची की कला के रहस्य बता दिये गये थे। आर्तियुश्का की बेदर्द निगरानी में उसने बूटों में सोल लगाना और एड़ियाँ लगाना सीख लिया था। वह इस काम में बड़ा चतुर और उपयोगी साबित हुआ। जिससे मालिक और दूकान पर काम करने वाले सभी लोग बड़े चिकित हुए और इससे उसके सम्मान में वृद्धि हुई।

कुछ दिन बाद शिशकिन दूकान छोड़कर चला गया। आर्तियुश्का की पगार बढ़ा दी गयी, पाल की तरक्की हुई और उसने आर्तियुश्का की जगह लेली। पाल की जगह एक नया लड़का रख लिया गया।

पाल अब तीन रुबल माहवार कमा रहा था। आर्तियुश्का ख़ुशी में झूमकर गाता था और उतकिन दादा अपने बुढ़ापे से मजबूर बड़बड़ाते रहते थे और पाल जूते गांठने में तल्लीन, सर्वथा शान्त रहता था। चूँकि ज्यादा काम नहीं रहा था इसलिए मालिक ने और आदमी नहीं रखा। जब काम ज्यादा होता तो वह ख़ुद उसमें लग जाता था। इससे उन्हें बड़ी ख़ुशी होती और वह ज्यादा पीते थे।

"क्या ज़िन्दगी है!" वह अक्सर मोम लगा डोरा चमड़े में घुसेड़ते हुए कहा करते। "काम कर लिया और शराब पी ली, क्या बस यही जीना है? यह तो

ज़िन्दगी का मज़ाक़ उड़ाना है बेटों! बोलो क्या खाने का वक्त नहीं हुआ? मिश्का! जा सिमिनोवना से कह कि मेज पर खाना परोसे और तू लपक कर कलाली पहुँच। ले – ये लेजा! अद्धा लइयो, हाँ काफ़ी है न दादा?"

दादा सन्तुष्ट हो अपनी मूँछे हिलाते, मालिक हँस पड़ता। मिश्का दस साल का बदमाश छोकरा जिसके काले घुंघराले बाल थे, तेज, चमकीली आँखें थीं, अद्धे के वास्ते दौड़ता और उछलता–कूदता, मुँह बनाता और जो भी मिलता उसे चिढ़ाता हुआ कलाली पर पहुँचता था।

दस वर्ष इस ज़िन्दगी में गुजारने के बाद पाल ख़ूब लम्बा–चौड़ा हो गया और भारी भरकम लगने लगा। कद में वह ऊँचा था कुछ झुका हुआ था पर सुडौल शरीर वाला। बाँहें चढ़ाने के बाद उसका खुला हुआ भाग कत्थई रंग का दीखता था जिसमें नीली नसें उभरी हुई दीख पड़ती थीं। जब वह झुका हुआ जूते गांठने बैठता तो उसयके नारियल जैसे बालों के नीचे एक मजबूत, लचकदार गर्दन दृष्टिगोचर होती थी। कुछ घनी दाढ़ी उसके चेचकदार चेहरे पर फूटने ही वाली थी और उसके ऊपरी होंठ पर तो पहले से ही एक छितरी छोटी मूँछ उग आयी थी। इस जमाने में भी उसने किसी से मेल–जोल नहीं रखा, न ही वह ख़ुशी में घूमता फिरा। अब भी पहले की अपेक्षा कहीं अधिक खिन्न और सशंक वह दिखायी देता था।

दूकान में तो लोग उसे नन्हा बूढ़ा बाबा कहा करते थे और ऐसे बुद्धू बगलोल की उसे उपाधि मिली हुई थी जो न कभी शराब पीने में रुचि लेता था और न ही उन आमोद–प्रमोद का साधन जुटाने वाली जगहों पर जाता था। कमकर उसकी इस आदत और घुन्नेपन के आदी हो चुके थे और अब उसे चिढ़ाना उन्होंने बन्द कर दिया था। कुछ इस कारण से कि वे उसके हृष्ट–पुष्ट शरीर से डरते थे और कुछ इसलिए कि वे जानते थे "इस काली कमरी पर कोई रंग नहीं चढ़ सकता।"

कोई यह भी न जानता था कि वह किस लिये जी रहा है क्योंकि वह वे चीज़ें करता ही न था जो दूसरे करते थे। शायद वह ख़ुद भी न जानता था वह क्यों ज़िन्दा हैं। वह इतना शुष्क, गंभीर और चुप रहता था कि न आँसू बहाने की उसमें क्षमता थी और न ही ठहाके मारने की सामर्थ्य।

मालिक अब पूरी तरह बूढ़ा और क्षीण हो चुका था। उसके सारे बाल सफ़ेद हो गये थे। एक बार उसने पाल से कहा : मैं कभी का मर चुका हूँ और तभी ज़िन्दा हो जाऊँगा जब फरिश्ते आकर कयामत का ऐलान करेंगे। और उस समय पता नहीं मैं चाहूँ या ना चाहूँ मुझे भी अपनी हड्डियाँ हिलानी पड़ेंगी : पर उस दिन तक मैं इसी तरह निश्चल इस दूकान में बैठा रहूँगा। यदि किसी ने इस दूकान

को तहस–नहस करके मुझे बाहर न निकाल दिया।

जाहिर है पाल चाहता था कि वह उन बातों का जवाब दे सके। लेकिन उसने मालिक की ओर देखकर एक फीकी मुस्कुराहट से ही अपना सन्तोष कर लिया।

"इसके लिए मै तुम्हारा बहुत आभारी हूँ!" मिरोन ने झुककर कहा और किसी बात का इन्तजार करने लगा। मिरोन पाल के काम से बहुत सन्तुष्ट था। मुमकिन है वह उससे प्यार भी करता हो। विशेषतः जब वह नशे में न होता था तो ऐसा ही जाहिर किया करता था। जब नशे में होता था तब भी वह दूसरों के बजाय पाल ही का अधिक ख़याल रखता था।

दो और भी थे, एक तो मिश्का आवारागर्द और चोर उन्नीस साल का लौंडा था और दूसरा था गूज जो चालीस साल का काना आदमी था, जिसकी गर्दन असाधारणतया लम्बी थी। गूज कहा करता था कि उसकी गर्दन इसलिए लम्बी हो गयी हैं क्योंकि बचपन में उसकी बड़ी सुरीली आवाज़ थी और वह साज के साथ गाया करता था। अब तो उसकी आवाज़ ख़त्म हो चुकी थी। हाँ, अगर उसकी भारी, कर्कश और चिरचिरी आवाज़ जिसमें वह अपने विचार ही प्रकट करता था, आवाज़ समझ लिया जाय तो बात दूसरी है।

अर्सा हुआ आर्तियुश्का ने मोची का काम छोड़ दिया था। पहले तो उसने छोटी–मोटी चीज़ों का व्यापार किया। फिर वह एक शराबखाने में जाकर बैरा हो गया, बाद में वह मिरोन के घर आया, नये–नये बने हुए जूतों का एक जोड़ा चुराया और गायब हो गया। इस बार वह शहर छोड़ कर ही चल दिया।

बूढ़ा उतकिन भी पहले से ही बेमियाद छुट्टी पर जा चुका था। एक दिन वह जूते–सी रहा था और उसने एक भारी साँस ली। उससे पहले दिन–ब–दिन उसकी साँस तेज चलने लगी थी। लेकिन किसी ने इसलिए उस पर ध्यान न दिया कि शायद वह खुमार में है। लेकिन आज उसकी साँस बड़ी तेज रफ्तार के साथ चल रही थी और अन्त में उसने हथौड़ा जिससे वह चमड़ा कूट रहा था, नीचे रख दिया और छत की ओर देखकर हवा से बातें करते हुए पूछा :

"पादरी को बुलाऊँ या नहीं?"

फिर भी किसी ने उस पर कान न दिये क्योंकि यह भी उसकी पुरानी आदत थी। एक बार पहले भी उतकिन ने यह सोचते हुए कि एक पादरी से काम नहीं चलेगा इस बात पर जिद की थी कि उसे एक बन्द गाड़ी में रखकर बूढ़े पादरी के पास ले जाया जाय। इस बार खाने के बाद वह बिस्तर पर इतनी देर तक लेटा रहा कि वे उसे जगाने के लिए गये। लेकिन उसके प्राण पखेरू उड़ चुके थे।

इसका पाल पर बहुत गहरा असर पड़ा। बड़ी देर तक वह हर एक आदमी को प्रश्नसूचक नज़रों से घूरता रहा लेकिन जाहिर में वह शब्दों में प्रकट न कर सका कि आख़िर उसे क्या चीज़ विचलित किये दे रही है इसलिए वह ख़ामोश रहा।

जब उतकिन को दफना दिया गया तो पाल बहुत दिन तक कब्रिस्तान के उस अँधियारे कोने में स्थित उसकी कब्र पर जाता रहा। कब्र जंगली झाड़ियों और एल्डर वृक्षों से ढँकी हुई थी जहाँ सूर्य का पहुँचना भी कठिन था। ज़मीन पर बैठे-बैठे, पाल पत्थर की दीवार में एक सूराख में से दूर फासले में देखता रहता था। वहाँ से उसे अपनी पुरानी झोंपड़ी, नदी, मैदान और जंगल साफ़ दिखायी देता था। वहाँ उसे अपना वह बचपन और वह शान्त स्वभावी मित्र एरिफी याद हो आया जो दो वर्ष अस्पताल में सड़ने के बाद मर गया था।

एरिफी की मृत्यु पर पाल को कोई विशेष रंज न हुआ, हुआ भी हो तो कम-से-कम उसके चेहरे से तो वह कभी जाहिर न हुआ।

रविवार को वह घूमता हुआ अब बड़ी दूर-दूर तक निकल जाता था। बागीचे के उस गढ़हे में जाना उसने अब छोड़ दिया था। कब्रिस्तान के अलावा अब वह शहर के उस पार पहाड़ों पर चला जाता था। वहाँ खड़े होकर सारा शहर उसे इतना साफ़ दिखायी देता था मानो उसकी हथेली पर रखा हुआ हो। वह बड़ी देर तक उसे निहारता रहता था। नीचे सड़कों पर चलते-फिरते लोगों के बड़े-बड़े झुण्डों में से आता हुआ फीका कोलाहल उसे सुनायी पड़ता था। उसे लोगों की जो सड़कों व गलियों में इधर से उधर छोटी-छोटी काली आकृतियाँ वहाँ से दिखायी देतीं।

वह बहुधा जंगल में भी जाता था। वह कोई एकान्त जगह ढूँढकर वहाँ पड़ा-पड़ा वृक्षों की कोमल खड़-खड़ाहट सुनता रहता था। कभी-कभी वह आस-पड़ोस के देहातों में भी चला जाता था जहाँ जाकर वह गली-कूचों में घूमकर हर चीज़ को बड़ी आरजू व जिज्ञासा के साथ देखा करता। कभी वह किसी शराबखाने में जाकर 'बियर' या शराब की बोतल लिये घण्टों बैठा लोगों की बातचीत सुनता रहता था। अक्सर शराबी अपना ध्यान उसी ओर लगाने लगते थे लेकिन उसके शान्त व उदासीन चेहरे का उन लोगों पर जो थोड़ी पिये हुए थे कुछ ऐसा प्रभाव पड़ता था कि वे दूसरों को उपदेश देते :

"श श श! उसे मत छेड़ो! वह शहरी है! भागो बे।" वे शराब में मस्त लोगों की ओर चीख़ते और फिर पाल की ओर सशंक व आक्रामक दृष्टि से घूरते।

वह अपना बिल अदा करता और चुपचाप वहाँ से चला आता। एक बार जब

वह किसी शराबखाने से निकल रहा था कि एक धीमी, चेतावनी की शक्ल में कुछ खुसर-पुसर उसके कानों पर पड़ी : "पुलिस का आदमी है!" उसके बाद उसने उस गांव में जाना छोड़ दिया।

उसने एक रूसी कोट, ढीला पतलून, रेशमी पट्टे से बँधी हुई कमीज, टोपी और बूट पहन रखे थे जिससे वह काफ़ी ऊँचा और बलवान लगता था। उसका गम्भीर चेहरा देखकर कोई नहीं कह सकता था कि वह मजदूर है। यह पता लगाना भी कठिन था कि वह समाज के किस वर्ग से सम्बन्ध रखता है।

वह कुछ इसी प्रकार का व्यक्ति था कि एक बार, जैसा कि उसके मालिक ने बताया, कुछ हुआ जिसने "उसे ऊपर उठाया और नीचे फेंक दिया।"

"ऐ बे, ओ कैदी!" मिरोन ने एक दिन सवेरे सेनका से कहा जो हाल ही में दूकान पर काम करने लगा था। "आज ज़रा समोवार माँज ले। वह तेरे मग से भी ज्यादा मैला हो गया है! और तू पाल आज उस लेफ्टिनेण्ट के बूट तैयार करदे, सुना?"

"अच्छा," पाल ने एड़ी ठोकते हुए कहा और अपने पास ही बैठे हुए मालिक की ओर भी नहीं देखा।

गूज जो अब चश्मा लगाने लगा था मशीन पर बैठा बूटों के टाप-सी रहा था। मशीन की घड़घड़ से सारा कमरा गूंज रहा था।

मई का महीना था, सूरज खिड़की में से होकर सारी दूकान में फैल जाता था। दुकान काजल, धुएँ के बादलों और चमड़े की गन्ध से भरपूर थी; बाहर गली में से क़दमों की चापें और गाड़ियों की गड़गड़ाहट अन्दर सुनायी दे रही थी।

मिरोन ने खिड़की में से देखा अनेकों इन्सानों के पैर चलते हुए दीख पड़े। उसने चमड़े का एक टुकड़ा उठाया, उसे जांचा, आँख झपकाई और अपनी भारी वृद्ध आवाज़ में कहा :

"बड़े दिलचस्प किरायेदार आकर रहने लगे हैं हमारे पड़ोस में। दो हैं वे। दोनों हैं बड़ी हँसमुख लड़कियाँ। ज़रा सम्हल के रहना रे लौंड़ों!"

इस ऐलान पर किसी ने रायजनी नहीं की। कुछ अवकाश के बाद बिना किसी बाधा के उसने फिर कहा।

"अरे हाँ, पाल तू तो उनसे जान-पहचान करले। कम-से-कम तुझे बोलना तो आ ही जायगा उनकी सोहबत से। क्योंकि तू तो भिक्षु बना फिरता है ना! या कहीं भगवान् के यहाँ जाने का तो इरादा नहीं कर रहा तू? इतना ज्यादा काम न किया कर, बेटे! भगवान के यहाँ मोचियों की पहुँच नहीं है, हाँ। उनको मोची की ज़रूरत भी नहीं है, सब कोई नंगे पैर जाते हैं वहाँ। वहाँ का मौसम भी बस

अजीब ही है। समझा हाँ!"

"मजेऽदार आ ऽइसक्रीम!" गली में से किसी फेरी वाले की आवाज़ आयी।

"तो फिर जा लगा अपना सिप्पा उनसे, क्या पाल ऐं? वे तुझे गरम करेंगी पिघलायेंगी और गढ़ कर नया इन्सान बना देंगी। सुलेमान ने कहा था : 'अपनी शक्ति को स्त्रियों के सुपुर्द न करो, और न ही अपने को विद्रोहियों के साथ मिलाओ" पर यह हम पर लागू नहीं होता। औरत है न, बड़े मजे की चीज़ होती है वह! जी हाँ! औरतों को ज़रा छूट दे दो और वे दुनिया को उलट फेर के रख दें। आय-हाय, क्या नाच नाचेंगी वे! सबसे पहले तो जितनी शादी-शुदा औरतें हैं वे अपने पतियों को छोड़ देंगी। और जो लड़कियाँ होंगी – वे सारे मर्दों को एक-दो-तीन करके फांसी पर चढ़ा देंगी। कैसा ज़ोरदार गड़बड़-घोटाला होगा फिर!

उस दिन मिरोन बड़े रोब में था। एक क्षण भी रुके बग़ैर उसने यह बड़ा 'क़िस्सा गढ़ डाला'। पाकबाज गूज उसकी कल्पना जन्य कथा के लिए 'गढ़ना' शब्द ही प्रयुक्त करता था। उसने अपना सीने का काम खत्म किया और बूट के टाप को बड़ी ग़ौर से देखने लगा और "परम पिता परमेश्वर" नामक गीत को ज़ोरदार आवाज़ में गाने का प्रयत्न करने लगा। गीत के बजाय सांप की-सी फुंकार सुनायी पड़ी और गूज ने अपनी लम्बी गर्दन मसलते हुए ज़ोर से खंखारा और इधर-उधर ज़ोर से थूका।

"इतना लाल क्यों हैं तू, पाल?" सहसा अपने कमकर को देखकर मिरोन ने पूछा। "तेरी तो सारी पेशानी पसीने में तर-बतर है!"

"मुझे नहीं मालूम!" पाल ने रूखाई से जवाब दिया और हाथ से पसीना पोंछकर पेशानी को और भी गन्दा करने लगा।

"अब यह भभूती मत मल अपने माथे पर! इससे कोई फायदा नहीं होगा तुझे?" मालिक ने तीव्र स्वर में कहा। "तेरी आँखें कुछ उदास लग रही है, तबियत तो ठीक है ना तेरी?"

"जी हाँ। ठीक नहीं है।...मैं यहाँ अब नहीं..."

"अरे, पर तू वहाँ क्यों बैठा हुआ है?" मालिक ने पूछा। "छोड़ दे काम। कोई और सी देगा बूट। जा और ज़रा लेट जा। आराम करले!"

पाल उठा और शराबी की तरह झूमता हुआ दरवाज़े तक गया।

"मैं नीचे तहखाने में लेटने जा रहा हूँ ताकि अगर कुछ हो जाय तो..." और वाक्य पूरा किये बिना ही वह चला गया।

आँगन में से गुज़रते हुए उसके पैर काँप रहे थे। उसका सिर भारी हो गया था और उसे चक्कर आने लगे थे। उसकी आँखों के सामने लाल और हरे चक्कर घूम रहे थे।

तहखाने का वायुमण्डल नम और भारी था। मालूम होता था सख्त भाप से वह पूरी तरह भर गया था! पाल ने अपनी कमीज के बटन खोले और भारी एप्रन उतार फेंका जो आटे के पुराने टाट के बोरों का बनाया हुआ था। फिर वह घास के ढेर पर जहाँ कुछ नम तख्ते पड़े हुए थे अपनी बाहों पर गर्दन रखे लेट गया।

तहखाने में अन्धेरा था। दरवाज़े की दरारों में से छन-छनकर सूर्य का प्रकाश अन्दर दाख़िल होता, अन्धकार को चीरकर जगमगाहट भरे कुछ फीते बनाता जो दिखायी देते और फिर गायब हो जाते थे। ऊपरी मंजिल पर किसी के चलने की आहट उसने सुनी। उसका सिर अजीब अन्दाज़ से भन्नाने लगा। उसकी कनपटी में जो पीड़ा हुई उससे उसके होश फाख्ता होने लगे और उसकी धमनियों में ख़ून तेज रफ्तारी और ज्यादा शक्ति के साथ खौलने लगा। साँस लेने में दुश्वारी होने लगी। उसके शरीर से नम, गरम ख़ून की गन्ध आने लगी।

लाल और हरे धब्बे उसकी नज़रों के सामने नाचने लगे। वे कभी तो बिल्ली की आँखों की भाँति छोटे और चमकदार नज़र आते और कभी बड़े-बड़े और अन्धकारपूर्ण जैसे मोरक्को चमड़े के टुकड़े कहीं ऊपर से हल्के-हल्के हवा में घूमते हुए गिरते हों जैसा कि पतझड़ में पेड़ों से सूखे पत्ते गिरते हैं।

पाल अपनी आँखें खोले लेटा रहा, उसने करवट लेने की भी कोई कोशिश नहीं की। उसे अन्देशा यह था कि अगर वह हिला-डुला तो एकदम गहरी खोह में गिर पड़ेगा और वहाँ गरम दमघोट भाप में तैरता रहेगा। उसके आस-पास और उसे सब कुछ हिलता और घूमता हुआ दिखायी दिया। उसके कानों में देर तक वही ऊबा देने वाले चक्कर गूंजते रहे।

इसी प्रकार आहिस्ता-आहिस्ता कई मिनट गुज़र गये। फिर यकायक दरवाज़े के खुलते ही सूर्य का प्रकाश भी घुस आया। सेनका की परिचित आवाज़ बड़ी स्पष्ट गूंजने लगी :

"खाना खाने आ रहे हो, पाल?"

"मुझे कोई खाना-वाना नहीं चाहिए," पाल ने उत्तर दिया। उसे यह अजीब बात लगी कि अभी दोपहर के खाने का ही वक़्त हुआ है। उसकी अपनी आवज में भी कुछ अजनबियत थी। आख़िर चह इतनी मन्द, रुखी, नीरस और बोझिल क्यों लग रही थी? उसे तो दुकान छोड़े भी काफ़ी देर हो चुकी थी।

तहखाने में फिर अन्धेरा छा गया था। रोशनी उससे कहीं दूर भाग गयी थी।

एक बार फिर एक–एक क्षण पहाड़ की मानिन्द भारी कटने लगा। उसके कानों में बोझिल और ऊब लाने वाली आवाज़ से थकान होने लगी थी। पाल को लगा मानो कोई तर व गरम चीज़ उसे निगल रही हैं। वह मूर्छित हो गया, उसका मुँह प्यास के मारे सूख गया और उसे साँस लेने में कठिनाई महसूस होने लगी...

"कोई मूर्ख लेटा जान पड़ता है यहाँ।"

"शायद तहखाने वाला मोची होगा। शराबी।"

"पड़ा रहने दो फिर उसे।"

पाल ने आँखें खोलीं और बड़ी निर्बलता के साथ दरवाज़े की ओर अपना मुँह किया।

अब तहखाने में रोशनी हो गयी थी। दो स्त्रियाँ दरवाज़े पर खड़ी थीं। एक तो तहखाने वाला दरवाज़ा खोल रही थी और दूसरी उसके पास खड़ी थी। उसने एक हाथ में दूध का जग और दूसरे में एक पुड़ा था। उसकी बड़ी–बड़ी नीली आँखें उस कोने पर जमी थीं जहाँ पाल लेटा था और वह अपने मित्र से बड़ी स्पष्ट, मृदुल और कण्ठीली आवाज़ से बातें कर रही थी :

"ज़रा फुर्ती करो, कातिरिना!"

"मुझे गड़बड़ाओ मत! तुम भी ज़रा इसे उठाओ ना!" कातिरिना ने नम, भारी दरवाज़ा धकेलते हुए उसे फटकारा। उसकी आवाज़ मन्द और कर्कश थी।

"देखो तो ज़रा, यह मोची मेरी तरफ कैसे घूर रहा है! ओह!" पहली लड़की ने कहा। "जैसे मुझे खा ही तो जायगा।"

"दूध पिलाओ कमबख्त को।"

"फालतू नहीं इतना दूध मेरे पास!"

पाल अपनी चमकीली, जिज्ञासाभरी नज़रों से उन्हें देखता रहा। वे दोनों कोहरे से भरे वातावरण में अदृश्य होते हुए दीख पड़े और इतने दूर निकल गये कि उसने कर्कश स्वर में उनसे दीनतापूर्वक कहा, "मुझे कुछ पीने को दो", उसने सोचा उन्होंने सुना नहीं।

लेकिन उन्होंने सुन लिया था। जिसकी नीली आँखें थीं और हाथ में दूध का जग था उसने अपना पुड़ा ज़मीन पर फेंका और दूसरे हाथ से अपनी घघरी उठाये हुए कोने तक आयी। और दूसरी तहखाने के जीने पर खड़ी दिलचस्पी के साथ उसे देखने लगी।

"शराब पीना भी कोई हँसी–मज़ाक़ नहीं है, कात्या। थोड़ा बर्फ फेंकना तो इधर। मैं उस पर दूध नष्ट नहीं करना चाहती।"

पाल ने यह सुन लिया और फिर उसी कर्कश स्वर में कहा :

"जल्दी करो, कुछ पीने को दो..."

उसने अपने ऊपर झुकी स्त्री की नीली आँखें देखीं जो उसे घूर रही थीं। "कात्या, इसके तो चेहरे पर ढेरों चेचक के दाग हैं! उफफऽ! अरे यह शराबी नहीं है! शराब की कोई बू ही नहीं आती इसमें से। कात्या, यह आदमी तो बेचारा बीमार है, खुदा की कसम हाँ, हाँ बीमार है! इसका सारा शरीर तप रहा है, साँस ऐसी निकल रही है मानो एंजिन भाप छोड़ रहा हो! ओह, खुदा समझे इन शैतानों को! कमबख्तों ने इस रोगी को लाकर यहाँ फेंक दिया है, तहखाने में। सूअर कहीं के। लो पियो, पियो जी भरके! कब से पड़े हो यहाँ? एं? क्या तुम्हारा कोई घर-बार नहीं है? तुम्हारे कुनबे वालों ने तुम्हें किसी अस्पताल में क्यों दाख़िल नहीं करवा दिया?"

पाल के पास ऊँकड़ू बैठते हुए उसने दूध का जग उसके मुँह से लगा दिया। उसने लरजते हाथों से जग थामा और बड़ी जल्दी-जल्दी दूध डकारने लगा। लड़की ने उस पर प्रश्नों की झड़ी लगा दी और यह भूल गयी कि वह बेचारा दूध पीते-पीते बातें कैसे कर सकता है।

"शुक्रिया!" उसने अन्त में जग हटाकर देते हुए कहा। उसका सिर फिर उस बोरे पर लुढ़क गया।

"इस ठण्डी जगह पर तुम्हें कौन लाया? मालिक? वह तो मुआँ वैसे ही कुत्ता लगता है!" उसने क्रोध से कहा और हाथ से उसकी पेशानी हुई।

"मैं खुद ही..." पाल ने कहना शुरू किया, उसकी नज़रें लड़की के चेहरे पर गड़ी हुई थीं।

"अच्छा, बड़े तेज हो तुम एं," बड़े चालाक हो! क्या बहुत दिनों से पड़े हो यहाँ?

"नहीं आज ही आया हूँ।..."

"हुऽम! शायद एक हफ्ते-भर से इससे लड़ रहे थे पर आज इसने धर दबाया तुम्हें। हाँ, हाँ! क्या करें अब हम? कातिरिना! क्या करें इसका अब?"

"तुम्हारा क्या ख़याल है? बर्फ पर लिटा दें इसे? या तुम उसे अपने घर ले जाना चाहती हो? और अगर वहाँ वह टर्र-टर्र करने लगा तो? बेवकूफ कहीं की! चल, चल उठ!"

पाल ने बड़ी कठिनाई से अपना सिर घुमाया और दूसरी स्त्री की ओर देखा जो अभी तक तलघर के जीने पर खड़ी थी। उसकी नज़रें उदासीनता और जिज्ञासा का सुन्दर मिश्रण प्रस्तुत कर रही थीं। उसने जो मज़ाक़ उड़ाते हुए शब्द कहे थे उन्हें सुन कर और भी दुःख हुआ। साँस लेते हुए वह फिर उसी लड़की की ओर

आकृष्ट हुआ जो उसके समीप खड़ी थी।

लड़की ने अपनी सहेली की बात का जवाब न दिया। पहले तो उसकी त्योंरियाँ चढ़ गयीं पर अगले ही क्षण वह शान्त हो गयी।

"तुम यहीं लेटे रहो!" उसने पाल की ओर झुक कर निर्णय करते हुए कहा। "यहीं लेटे रहो। अभी ज़रा देर में मैं सिरका, वोडका[6] और मिर्च लेकर आती हूँ। सुना तुमने?"

वह फ़ौरन उठी और अदृश्य हो गयी।

दोनों स्त्रियाँ दरवाज़ा खुला छोड़ कर चल दीं। उन दोनों में जो धमाकेदार बहस हुई उसकी आवाज़ पाल के कानों तक पहुँची।

उसने सोचा होगा कि जो कुछ हुआ वह मूर्छा–मात्र थी। लेकिन दूध का नरम स्वाद अभी भी उसके मुँह में बाक़ी था। और कमीज पर जो दूध गिरा पड़ा था उसका भी उसे अहसास हुआ। और उसे अब भी वह नर्म व नाजुक हाथ महसूस हो रहा था जिसने उसके गालों और पेशानी को स्पर्श किया था। वह उसकी वापसी की प्रतीक्षा करता रहा। वह एक ऐसी विचित्र जिज्ञासा में घिर गया था जिसने उसकी बीमारी के सारे अहसास को ढँक लिया था। वह बड़ी बेचैनी के साथ यह जानना चाहता था कि अब क्या होने वाला है। इससे पहले कभी उसे होनहार के बारे में इतनी प्रबल इच्छा नहीं हुई थी। करवट बदलते हुए, दरवाज़े की ओर पीठ करके उसने अपनी प्रज्ज्वलित, रोग ग्रस्त आँखें आँगन में बिछा दीं।

वह जल्दी ही लौट आयी। उसके एक हाथ में कप से ढँकी हुई एक बोतल थी और दूसरे में एक गीला चिथड़ा था।

"लो, पियो इसे," उसने कहा लेकिन जब पाल ने हाथ बढ़ाया तो उसे न देकर उसने स्वयं ही दवा उसके मुँह में उँढ़ेल दी। ज्योंही वह तरल पदार्थ उसके हलक में पहुँचा उसका सारा मुँह और गला जल गया और धसका लगा।

"हूँ, यह तो अच्छी दवा है," लड़की ने विजयोल्लास से कहा और फ़ौरन सिरके में डूबा हुआ वह ठण्डा चिथड़ा उसके माथे पर लगा दिया। बड़ी आज्ञाकारिता और ख़ामोशी से पाल ने उसे ऐसा करने दिया, हाँ उसकी आँखें निरन्तर लड़की पर जमी रहीं।

"हाँ, तो अब हम बातें कर सकते हैं। तुम्हारा मालिक तो बड़ा ही लीचड़ और कंजूस है! वह तो मुआँ क्या करेगा, जहन्नुम रसीद हो उसे; हाँ, मैं ही कल तुम्हें अस्पताल ले चलूँगी। तुम्हारा जी मचला रहा होगा ना, ऐं? ज़रा ठहरो – अभी ठीक हो जाओगे। तुम्हें तो बात करने में भी पीड़ा होती होगी, है ना?"

"नहीं, नहीं। ठीक है। मैं कर सकता हूँ बातें।"

"नहीं, नहीं। तुम चुपके पड़े रहो। डाक्टर हमेशा रोगियों को बातचीत न करने की हिदायत देते हैं – तुम चुपचाप लेटे रहो और आराम करो।"

अब जाहिरा रूप में बातें करने को जब कुछ न रहा तो उसने अपने इर्द-गिर्द इस तरह टटोला मानो वह यकायक दिल में कुछ तकलीफ महसूस कर रही हो।

पाल उसे घूरता रहा और सोचता रहा कि आख़िर यह सब क्यों मेरे लिए किये जा रही है? मैं तो उसके लिए बिल्कुल अजनबी हूँ। ओहो, हो-न-हो यह वही किरायेदार होगी जिसका मालिक ज़िक्र कर रहा था। क्या नाम लिया था उसने? नहीं, नहीं नाम का तो उसे पता ही न था।

"क्या – नाम – है तुम्हारा?" उसने नम्रता से पूछा।

"मेरा? नतालिया क्रिब्तासोवा। क्यों?"

"यों ही।"

"ओह!" उसने भी यों ही कह दिया और पाल को सिर से पैर तक देखने के बाद वह अपने आप से गुनगुनाने लगी।

"और तुम्हारा?" उसने सहसा अपना गाना रोक कर पूछा।

"पाल।"

"क्या उम्र है तुम्हारी?"

"बीस साल।"

"इसका मतलब है तुम तो जल्दी ही फौज में चले जाओगे!" उसने निष्कर्ष निकाला और फिर चुप हो गयी। कुछ देर बाद फिर बोली, "तुम्हारा कोई रिश्तेदार नहीं है क्या?"

"नहीं मैं तो बिन माँ-बाप का बेटा हूँ।" पाल ने धीरे से कहा। उसके सिर में फिर ज़ोर का दर्द होने लगा। प्यास फिर जाग उठी।

"अरे बाऽप रे!" वह और समीप गयी। उसने अपनी नीली आँखों से, चकित हो, उसे जांचा मानो वह यह न समझ पाई हो कि इतना बड़ा हट्टा-कट्टा आदमी बिना माँ-बाप का कैसे हो सकता है।

"और पिलाओ!"

"यह लो, यह लो! उसने जल्दी से आगे बढ़ाते हुए कहा। कप को फुर्ती के साथ दूध से भरते हुए उसने अपना हाथ उसके सिर के नीचे रखा और उसे ऊपर को उठाकर आहिस्ता से कहा :

"अल्हा हो शाफी अल्लाह हो काफ़ी!"

वह दूध पी गया। घूंटों के दौरान में उसके चेहरे को देखा जो पहले निश्चिन्त था पर अब चिन्तित और उदास था। इस चिन्ता और उदासी के भाव से पाल

परिचित था और उसे समझता भी था। उसे देखकर उसमें लड़की से बात करने की प्रेरणा जागृत हुई।

ज्यों ही उसने दूध ख़त्म किया ज़ोर से और एकदम बोल पड़ा : "कहो, तुम यह सब क्यों कर रही हो?"

"क्या कर रही हूँ, मैं? वह असमंजस में पड़ गयी और प्रश्नसूचक नेत्रों से पाल को देखने लगी।

"मेरे लिए यह सब...क्यों। तुम क्या – कुछ मुझे दे चुकी हो...मेरी सुश्रुषा कर रही हो...और बाक़ी सब कुछ, सब तुम ही कर रही हो। पर क्यों?" पाल कह तो गया पर बाद में डर गया जब उसने देखा कि लड़की रंजिदा हो वहाँ से हट गयी। उसकी भावनाओं को इन प्रश्नों से ठेस पहुँची थी।

मैं नहीं जानती क्यों बस यों ही! तुम इन्सान हो, हो ना? या नहीं हो? तुम भी बड़े मसखरे हो वाकई!" और यह कहकर उसने अपने कन्धे सिकोड़े।

पाल ने कुछ अनिश्चय से अपना सिर हिलाया। दीवार की ओर मुँह करके वह चुप हो गया। उसके मस्तिष्क में विचित्र विचार घूमने लगे। ज़िन्दगी का यह पहला मौका था जब किसी ने उस पर दया दिखायी थी। और वह भी किसने? उन्हीं स्त्रियों में से एक ने जिनसे उसे घृणा थी, जिनसे वह डरता था और उसे एरिफी का दृष्टिकोण याद हो आया। उनमें से एक के बारे में वे दूकान पर बातचीत कर चुके थे। कुछ दिन से वह चोरी-छिपे स्त्रियों के बारे में बहुत कुछ सोच रहा था पर यह सब वह अपने आपसे भी छिपाता था, और इस प्रकार के विचारों के लिए उसे अपने आप पर क्रोध भी आता था।

स्त्री – वह अनन्त शत्रु हैं पुरुष की जो किसी खास और उचित क्षण की प्रतीक्षा करती रहती है कि उसे गुलाम बनाए और उसका सारा ख़ून चूस ले। यही राय थी जो वह बार-बार सुन चुका था। कभी किसी सुन्दर युवती को देखकर कायरता से और फुर्ती से गली में चलने के बाद पाल उसकी ओर देखता और सोचता यह स्त्री हमारी दुश्मन कैसे हो सकती है जब इतना छोटी-सी बच्ची तो है। उसकी इस भयपूर्ण जिज्ञासा का, जिसे वह विवश हो उस वक़्त जाहिर कर देता था जब स्त्रियों की बातें होती हों, परिणाम यह हुआ कि मालिक और दूसरे कमकरों ने उसकी खिल्ली उड़ानी शुरू कर दी। प्राय: वे ऐसा करते कि अपनी कामुकता पर स्वयं ही पश्चाताप प्रकट करते हुए वे झूठमूठ अपने को गालियाँ लेते और पाल की शुद्धि और पवित्रता पर उसकी प्रशंसा करने लगते। आम तौर पर तो वह समझ गया कि स्त्री जीवन में एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं लेकिन पता नहीं कैसे वह उन दो विरोधी निर्णयों को जोड़ नहीं पाता

था – एक तो यह कि औरत अहम रोल अदा करती है और जिसका उसे व्यक्तिगत अनुभव भी था और दूसरा यह कि स्त्री पुरुष की शत्रु होती है।

एक बार मालिक ने उसे लेक्चर पिलाया। "औरतों से ज़रा सम्हल के रहना, पाल। औरत के फन्दे में न आ जाना। तब तो तेरा काम ठीक चलेगा। किसी से भी पूछ ले तू, यही कहेगा कि दुनिया में सब से बड़ी बेड़ी या हथकड़ी है तो वह औरत। वे बड़ी लालची होती हैं। चाहती हैं रहें ठाठ से, काम कुछ भी न करना पड़े। मेरी बात मानो, मुझे बावन बरस हो गये इस दुनिया में आये हुए और दो बार शादी भी की है मैंने।"

फिर यहाँ भी वही भयंकर, रहस्यमयी स्त्री थी। वह पहली स्त्री थी जिसने पाल में यह चेतना पैदा की कि वह जो इतना मनहूस और दूसरों से अलग दीखने वाला लड़का है, पाल को उसकी सेवा-सुश्रुषा का पात्र है। वह उसके करीब आयी और उसकी बगल में बैठ गयी – उस व्यक्ति की बगल में जो इस असार संसार में अकेला था, जिसका यहाँ कोई ऐसा व्यक्ति न था जिसे वह मित्र कह सकता।

"क्या कर रही है वह अब?" पाल ने सोचा और बड़ी आहिस्तगी से सिर घुमाया ताकि उसे देख सके।

वह फर्श पर बैठी बड़ी विचारशील हो अधखुले दरवाज़े में से आँगन की ओर देख रही थी। उसका चेहरा बड़ा दयालु और सुन्दर था, नर्म-नाजुक था; उसकी नीली, विनीत आँखें गुलाबी और भरे-पूरे होंठ यह सब स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहा था।

"तुम्हारी इस मेहरबानी का शुक्रिया," – पाल ने अपना हाथ अनजाने उसकी ओर बढ़ाते हुए धीरे से कहा।

वह काँपने लगी और कनखियों से उस ओर देखने लगी पर उसने उसका हाथ अपने हाथ में न लिया।

"मैं तो समझी तुम सो गये होगे। देखो तो, तुम्हें यहाँ से जाना पड़ेगा। फ़ौरन यहाँ से निकलना पड़ेगा। उठो, चलो चलें अब।"

पाल ने अपना हाथ नहीं लौटाया और ज़ोर देते हुए दोहराया :

"इतनी मेहरबानी का शुक्रिया!"

"अरे बाप रे! तुमने फिर वही शुरू कर दिया। अरे तो उससे क्या होता है? कौनसी मेहरबानी? बाहर गर्मी ज्यादा है इसलिऐ मैं ज़रा अन्दर आन बैठी हूँ इसमें मेहरबानी काहे की। चलो उठो, खड़े होओ!"

लड़की का क्रोध-सा आ गया। उसे सहारा देकर उठाते हुए उसने अपना

मुँह फेर लिया मानो उससे आँख न मिलाना चाहती हो।

पाल उठा, ख़ून दौड़कर उसके सिर में जमा हो गया। वही मन्द शोरगुल उसे फिर सुनायी दिया।

"मुश्किल है, मुझसे चला..." उसने खुसरपुसर की, उसके पैर अब काँप रहे थे। उसे ऐसा महसूस हुआ मानो वह दर्द उसकी हड्डियाँ चीरे दे रहा हो।

"ठीक है जी। किसी-न-किसी तरह तुम्हें खड़ा तो होना ही पड़ेगा। यहाँ तो तुम रह नहीं सकते।" उसके सहारे वह आँगन के कुहरे भरे वातावरण में विलीन होता दिखायी दिया! कुहरे में से उसे दूकान की दहलीज पर खड़े हुए मालिक और गूज की धूर्ततापूर्ण हँसी दीख पड़ी।

"मैं और आगे नहीं जा सकता...!" उसने कर्कश स्वर में कहा और उसे लगा मानो वह किसी बिना धरातल के गढ़हे में धकेला जा रहा है।

## 6

**ज़ि**न्दगी में पहली बार पाल को यह ज्ञात हुआ कि अस्पताल मात्र इमारत नहीं, कुछ और भी है। जी मचलाने वाली पीली दीवारें, दवाओं व माजूनों की बदबू, थके हुए तुनक-मिजाज कर्मचारी, डाक्टरों व उनके सहायकों के उदासीन चेहरे, रोगियों की कराहें, बेहोशी और सनकें, सफ़ेद लबादे, रात की टोपियाँ, पत्थर के फर्श पर घिसती हुई स्लीपरों की सरसराहट – ये सब चीज़ें एक अत्यन्त निराशाजनक वातावरण प्रस्तुत कर रही थीं जिसमें यदि कुछ था तो निर्जीवता और पीड़ा की भारी, निरन्तर कराहें व रोने-पीटने की आवाज़ें...।

पाल ग्यारह दिन तक बेहोश रहा। अभी पाँच ही रोज हुए कि वह संकट दूर हुआ है। अब उसकी हालत सुधरने लगी थी। अर्दली ने उसे बताया कि तुम्हारा मालिक एक बार तुम्हें देखने आया था, गूज दो बार आया था, "तुम्हारी बहन" दो बार आयी – एक बार किसी दोस्त के साथ और एक बार अकेले ही। वह थोड़ी शकर, चाय, मुरब्बा और दूसरी छोटी-मोटी चीज़ें एक थैले में रख गयी है।

जब अर्दली ने बहन का ज़िक्र किया तो पाल को ताज्जुब से मुँह बन्द हो गया। पर उसे एकदम ख़याल हुआ कि अर्दली का मतलब नतालिया से है। कुछ भी हो इस ख़याल के आते ही पाल की बाछें खिल गयीं।

"क्या लड़की है वह भी!" उसने बुदबुदाते हुए कहा। उससे मिललें तो कितना आनन्द आये।

लेकिन काले बुखार के मरीजों को तीमारदार बुलाने की इजाजत नहीं थी। जब तक उसे वार्ड नं. 5 में न भेज दिया जाय तब तक तो खैर इजाजत मिल ही नहीं सकती।

"सिवाय डाक्टरों व नौकरों के और यहाँ कोई नहीं आ सकता," अर्दली ने समझाते हुए कहा। हालांकि यह सब कुछ रौब के साथ कहा गया था लेकिन पाल के पास तो एक ही सवाल था पूछने के लिए : कितने दिन में मुन्तकिल करोगे वार्ड नं. 5 में?

जवाब मिला यह आपकी नाक की हालत पर मुनहसिर है। "अभी तो आपकी नाक पीली और सूखी है पर कुछ ही दिन में यह सूज कर लाल हो जायगी। जब ऐसा हो जायगा तो आपको वार्ड नं. 5 में भेज दिया जायगा। काले बुखार के मरीजों को उनकी नाक देख कर ही मुन्तकिल किया जाता है और ऐसा ही कोई सात बरस से करते भी आये हैं हम लोग। बस हमारा तो यही कार्यक्रम बन गया है।"

अर्दली भी था बड़ा बातूनी। चूँकि नौ मरीजों में सिर्फ़ पाल ही उसकी बातें सुन और समझ सकता था दूसरे किसी की हालत ही ऐसी न थी इसलिए पाल को ही बेचारे को यह सारा बोझ सँभालना पड़ता था। अर्दली एक नाटा-सा, पतला-दुबला, सुर्ख सिर वाला आदमी था जिसकी आँखें सफ़ेद और उदास थीं। जब भी उसे फुर्सत होती वह पाल के पलंग पर आन बैठता और बक-बक शुरू कर देता :

"क्या हाल है, बेहतर है न पहले से? अच्छा, तो यानी सब ठीक चल रहा है। बस तो फिर गये आप नं. 5 में। अच्छी बात है आप बीमार हो गये। काला बुखार बड़ी ज़ोरदार बीमारी है – जिस्म का सारा मैल और गन्दगी दूर कर देता है। इन्सान पाप करते-करते बड़ा घोर बदमाश बन जाता है और उसके शरीर में पाप का कूड़ा जमा होता जाता है। लेकिन एक बार उसे काला बुखार आया – कि बस सारा कूड़ा बह गया। यह क्योंकर होता है, जानते हैं? यह होता है बेहोशी की वजह से। आपने देखा होगा कि बेहोशी की हालत में आपकी रूह जिस्म को छोड़ देती हैं और घूमती-फिरती है, कष्ट भोगती है और अपने पापों का प्रायश्चित करती है। जी हाँ, यही तो है! अब आप शायद कह बैठें कि काले बुखार के मरीज मर भी जाते हैं, ठीक है हाँ, ऐसा भी होता है। यह तो इन्सान की तकदीर है। वायबिल में भी यही आया है। जानते हैं आप, लोग सिर्फ़ काले बुखार से ही नहीं मरते। वह तो यों ही होता है कि जिस्म का जो साज-सामान होता है वह इस्तेमाल होते-होते कमज़ोर हो जाता है, घिस जाता है और रुह के लिए नयी पोशाक दरकार

होती है। यानी वह किसी और खोल में जाना चाहती है और इन्सान के लिए एक ही खोल होती है – धरती! बस यही एक खोल है। क्या आपका कोई रिश्तेदार मर चुका है? नहीं? आह! मेरे कुनबे के नौ आदमी मर चुके हैं। एक तो धरती ने ज़िन्दा निगल लिया। वह नलों की मरम्मत किया करता था। एक बार वह नल जमा रहा था और ज़मीन फटी – धड़ाम से वह उसके अन्दर! बस निकोलाई ख़तम ! ज़मीन उसे निगल गयी। उन्होंने उसे खोद निकाला पर वह ख़त्म हो चुका था! ज़मीन आपको हमेशा घसीट लेती है, उससे आप बच नहीं सकते, भाग नहीं सकते। भाग कर अगर आप नदी में भी कूद पड़ें तो भी जाकर धरातल से ही टकरायेंगे। आग में कूद पड़िये आप जल कर खाक हो जायेंगे। धरती तो अपने आप लोगों को ढूँढ लेती है। बहुत जल्दी ही वह मुझे भी पुकार लेगी। अनासिम, दोस्त आ जाओ कब्र के अन्दर! और जाहिर है मुझे वहाँ जाकर लेटना पड़ेगा। चाहे आप कुछ ही क्यों न करें लेकिन बहरहाल आपको वहाँ जाना ज़रूर पड़ेगा, बस! और ऐसा ही होता आया है, मेरे बेटे। तुम लाख बहाने बनाओ – मैं नहीं जाना चाहता पर वह एक न सुनेगी। वह तुम्हारे दिल की धड़कन में छिपी हुई है, तुम ज़रा उल्टे-सीधे हुए और उसने धर दबाया। तुम्हारी ज़िन्दगी ख़त्म, बस! यह दुनिया तभी तक ज़िन्दा है जब तक तुम इसमें घूमते-फिरते रहो और सक्रिय रहो वरना बस हिचकी आयी और ख़त्म।"

कभी तो वह लगातार दो-दो घण्टे बोलता चला जाता था। कोई उसकी बातें सुन भी रहा है या नहीं इसकी उसे रत्ती भर परवाह न थी। अपने वे शोकान्त वक्तव्य वह तब तक देता रहता था जब तक कि उसकी बड़ी-बड़ी आँखें चमकने न लगतीं और उनमें एक विचित्र धुधला-सा रंग न उतर आता जो ऐसा प्रतीत होता मानों उसकी पुतलियाँ बादलों की परछायीं ने ढँक ली हैं। तब उसकी आवाज़ में धीमापन आ जाता, उसके वाक्य और भी टूट-फूट जाते और वह छोटे-छोटे वाक्य इस्तेमाल करने लगता। आख़िरकार, वह एक गहरी साँस लेता और शब्द के उच्चारण के बीच ही रुक जाता। उसकी आँखों में श्वेत आतंक झलकने लगता।

अर्दली की बातों का पाल पर शायद ही कोई असर पड़ा हो क्योंकि वह उसकी बातें कुछ अनमने से ही सुनता था, कभी सुनता ही न था। वह अपने ही विचारों में निमग्न रहता था, और अब उसके अँधियारे जीवन में आशा की एक धुँधली-सी किरण चमकी थी। उसे आभास हुआ की भविष्य में उसके ढाढ़स के लिए कुछ सामग्री अवश्य है। वह क्या सामग्री थी इसकी तो वह कल्पना भी नहीं कर सकता था। हवाई किले बनाने के लिए भी उसके पास साज़-सामान

नाकाफ़ी था। वह ज़िन्दगी के बारे में भी कितना जानता था – यही न कि दूसरों के सुने हुए शब्द उसे याद हो गये थे। अब तक तो वह उन विचारों व गुत्थियों में सक्रिय भाग लेने से बचा रहा था लेकिन अब उसे महसूस होने लगा था कि कुछ नयी, बड़ी, अनजानी घड़ी समीप है जो उसको एक नयी ज़िन्दगी अता करेगी। सच पूछिए तो अब तक वह कभी निश्चय के साथ कुछ सोच ही न सका था उन सब बातों के बारे में। न ही उन्हें अदा करने के लिए उसके पास काफ़ी लफ्ज थे। उसके विचार बड़े कलील थे। लेकिन फिर भी अस्पताल में जब से उसे होश आया था और उसे नतालिया की नीली आँखों में वह झलक याद आयी थी तबसे उसमें कुछ नया शऊर व बेदारी आ गयी थी, उसकी अँधियारी आत्मा में कई नयी उत्तेजनाएँ पैदा हो गयी थीं। और नौकर की इस खबर से कि वह दो बार उसे देखने अस्पताल में आयी थी उसके विचार और भी पुख्ता और बुलन्द हो चले थे।

बीस वर्ष तक किसी ने उसकी सुध न ली थी। पर वह इंसान था बग़ैर किसी की तवज्जो व हमदर्दी के कैसे ज़िन्दा रहता। और इंसानों की निस्बत उसमें कुछ विशेषता भी थी और वह यह कि वह अकेला था और इसलिए लोगों की तवज्जो की उसे कहीं ज्यादा लालसा थी। उसकी यह कामना सर्वथा स्वाभाविक और अनजानी थी। पाल बेचारे को खबर ही न थी कि वह जिस ध्यान या तवज्जो की ख़्वाहिश कर रहा है वह आचिार है किस प्रकार की चीज़, कहाँ से आयेगी वह या किस रूप में आयेगी। पर अब वह आ चुकी थी और वह बड़ी ईमानदारी वह खुलूस से यह आशा लगा रहा था कि यह सिर्फ़ शुरुआत है और भविष्य में उसके लिए नये–नये विचारों का भण्डार खुला हुआ है। ज्यों–ज्यों दिन बीतता और उसे अपनी खोई हुई शारीरिक शक्ति की बहाली का तीव्र अनुभव होता जाता त्यों–त्यों उसमें यह उत्कण्ठा और भी तीव्रता से जागृत होती जाती कि कब मेरे ख्वाब की ताबीर बर आये और कब मैं नयी ज़िन्दगी में प्रवेश करूँ।

जब पाल वार्ड नं. 5 में मुन्तकिल कर दिया गया तो अर्दली अनासिम को बड़ा सदमा पहुँचा। उसका एकमात्र श्रोता हाथ से निकल गया था। उसने अपने तईं अस्पताल के अधिकारियों पर ज़ोर दिया और कहा कि पाल को समय से पहले ही हटाया जा रहा है; अब भी उसकी जान को ख़तरा है, कहीं वह मर न जाय क्योंकि उसकी नाक अभी पूरी तरह नहीं सूजी है।

एक दिन पाल जब अपने उलझे हुए अर्ध–विचारों और अर्ध–चेतनाओं में डूबा पलंग पर लेटा हुआ उन मक्खियों को निहार रहा था जो छत पर घूम–फिर रही थीं तो किसी ने बड़े मृदुल व धीमे स्वर में ठीक उसके सिर पर खड़े होकर

कहा :

"पाल!"

सुनते ही वह काँप गया और भयभीत हो गया। कितनी अप्रत्याशित बात थी वह उसके लिए! और वह भी कुछ घबड़ा गयी।

"कहो पाल, तो आख़िर तुम्हें मुन्तकिल कर दिया, शुक्र है ख़ुदा का! मैं तुम्हारे लिए यह लाई थी..." और उसने एक छोटी-सी पुड़िया उसके हाथ में दे दी।

लज्जित और भयभीत हो उसने एहतियात के साथ वार्ड के इर्द-गिर्द देखा।

पाल का सारा भय इस असीम आनन्द और उल्लास से धुल गया और उसके गालों पर धुँधली लालिमा उभर आयी।

"शुक्रिया! बहुत-बहुत शुक्रिया आपका। मैं बहुत अहसानमन्द हूँ आपका, बहुत! बैठिये ना यहाँ – या यहाँ बैठ जाइये।...नहीं, नहीं आप यहाँ बैठिये यह ज़रा ठीक रहेगा। शुक्रिया। कितनी अच्छी हैं आप। यकीन कीजिये, बड़ी अच्छी हैं आप..." उसने हकलाते हुए कहा, उसकी आँखें चमकने लगीं। उसकी तो मानो काया ही पलट गयी। इस अनाशातीत स्वागत पर वह और भी व्याकुल हो गयी। वह बारी-बारी से एक-एक मरीज को देखती रही मानो डर रही हो कि कहीं इन्हीं में से कोई ऐसा न हो जो मुझसे दुर्व्यवहार कर बैठे।

"अच्छा, अच्छा मैं बैठ जाती हूँ। आप अपने को कष्ट न दें। आपके लिए यह ठीक नहीं –" उसने धीमे स्वर में कहा और अपनी तलाश जारी रखी।

पाल और उत्साहित हो गया और उसने फिर उसे विश्वास दिलाया।

"आप परेशान न हों। ये सब मरीज बड़े अच्छे, भले मानस हैं... हम एक दूसरे से बातचीत करते हैं...ये सब बड़े बढ़िया लोग हैं। किसी को दुख पहुँचाना इन्हें अभीष्ट नहीं...ये तो बड़े हँसमुख लोग हैं। ओह, मुझे कितना आनन्द आता है कि आप यहाँ आयीं!" उसने तकरीबन एक चींख के साथ अपनी बात पूरी की।

उसने वार्ड की जांच पूरी कर ली थी और एक गहरी साँस लेते हुए अब वह बड़ी ज़ोर से मुस्कुरा दी।

"बड़ी ख़ुशी की बात है अब आप अच्छे हो रहे हैं। मैं यहाँ पहले भी आ चुकी हूँ, मालूम है ना आपको? आप उस वक़्त बेहोश थे। अपने दिमाग़ पर ज़ोर न दीजिये। मैं आपके लिए...हाँ, डाक्टर ने मुझे उसकी इजाजत देदी थी...खा लीजिए इसे!" और वह पुड़िया खोलने लगी।

लेकिन पाल के हर्ष की सीमा न थी, उसने काँपते हाँथों से वह पुड़िया छीन

ली और कहा :

"सच जानिये, आप तो मेरे लिए स्वर्ग से भेजी गयी देवी हैं, हाँ हाँ भगवान साक्षी है मेरी इस बात का!...

"ये क्या कर रहे हैं आप?" और वह फिर घबरा गयी।

"नहीं, ठीक ही कर रहा हूँ। मुझे कहना नहीं आता। कैसे कहूँ आपसे। मैं हमेशा ख़ामोश रहता हूँ। लेकिन समझता नहीं क्यों, जानती हैं न आप तो। मुझे कहने दीजिये यह। आख़िर आप मेरी होती ही क्या हैं? अजनबी ही ना। और मैं भी तो एक अजनबी ही हूँ। लेकिन आप नहीं जानतीं आप ही वह पहली महिला हैं जो मुझे देखने आयी हैं...और फिर वहाँ तहखाने में जो कुछ आपने किया?... भला क्या वजह थी कि आपने वह अहसान मुझपर किया? मैं इस दुनिया में बिलकुल अकेला हूँ और आज तक इस ज़िन्दगी में किसी की रहमदिली मैंने नहीं देखी...बस यही वजह है कि मैं आपका इतना आभारी हूँ। समझ रही हैं आप? आपका आना, मुझसे हमदर्दी दिखाना कितनी अच्छी बात है यह! कितनी ख़ूबसूरत!" और उसने उत्तेजित हो उसके हाथ झंझोड़ दिये।

"बस, ख़ामोश रहिये। इस तरह बोले जाना आपके लिए अच्छा नहीं हैं। वरना वे मुझे आगे से यहाँ आने नहीं देंगे..." उसने पाल को चुप करने की कोशिश की लेकिन अब भी पाल की भावुकतापूर्ण और टूटी-फूटी तकरीर पर वह घबराहट उसके मुख पर विराजमान थी। वह बख़ूबी समझ गयी थी कि वह ही पाल के उल्लास व आनन्द का कारण थी।

"क्या कहा वे आपको आने नहीं देंगे?" उसने नतालिया के चेहरे पर नेत्र गड़ाते हुए भयभीत हो पूछा। और विरोध करते हुए कहा : "यह हरगिज नहीं हो सकता! आप तो मेरी बहन के समान हैं! वे ऐसा नहीं कर सकते! यह कह किसने दिया आपसे? यह सब बकवास है। मुझे आपसे मिलने का हक है...मैं इसकी शिकायत करूँगा..."

अजी, आप भी कमाल करते हैं। काहे की शिकायत करेंगे आप? मेरे कहने का यह मतलब थोड़े ही था। क्या करेंगे आप, कोई इन्कलाब बरपा कर देंगे? आप भी बड़े मजेदार आदमी हैं।

असल में पाल का वह हर्षोन्माद उसे कुछ हास्यजनक लग रहा था। वह ठीक से समझ ही न पाई कि आख़िर उसे इस कदर फूले न समाने की क्या ज़रूरत थी। लेकिन यह जानकर कि वही उसका कारण थी उसे बड़ी ख़ुशी हुई। अब उसके हौसले बढ़ गये और वह कुछ रौब भी पाल पर गांठने लगी जिसको पाल ने सहर्ष स्वीकार किया। जितनी ख़ुशी नतालिया को उसे दबाने में हो रही

थी उतनी ही ख़ुशी उसे दबने में। उसने ज़ोर जबरदस्ती से उसे एक रोल खिलाया, उसका तकिया ठीक से रखा, मिजाजपुर्सी की और अन्त में कुछ कठोरता से उससे बोली। उसकी सूश्रुषा और देख-भाल से तो वह पानी-पानी हो गया और नतालिया इस पर ख़ूब प्रफुल्लित हुई।

अब वह ख़ामोश था और इसी पर सन्तुष्ट था कि नतालिया का हँसमुख चेहरा बड़े आनन्द और अचरजपूर्ण निगाहों से देखने को उसे मिल रहा था। उसने पाल को बताया था कि तुम जल्द ही अच्छे होकर बाहर आ जाओगे, मेरे घर आकर मेरे साथ चाय पियोगे, मैं और तुम जंगल में घूमने चलेंगे, नाव में सैर करेंगे – और इसी प्रकार के अनेक सब्ज बाग उसने उसे दिखाये।

पूर्व इसके कि वह उन स्वाभाविक दृश्यों का पूर्ण चित्र देख सके, मरीजों से मिलने का समय पूरा हो गया और उसे जाना पड़ा।

विदा होते समय पाल ने बड़ी दयनीय दृष्टि से नतालिया की ओर देखा और बड़े कोमल स्वर में याचना की, "फिर आइयेगा ना?"

अब वह अकेला रह गया था और उसने ज्योंही आँखें बन्द की उस के सामने नतालिया आ खड़ी हुई – ठिंगनी, भरे जिस्म की, साफ़ रंग की, गुलाबी गालों वाली, तीखी कटार-सी नाक वाली और बड़ी-बड़ी फांकों-सी आँखों वाली नतालिया, कितनी सुन्दर, कितनी युवा थी वह! उसकी गहरे रंग की ब्लाउज और घघरी, उसके सुव्यवस्थित और बने-बनाये केश – इन सबसे कितनी सादा, प्यार-भरी और दयालु लगती थी वह! जब बोलती थी उसके छोटे-छोटे चमकीले दाँत होंठों के बीच चमक उठते थे। उसके रोम-रोम से दयालुता टपकती थी।

पाल अपनी इस प्रतिमा के बारे में सोचता रहा और उसे अपने में कुछ परिवर्तन महसूस हुआ। उसे आश्चर्य हो रहा था कि वह इतनी जल्दी-जल्दी और आसानी से उससे कैसे बोल रहा था। और वह उस से इतनी अच्छी तरह, प्यार से कैसे व्यवहार कर रही थी। कोमल भावनाओं में डूबा हुआ आख़िर वह सो गया।

अगले दिन चारों ओर कुहरा छाया हुआ था जो बड़ा आनन्दप्रद लग रहा था। वह अब तक बीते हुए कल की घटनाएँ याद कर रहा था। वह हँसता रहा और सैकड़ों बार उसने धीमे स्वर में कहा : "बहुत-बहुत शुक्रिया आपका!" इसी वाक्य के द्वारा, जिसे वह बार-बार दोहराता रहा उसने हजारों भाव प्रकट किये।

कल फिर मुलाक़ातियों के आने का दिन है, शायद वह भी आए। वह कल्पना करता रहा कि क्या कहेगा, और किस प्रकार कहेगा। वह अभी से उसकी

प्रशंसा में वाक्य बनाने लगा...उसने यह भी कल्पना की कि वह अच्छा हो गया है, नतालिया के साथ नाव में सैर कर रहा है और उसे एरिफी के क़िस्से सुना रहा है।

कल हुई। उसका सारा शरीर बुखार में काँप रहा था और वह कातर दृष्टि से सुबह से शाम तक दरवाज़े की ओर टिकटिकी लगाये देखता रहा। वह उसका इन्तजार करता रहा और उम्मीद लगाये सोचता रहा कि वह अब आयी, तब आयी और आते ही मरीजों को देखकर पाल को खोजने लगेगी जैसा उसने पहले दिन किया था। फिर वह आकर उसके पलंग के पास बैठ जायगी और वे बातें करने लगेंगे...लेकिन सारा दिन बीत गया और वह न आयी।

उस रात पाल को बड़ी देर तक नींद न आयी। उसने अनुमान लगाने की कोशिश की कि आख़िर क्या वजह हुई होगी जो वह न आ सकी। और जब दिन निकला तो दर्द के मारे उसका सिर फटा जा रहा था। उसके हाथ-पाँव ढीले पड़े थे, अब उसे कोई सुध न रही थी।

दूसरे दिन वह चुपचाप लेटा रहा – न हिला-डुला, न उसने कुछ सोचा, न कोई कल्पना की और न किसी चीज़ की आशा। और भी बहुत से दिन आये और चले गये पर वह तब भी न आयी।

पाल अब लेटे-लेटे उन तमाम बुरी बातों को याद करने लगा जो उसने औरतों के बारे में सुन रखी थीं। उसे मजबूर होकर उन सबको अपनी इस नवपरिचिता पर लागू किया पर न जाने क्यों कोई बुरा रंग उस पर चढ़ ही न सका। उसने उसे गन्दी शराब पिये हुए, चोर, गालियाँ देने वाली, चिढ़ाने वाली स्त्री बनाकर भी सोचा। लेकिन फिर भी, वह तो सादा, ख़ूबसूरत और दयालू दीख पड़ी।

दिन गुज़रते गये। अब वह बरामदे में टहलने लगा था जहाँ की खिड़कियों से सड़क साफ़ दिखायी देती थी। किसी भी खिड़की पर जाकर वह रुक जाता और सोचता – मैं कब यहाँ से छूटूँगा – उसे वह प्रबल इच्छा बेकरार किये दे रही थी कि कब वह वहाँ से निकले और सूर्य से प्रकाशित सड़कों पर स्वस्थ, जोशीले और व्यस्त लोगों में जा मिले और उनके साथ सड़कों पर घूमे।

हरेक स्त्री जो अस्पताल की ओर आती हुई दिखायी देती उसके अन्दर आशा की एक किरण पैदा कर देती। आधा घन्टे तक वह बरामदे में खड़ा देखता रहता कि वह आयेगी – आयेगी। लेकिन वह फिर कभी न आयी; पाल को महसूस हुआ कि उसे धोखा दिया गया है, वह अब और भी गमगीन हो गया।

एक दिन उसने अर्दली की आवाज़ सुनी :

"पाल गिबली को दफ़्तर में बुलाया है।"

वह लपका हुआ दफ़्तर पहुँचा।

"यह लो! कोई तुम्हारे लिए दे गया है," डॉक्टर के पतले-दुबले ऊँचे सहायक ने मूँछों पर ताव देते हुए कहा। उसने पाल को पुड़िया दे दी जो काग़ज़ में लिपटी हुई थी।

"अरे, पर इसे – लाया कौन?" पाल ने पूछा और काँपते हाथों से उसे ले लिया।

"एक बूढ़ा आदमी कह रहा था..."

पाल ने उदास हो सिर हिला दिया। उसने पुड़िया उस सहायक के सामने रख दी।

"...वह तुम्हारा मालिक है? उसके साथ एक औरत भी थी जिसके मुँह पर पट्टी बँधी हुई थी। वह तो नौजवान थी।"

पाल स्पन्दित हो उठा और उसने पुड़िया फ़ौरन उठा ली।

"क्या बहुत ज्यादा पट्टी बँधी हुई थी उसके?" उसने पूछा। सहायक की भंवें और मूँछें ऊपर को उठ गयीं।

"क्या मतलब है तुम्हारा, बहुत ज्यादा पट्टी तो नहीं बँधी थी?"

"नहीं, मैं – कुछ नहीं। शुक्रिया आपका बहुत-बहुत। उसके दाँतों में तकलीफ होती ही होगी शायद।"

"हुँऽऽम?" सहायक ने सिर हिलाया। "हो सकता है उसके दाँतों में तकलीफ हो। हाँ?"

"उसने मेरे बारे में तो कुछ नहीं कहा?" पाल ने नरमी से जिज्ञासा भरे स्वर में पूछा।

"हाँ, कुछ कहा था उसने। कह रही थी, 'वह कुछ बेवकूफ-सा है, उसका ख़याल न करना और माफ़ कर दिया करना।' अच्छा, अब तुम जा सकते हो। जाओ तुम्हे माफ़ कर दिया।"

पाल मुड़ा और वहाँ से चला आया। वह समझ गया उसकी खिल्ली उड़ाई जा रही है। उसने अब सोचा कि आख़िर यह वजह थी जो वह अब तक नहीं आयी थी।

बेचारी के दाँतों में दर्द हो रहा होगा और अब जब वह कुछ कम हुआ तो वह चली आयी। कैसी औरत है वह?

हफ़्ते भर बाद वह एक बार फिर डॉक्टर के सहायक के दफ़्तर में खड़ा था। सहायक बैठा किसी किताब में गड़ा हुआ था और गोली यंत्र से खेल रहा था।

"सब चीज़ें मिल गयीं तुम्हें?" उसने पूछा, और पाल के उत्तर की प्रतीक्षा किये बग़ैर ही उसने कहा, "बहुत अच्छा, तो जाओ फिर, गुड्डे!"

पाल ने सिर झुकाया और अस्पताल से निकल कर बाहर सड़क पर आ गया। आधा घण्टे बाद धूप और थकावट से शादाब उसकी आँखें चकाचौंध हो गयीं, सिर चकराने लगा और वह दूकान में दाख़िल हुआ। सबसे पहले उससे मालिक मिला।

"अरे, तुम आ गये! बड़ा अच्छा हुआ! कहो क्या हाल है! तुम तो बड़े दुबले हो गये। चलो, कोई बात नहीं तुमने हँसना तो सीख लिया।"

पाल ने जब दूकान को सब तरफ से देखा तो उसे हँसी आ गयी। जब उसने दूकान का दरवाज़ा खोला और दहलीज़ पर खड़ा हो गया तो सुन्दर व कोमल विचारों से उसका मस्तिष्क भर गया। यहाँ की हरेक चीज़ कितनी अच्छी थी, कितनी घनिष्ठ थी और कितनी जानी-पहचानी थी उसके लिए। यहाँ तक कि काजल-सी काली ये दीवारें जिन पर कहीं-कहीं सफ़ेद धब्बे रह गये थे – ख़ुदा जाने क्यों काजल की परतें उन तक नहीं पहुँच पाई थीं – वे भी उसे देखकर स्वागतार्थ मुस्कुराते हुए दिखायी दिये। फिर कोने में लगा उसका बिस्तर था जिसके ऊपर दो चित्र टंगे हुए थे – एक तो 'हश्र के दिन' का था और दूसरा 'ज़िन्दगी की राह' का।

मिश्का मुँह खोले खड़ा था, उसकी चमकीली, काली आँखें पाल की ओर लगी हुई थी और वह पाल की वापसी पर बहुत ख़ुश दिखायी देता था। मालिक भी उसके अच्छा हो लौट आने पर ख़ुश था।

मिरोन टोपोरकोव ने कहना जारी किया :

"अरे, आ ना यहाँ, यहाँ आकर बैठ जा और ज़रा आराम कर ले। तू तो काफ़ी थक गया होगा। मिश्का और मैं हरेक चीज़ की देख-भाल करते रहे हैं। गूज ने दारू पीना शुरू कर दी है। मैं किसी और को रखना नहीं चाहता था, यही सोच रहा था कि तू आज आये, कल आये। अच्छा हुआ तू आ गया। अब हम दोनों सिलाई पर जुट जायेंगे। चीज़ें बनायेंगे, धड़ल्ले से काम करेंगे और कैसे, हाँ! मैंने फिर काम शुरू कर दिया है। अर्सा हुआ मैंने पी भी नही है – वैसे पीता तो हूँ लेकिन ऐसा नहीं कि होश ही न रहे।"

पाल बड़े ग़ौर से यह सब कुछ सुन रहा था और मन-ही-मन ख़ुश हो रहा था – एक तो इसलिए कि आज मालिक इतनी हँसी-ख़ुशी बातें कर रहा है और दूसरे इसलिए कि उसका लहजा भी कुछ अपनापन और अच्छाई लिये हुए था। पाल का दिल उस वातावरण को देखकर गद्‌गद हो रहा था और वह गर्मजोशी

महसूस कर रहा था।

“मिरोन अब हम जमकर काम करेंगे!” पाल ने आनन्द व आश्वासन के स्वर में कहा। मालिक अपनी कह चुका था और अब चमड़े के टुकड़े को फर्मे पर चढ़ाकर नापने में लग गया था। “मैं आपका बहुत शुक्रगुजार हूँ कि आप मुझे देखने अस्पताल गये। मेरे लिए तो वही बड़ी बात थी, क्योंकि इस दुनिया में मेरा कोई नहीं है...” पाल ने गर्मजोशी से कहा।

“आँ ख्खां!” मालिक ने बात काटते हुए कहा। “अच्छा, तो अब बातें बनाना आ गयीं तुझे, ऐं! क्यों रे लौंडे; कोई इंसान कितना ही बुरा हो अच्छाई भी उसमें होती ही है। तू जब बीमार नहीं पड़ा था तब यह बात कहता ना तो तेरी छाती फट जाती। अच्छी बात है, अब तुझमें समझ आ गयी है! वक़्त की बात है, अब तेरे और अच्छे दिन आने वाले हैं, मालूम होता है। और हाँ, एक बात और कह दूँ तुझसे। वह जो नतालिया है ना, उसके घर तू ज़रूर जाना। जो भी वह आदत ही से बड़ी भोली है पर तुझे उसका अहसानमन्द होना चाहिए। तुझे पता भी न होगा उसे तेरी कितनी फिकर थी! उसे बेचारी को बड़ा दुख होता था तेरी बीमारी का। हर रोज ही वह यहाँ आ जाती और पूछने लगती, ‘गये थे क्या आप उन्हें देखने? गये थे ना? क्या हाल है उनका, मिले थे आप उनसे?’ ...हाँ, हाँ भैया, उसमें अभी भलमनसाहत का माद्दा बाक़ी है। बड़ी भली औरत है वह, इसमें कोई शक नहीं। तो तू उसके यहाँ चला जाया कर! जानता है, हाँ, उस जैसी लड़की – और इतने जल्दी तुझसे हिल गयी! पिछली बार जब हम तेरे अच्छे होने की दुआ कर रहे थे तो आहा, क्या बातें की थीं उसने! मैं तो कहता हूँ ऐसी अच्छी बातें मैंने उमर भर सुनी ही नहीं! ‘देखा आपने वे हम–जैसों को कैसी गिरी निगाह से देखते हैं?’ वह मुझसे कहती ! ‘हम उनकी नज़रों में सूअर हैं, कुत्तों से भी बदतर हैं, है ना?’ और मैं जवाब देता, ‘सच कहा तुमने!’ और फिर वह कहती, ‘वह’ – यानी तुम, ‘मुझसे ऐसा मिलते हैं जैसे मैं उनकी अपनी नातिन हूँ! ठीक कहती हूँ ना मैं मिरोन दादा?’ और मैं कहता, हाँ, मैं जानता हूँ।’ फिर वह बोलती, ‘तो फिर मैं भी क्यों न वैसा ही बर्ताव उनसे करूँ?’ बड़ी सीधी–सीधी बात है ना? लेकिन साथ ही है बड़ी अजीब यह! हमारी रोज मर्रा की ज़िन्दगी में तो ऐसा होता नहीं, कभी न हमने यह देखा न सुना। कुछ हमारी जानी–पहचानी बातों से तो यह बिल्कुल मेल खाती ही नहीं...”

इससे आगे मिरोन कुछ न कह सका। देखते–देखते वह किसी ऐसे रोड़े से टकराया जिसे पाल न देख सका। पाल तो बड़ी ग़ौर से और उल्लास–भरी भावभंगिमा लिये जो उसके चेचक–रूह चेहरे पर स्पष्ट झलकती थी मिरोन की

बातें सुन रहा था। वह तो उस वक़्त तक अपने मालिक की ओर देखता रहा जब कि मालिक अपने विचारों को अदा करने में असफल हो, योंही हाथ हिलाकर चुप न हो गया।

पाल भी अब मौन था। मिरोन की बातों ने उसके दिल व दिमाग़ पर इतना असर डाला और उसे इतनी ख़ुशी हुई कि वह अपने दिल की बात जाहिर करने को अधीर हो उठा। लेकिन अबके वह अपनी बात कहने में नाकाम रहा और उसने फिर अपने मालिक को धन्यवाद देना शुरू कर दिया।

"आपने जो कुछ फर्माया, मैं उसके लिए आपका दिल से शुक्रगुजार हूँ। बहुत–बहुत शुक्रिया आपका!" और अपने आभार–प्रदर्शन में असमर्थ उसने आभार की मात्रा प्रकट करने के लिए हाथ खींच दिया। "यह बीमारी तो मेरे लिए वरदान साबित हुई। आपने भी ठीक ही कहा है। बीमारी के पहले मैं जानवर जैसा ही था। लेकिन अब मुझे महसूस हो रहा है कि मैं इन्सान हूँ। अब लोग मुझे पूछते हैं। आपका बहुत–बहुत शुक्रिया!..." अपना दिल खोलकर वह अपने मालिक के सामने रख देना चाहता था और उसी प्रबल इच्छा के कारण वह बोलते–बोलते हाँफने लगा।

"यह सब बकवास है! अगर तू बीमारी के पहले इतना ज़ोरदार नहीं भी था तो क्या हुआ? यह बात ज़रूर सच है कि तू था बड़ा फूहड़। लेकिन बाबा, मैं ख़ुद नहीं जानता कि कौन–सी चीज़ बेहतर है – लोगों से दूर रहना या उन्हें दोस्त बना लेना। अच्छे, ईमानदार लोग बहुत कम मिलते हैं...और उनकी संगति से अपना नुकसान ही होता है ...ऐसा भी हो सकता है कि तुम उनसे फायदा उठा लो लेकिन तुम्हें जबान बन्द रखनी पड़ेगी और मुट्ठियाँ बाँध कर तैयार रहना होगा। और अगर कभी वे तुम्हें धोखा भी दे दें तो उन पर गुस्सा करना बेकार है क्योंकि हरेक कोई धोखा देना चाहता है। ज़िन्दगी में आज इतनी भीड़–भड़क्का है कि किसी को धक्का देना नामुमकिन है। हाँ, तुम यह कह सकते हो कि इस झमेले में पड़ो ही नहीं। पहले मार दे वह मीर, वाली मिसाल काम दे सकती है, इसलिए तुम्हें छले उसके पहले तुम उसे दे मारो। लेकिन देखो, एक बात का ख़याल रखना – औरतों से बचना! वे तो इतनी चालाक होती हैं कि तुम्हें पता भी न चले कब डंक मार दिया उन्होंने। पहले तो औरत तुम्हें देखकर मुस्कुरा देगी, दूसरी बार में तुम्हारा चुम्बन लेगी। तीसरी में तुम्हारी बड़ाई करेगी और चौथी बार ही में तुम उस पर लट्टू हो गये। पाँचवी बार में तुम उससे ऊब गये। तुम कहोगे मुझे छोड़ दो, लेकिन नहीं भैया क्यों छोड़ने लगी वह तुझे! इन बिल्लियों के ऐसे पंजे होते हैं कि तू उनसे छूट नहीं सकता। मैं कहता हूँ तू अपनी मौत के पाँच मिनट पहले ही मर

जायगा, समझा दोस्त..."

अब तो मिरोन को आ गया था जोश, चुनांचे बग़ैर किसी रोक के वह शाम तक इसी प्रकार की फिलासफी बाँधता रहा।

पाल उसके ठीक सामने बैठा टेकुए से किसी चीज़ को भेदता हुआ मिरोन की बातें बड़ी ग़ौर से सुनता रहा। लेकिन इसके बावजूद कि वह अपने मालिक के स्वागत भाषण को ध्यान पूर्वक सुन रहा था उसके उन निरन्तर एकत्र होने वाले विचारों में कोई बाधा न पड़ी।

"बस काफ़ी हो गया!" मिरोन ने कहा और अपना भाषण तथा काम एक साथ ख़त्म कर दिया। "लेट जा और ज़रा आराम कर ले। या – ऐसा क्यों न कर कि ज़रा बाहर सड़क पर निकल जा और थोड़ी ताजी हवा खाले?"

"नहीं, मैं उससे मिलना चला जाता हूँ..." पाल ने बड़े विनीत स्वर में, शर्माते हुए कहा।

"तेरा मतलब है नतालिया से? हुँऽऽम...अच्छा तो जा फिर," मालिक ने विचारमग्न होकर कहा।

लेकिन जब पाल ने दूकान के बाहर क़दम रखा तो वह चिल्लाया :

"देखना, ज़रा सँभलके रहना, कहीं वह तेरे गले न पड़ जाय! ही, ही ही! तुझे तो पता भी न चलेगा कैसे और क्योंकर सब कुछ हो गया...वह बड़ी चलती-पुरजी है..."

इस बात से पाल नाराज़ हो गया। उसने महसूस किया कि वह जानता है कि नतालिया औरों जैसी नहीं है। उसने ख़ुद उसके बारे में बड़ी बुरी-बुरी बातें सोची थीं, लेकिन उस पर एक भी न जम सकी थी। वह रहमदिल थी और इसी रहमदिली में उसका सब कुछ छिपा हुआ था।

इन्हीं विरोधी विचारों में डूबा हुआ, पाल अटारी पर पहुँचा और उसने अपने को उस छोटे दरवाज़े के सामने खड़ा पाया जो भिड़ा हुआ था। विचार-निमग्नता ने उसे यह भान ही न होने दिया कि वे सीढ़ियाँ उसने कैसे चढ़ीं। वहाँ पहुँचते ही वह विचलित हो उठा। अन्दर जाने ही को था कि कुछ हिचकिचाया; सोचा अन्दर जाने के पहले खाँस-खंसार दे ताकि अन्दर वाले को पता चल जाय कि कोई आया है। लेकिन, हालांकि वह काफ़ी ज़ोर से खंखारा पर दरवाज़े के अन्दर के वातावरण में कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई।

"शायद सो रही है," उसने सोचा लेकिन वहाँ से लौटा नहीं। हाथ पीठ पर रखे वह वहीं खड़ा रहा और दिल ही दिल में यह तमन्ना करता रहा कि अब वह उठे, अब वह उठे।

गली में से उठता हुआ कुछ मन्द कोलाहल उसे सुनायी दिया। दिन भर की सूरज की तपिश के कारण अटारी से भभके निकल रहे थे। जली-तपी ज़मीन से उठती हुई गन्ध उसके नथोड़ों में घुस रही थी।

सहसा उसने आहिस्ता से दरवाज़ा खुलते हुए देखा। वह पीछे हटा बड़े आदर भाव से उसने अपनी टोपी उतारी, नीचे की ओर झुका और बिना सिर उठाये ही उसके अभिवादन की प्रतीक्षा करने लगा। लेकिन वह कुछ न बोली। तब उसने अपना मुँह उठाया और गहरी साँस ली। न कोई उसके सामने खड़ा था और न ही कोई कमरे में था। जाहिर है कि दरवाज़ा खिड़की से आती हुई हवा के झोंके से खुल गया था।

उसने कमरे के अन्दर नज़रें दौड़ायीं। उसमें चीज़ें सब तितर-बितर पड़ी हुई थीं। लगता था कमरा कई दिन से झाड़ा-पोंछा नहीं गया था दीवार के सहारे बिस्तर लिपटा हुआ पड़ा था; उसके सामने एक मेज पड़ी थी जिस पर कुछ मैली-कुचैली रकाबियाँ, रोटी के टुकड़े, सिगरेट के टुकड़े, दो बियर की बोतलें, एक समोवार और प्याले बिखरे पड़े हुए थे। एक लाल घघरी, जूते, काग़ज़ के सूखे व कुचले हुए फूल फर्श पर बिखरे पड़े थे।

कमरे के दृश्य को देख कर पाल का दिल बैठ गया। वह वहाँ से चला जाना चाहता था लेकिन आँतरिक प्रोत्साहन से अनुप्रेरित वह दहलीज में दाख़िल हुआ। वह बड़ा ही शोचनीय बिल था जिसकी छत ऐसी थी जैसे ताबूत का ढक्कन, दीवारों पर सस्ता-सा नीला काग़ज़ चिपका दिया गया था। वह भी जगह-जगह फटकर लटकने लगा था। उसे और कमरे की आम व्यवस्था को देख कर तो वह कमरा कुछ अजीब नज़र आता था। ऐसा महसूस होता था मानो कमरे में भारी उथल-पुथल हुई हो।

पाल ने गहरी साँस ली, खिड़की तक गया और जाकर कुर्सी पर बैठ गया।

"मैं चला ही क्यों न जाऊँ?" उसे ख़याल हुआ लेकिन अन्दर से तो वह वहीं जमा रहना चाहता था। जा कैसे सकता हूँ मैं? वह यहाँ है नहीं, कमरे में ताला नहीं लगा है और सारी चीज़ें इसी प्रकार बिखरी पड़ी हैं...ज्यादा दूर नहीं गयी होगी वह...यहीं कहीं आस-पड़ोस में होगी।

और उसने नतालिया को देखने के लिए खिड़की में से झाँका। खिड़की में से सारा शहर उसे कुछ अजनबी-सा लगा। असल में तो शहर कहाँ था, बस छतें ही छतें दृष्टिगोचर हो रहीं थी और उन्हीं के दरम्यान बागीचों के हरे-हरे द्वीप दिखायी दे रहे थे। हरी, लाल और कत्थई रंग की छतें एक दूसरे से सटी हुई बड़ी बेतरतीब-सी लग रही थीं। उन्हीं के मध्य एक गिरजे का मीनार जिस पर

क्रास का चिन्ह लगा हुआ था और जो अस्त होते हुए सूर्य की अन्तिम किरणों से प्रकाशित था, आकाश से बातें करता हुआ प्रतीत होता था। शहर की सीमा के परे संध्या के कुहरे का धुआँ उठता और हल्के-हल्के छतों पर फैल कर उन्हें और भी नरम व अँधियारी बना देता। हरियाली के स्थान मकानों में घुल-मिल गये थे। पाल ने संध्या को अपनी परछायीं द्वारा सारी धरती को ढँकते हुए देखा! उसे कुछ सुखदाई कसक महसूस हुई। दूर फासले पर, शहर के उस पार जहाँ आसमान भी गहरे नीले रंग का था, दो सितारे चमके जिनमें एक तो बड़ा और लाल रंग का था, आनन्दित व उज्ज्वल था और दूसरा ऐसे टिमटिमा रहा था मानो डर रहा हो।

आदमी हो तो ऐसा कि दुनिया भर की बातों को समझ सके इन सब बातों को – शाम, आकाश, तारे, सोया हुआ शहर और उसके विचार; वह आदमी ऐसा हो जो ब्रह्माण्ड के बारे में हर 'क्यों,' 'क्या,' 'किसलिए' आदि सब जानता हो, वह जानता हो कि सृष्टि के विचारों और उसके अर्थों का गूढ़ रहस्य क्या है, जो व्यक्ति दुनिया को जानता है वह यह भी जानता होगा कि वह क्यों ज़िन्दा है और ज़िन्दगी में उसकी कौन-सी जगह है। इस प्रकार का आदमी शायद ज़िन्दगी को आज की-सी शाम जैसा गर्म बना सके, और लोगों को इस प्रकार एकजुट करे कि हरेक आदमी एक दूसरे में घुल-मिल जाय और किसी बात से न डरे।

इन्हीं विचारों की रौ में बहा हुआ पाल खिड़की के पास बैठा रहा और उसे वक़्त के गुज़रने का ख़याल ही न आया, हालांकि उसकी नज़रों के सामने ही रात्रि के अंधकार का साम्राज्य फैलता चला आ रहा था। जब उसने सुना कि बाहर आँगन में कोई चिल्ला रहा है और उस ने जाकर देखा तब जाकर कहीं उसे मालूम हुआ कि वह वहाँ बड़ी देर से बैठा हुआ है। चारों ओर घना अन्धकार छाया हुआ था और सारे आसमान पर तारे झिलमिला रहे थे। उसकी आँखों में नींद भरी हुई थी, साँस लेते हुए वह उठा और दरवाज़े की ओर गया, ज़्यों ही वह कमरे से बाहर निकला कुछ भारी, असमान चापों की आवाज़ें उसके कानों पर पड़ीं और वह ठिठक गया।

एक झूमती हुई आकृति सीढ़ियों पर चढ़ रही थी। वह सिसकियाँ भर रही थी, और रो रही थी। पाल एक ओर हट गया और दरवाज़े के पीछे खड़ा हो गया।

"मुएँ बदमाश कहीं के!" शराबी की लड़खड़ाती आवाज़ भी सुन पड़ी!

पाल ने सोचा शायद कोई नतालिया से मिलने आया होगा और जब उसने देखा कि ख़ुद नतालिया थी तो उसकी सिट्टी-पिट्टी गुम हो गयी। इतनी दूर से ही उसके मुँह से वोडका की बदबू आ रही थी; जब वह समीप आयी तो उसने देखा कि उसके बाल बिखरे हुए हैं, उस के चेहरे पर शिकनें व झुर्रियाँ पड़ी हुई

हैं और वह इतनी निढाल है कि बोल भी नहीं सकती। उसके दिल में नतालिया के लिए दया उमड़ आयी पर न जाने क्यों वह उसकी सहायता के लिए न उठा। वह दरवाज़े के पीछे ही दुबका खड़ा रहा। उसने कन्धे से दरवाज़े पर धक्का मारा और पाल को दीवार में धकेलते हुए कमरे में दाख़िल हुई। फ़ौरन ही ग्लासों और बोतलों के फूटने की आवाज़ सुनायी दी।

"जाओ मरो...सब के सब...तुम पर...ख़ुदा की मार..."

शराबी की आवाज़ और स्वर में जो जख्मी थी, और कड़वाहटपूर्ण थी, पाल भांप गया। वह वहाँ से नहीं हिला। उसने साँस रोकी और हालांकि वह सब उसके लिए आनन्ददायक न था फिर भी ग़ौर से सुनने लगा। इसके बाद सिसकियों और गिले-शिकवों की चिल्लपों कानों में पड़ी।

"उसने मुझे मारा...कुत्ते के बच्चे ने! क्यों मारा मुझे? मुझे उससे अपने ... पैसे माँगने चाहिए थे। मैं वह...माँग सकती थी...साला गुण्डा! तीन रुबल...हाँ तीन रुबल ही दरकार है...और तूने समझा...ठीक है भोली-भाली है...इसलिए पीट लो! नहीं, तू झूठ बोलता है!...झूठ...झूठ! मैं भी महसूस कर सकती हूँ! क्या मैं इन्सान नहीं हूँ, क्या मेरे पास दिल नहीं है...अच्छा, ठीक है...तो मैं इन्सान नहीं...लेकिन क्या मेरा भोलापन...लेकिन क्या मुझे हक नहीं है...कि ...मैं...नहीं यह मेरा पूरा हक है...कि उससे तीन...रुबल माँगू!"

"तीन रुबल" उसने ऐसे चुभते हुए और घृणापूर्ण तथा दुख भरे अन्दाज़ में कहे कि पाल ख़ुद भी तीव्र वेदना व ग्लानि से तिलमिला उठा; उसे उस व्यक्ति पर रोष आया और वह दनदनाता हुआ सीढ़ियाँ उतर गया। जब वह आख़िरी सीढ़ी पर था तो चीज़ों के गिरने और रकाबियों के फूटने की आवाज़ उसके कानों में पड़ी।

"ओह यह तो उसने मेज ही गिरा दी..." उसने आँगन में पहुँचकर ज़ोर से कहा। वह किंकर्तव्यविमूढ़ हो वहीं खड़ा रहा। पर उसे महसूस हुआ कि उसे कुछ करना चाहिए। वहाँ खड़ा रहकर टोपी हाथ में लिये वह अपने तेजी से धड़कते हुए दिल की धड़कनें सुनने लगा; उसे लग रहा था मानो उसका वक्ष किसी शिकन्जे में दबा दिया गया है। ...सब कुछ इस तरह गड़बड़ा गया था कि एक स्पष्ट विचार उसके मस्तिष्क में आता ही न था।

"हरामी कहीं के!" उसकी आवाज़ मद्धम पड़ गयी थी। उसने हर वह गाली याद की जो कभी सुनी थी और वे सब-की-सब उसी क्रोध में कानाफूसी के अन्दाज़ में दोहरा दीं। कुछ देर बाद जब उसका मिजाज दुरुस्त हुआ तो वह फाटक से बाहर आया और दीवार पर पीठ टिका कर एक बेंच पर बैठ गया।

वहाँ जितनी देर वह बैठा रहा उसकी आँखों के सामने स्त्रियों की आकृतियों की कतार अँधियारी, निर्जन गलियों में से गुज़रती हुई, उपेक्षापूर्ण भाव से बड़बड़ाती हुई दिखायी देती रही...एक तीव्र कसक उसके दिल में उठी और उसके हृदय को पूरे ज़ोर से बेधने लगी। वह वहाँ से उठा और दुकान पर वापस आ गया।

"क्यों भाई पाल, क्या हाल है?" अगले दिन सुबह मालिक ने पूछा। पाल की ओर देखकर वह धूर्तता से मुस्कुराया। "गया था फिर तू वहाँ? उसका शुक्रिया अदा किया था या नहीं, ऐं?"

"वह...घर...नहीं थी।" पाल ने मालिक से नज़रें बचाते हुए कुछ उदास होकर कहा।

"क्या कहा? चलो, कोई बात नहीं। हम यही सुनकर तसल्ली कर लेते हैं कि वह क्या कहते हैं, घर पर नहीं थी।" और इतना कह कर वह पाल के रूबरू काम करने बैठ गया।

"छोकरी इधर-उधर तो ज़रूर जाती है," मालिक ने फिर कहना शुरू किया। "बड़ी बुरी बात है यह। इतने अच्छे दिल वाली लड़की है और यह हरकत करती है, छिः! पर हम-तुम कर ही क्या कसते हैं सिवाय तरस खाने के? इन बातों में हमारा कोई बस नहीं।"

पाल मौन बैठा मोम में भीगे हुए धागे से चमड़ा जल्दी-जल्दी सी रहा था। मालिक अनुनासिक स्वर में गाने लगा।

"मिरोन," एक लम्बी ख़ामोशी के बाद पाल ने मालिक की ओर घूम कर कहा।

"हाँ, क्या है?" मालिक ने सिर उठाते हुए पूछा।

"आपका क्या ख़याल है वह इस नरक-कुण्ड से निकल सकती है?"

"वह? हुऽऽम! शायद। लेकिन ज्यादा संभावना उसके उसी में फंसे रहने की है। पर हो सकता है वह निकल भी जाय। इस पर कुछ भी कहना मुश्किल है, दोस्त! हाँ, हाँ, यही बात है! हाँ एक शर्त है अगर कोई फौलादी इन्सान उसे अपने मजबूत हाथों में जकड़ले तो बात और है...लेकिन इन सबके बावजूद यह बात बहस-तलब है कि कौन किसे जेर कर देगा। फिर बात यह भी है कि आजकल बेवकूफ हैं कम, क्योंकि गर्मी के मौसम में दुलहनें ऐसी निकलती हैं जैसे मक्खियाँ यहाँ तक कि अच्छी लड़कियों को भी मुनासिब दाम नहीं मिल पाते। मिसाल के लिए गूज को ही ले लो। उसने शादी की तो दुलहन आयी परी-चेहरा, साथ लाई दो सौ रुबल दहेज में, पढ़ी-लिखी, सुशील। अब बिला शक वह उसे

झांसा देगी, क्योंकि उसमें है ही क्या? ख़ुद तो होगा पचास से भी ऊपर और वह है बेचारी अभी सत्रह साल की नवेली। लेकिन उस जैसी लड़की ने भी गूज से शादी करली और उसे दो सौ रुबल भी ऊपर से दे दिये, महज इसीलिए कि वह उसे ग्रहण कर ले। आजकल लड़कियों का क्या टोटा। बड़ी सस्ती मिल जाती हैं। और भला क्यों? क्योंकि उनकी तादाद इतनी लंबी-चौड़ी है कि उनका वहाँ जीना ही मुहाल है। ढेरों लोग पैदा होते चले जाते हैं। अब अगर वह क़ानूनन यह शादी-ब्याह बन्द करवादे यानी 4-5 साल के लिए – तो वह एक अलग बात है। वह होगी बड़ी ज़ोरदार चीज़। सच कहता हूँ, ख़ुदा गवाह है मेरा! क्यों?" और अपने इसी विचार में मुग्ध बूढ़े मिरोन ने अपने सिद्धान्त का निरूपण ज़रा विवरण से करना शुरू कर दिया।

पाल मौन था, लगता था मानो बड़ी ग़ौर से सुन रहा हो। लेकिन जब मिरोन ने कृत्रिम सन्तति-निरोध की समस्या का सफलतापूर्वक हल निकाल लिया तो पाल ने सहसा उसे टोका :

"मिरोन, अगर मैं उसे कोई भेंट दूँ तो?

"उसे? यानि नतालिया को?" एक लम्बी चुप्पी के बाद मालिक ने पूछा। उसने कुछ दुखित हो छत की ओर नज़रें गड़ायीं और उसे इस बात पर रंज हुआ कि पाल ने उसके कल्पना-सागर में उठते हुए तूफान को रोक दिया। "हाँ, हाँ तुम उसे ज़रूर कोई भेंट दे सकते हो। क्यों नहीं? उसने भी तो तुम पर पैसे खर्च किये है, हैं ना!"

और वह फिर चुप हो गया। कुछ क्षण बाद वह गुनगुनाने लगा।

दोपहर को खाने के बाद वे दोनों बड़े ज़ोर-शोर से एक चमड़े पर जुट गये। दिन में गर्मी अधिक थी। दरवाज़ा व खिड़की खुली होने के बावजूद दुकान में गमगमाहट थी। मालिक ने अपने माथे का पसीना पोंछा, गर्मी को दो-चार गालियाँ सुनायीं और उस नरक की कल्पना करने लगा जहाँ का तापक्रम यहाँ की अपेक्षा दस अंश तो ज़रूर कम होगा। अगर इन साले बूटों के लिए उसने वादा न कर लिया होता तो वह ख़ुशी-ख़ुशी वहाँ चला जाता।

पाल के माथे पर झुर्रियाँ पड़ी हुई थीं, होंठ सख्ती से बन्द कर दिये गये थे और वह झुका हुआ सिलाई कर रहा था।

"तो आप कहते हैं कि कुछ भी हो वह है अच्छी लड़की?" उसने अचानक पूछ लिया।

"और शायद यही बात तुम्हारे दिमाग़ में भी है! हाँ, अच्छी-खासी है। पर तुम्हें क्या?" मालिक ने पाल के झुके हुए सिर की ओर निहारा मानो उसकी

प्रतिक्रिया देखना चाहता हो।

"कुछ नहीं!" उसने संक्षेप में उत्तर दिया।

"यह तो कुछ भी नहीं हुआ, कोई बात ही नहीं बनी।" मालिक हँस पड़ा।

"मैं कह ही क्या सकता हूँ?" पाल के स्वर में विषाद भरा था वह उलझन में पड़ा था, थका हुआ था और निढाल हो गया था। फ़िर दोनों मौन रहे।

"तो हाँ, वह बदल नहीं सकती? मतलब है कि कुछ करना बेकार है इस सिलसिले में?" सवाल इतने बोदे थे कि मिरोन ने उनका जवाब नहीं दिया।

पाल कुछ देर और ठहरा रहा और फिर उसने विरोध किया :

"देखिये, यह गलत बात है! यह कुछ मुनासिब नहीं! वह बहुत भली है पर फिर भी है अभागी। और यही शर्म की बात है!" उसने मेज पर लात मारी।

"अर र र र!" मालिक ने दाँत भींचकर कहा और फिर व्यंग्यपूर्ण हँसी हँस पड़ा। "अबे पाल, तू भी यार अभी बच्चा ही है। ऐसा है जैसे बलि का बकरा, हा, हा, हा!"

शाम को काम ख़त्म करके पाल दूकान के हाल में गया। आँगन में खुलने वाले दरवाज़े पर खड़ा होकर उसने अटारी की खिड़की की ओर नज़र डाली। खिड़की में रोशनी तो थी लेकिन कोई हरकत नहीं दीख पड़ी। वह बड़ी देर तक वहाँ इन्तजार करता रहा कि कब उसकी आकृति दिखायी दे जाय। फिर जब वह अधिक प्रतीक्षा न कर सका तो बाहर गली में निकल गया और फिर उसी बेंच पर जा बैठा जहाँ पिछली रात बैठा रहा था।

मालिक ने जो कुछ नतालिया के बारे में कहा वह उसके मस्तिष्क पर ऐसा अंकित हुआ कि उसे निकालना कठिन हो गया उसके हृदय में उसके लिए दया भाव उमड़ आया। यदि वह जीवन के बारे में कुछ ज्यादा जानता होता तो नतालिया की मुक्ति के लिए अनेक योजनाएँ तैयार करता। लेकिन उसे तो कुछ आता-जाता ही न था। उसके तमाम विचार नतालिया की विविध प्रतिमाओं पर केन्द्रित थे – तलघर में उसकी सहायक नतालिया, हस्पताल में उसे देखने आयी हुई नतालिया, गन्दे, फूहड़ कमरे में शराब में धुत्त नतालिया। वह उसे एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले गया। उसने अपनी कल्पना में उसे अटारी में शराब पिये हुए उठाया और अस्पताल में अपने पलंग पर ले गया। और तब उसके जहन में कुछ अस्पष्ट-सा चित्र उभर आया जिसने उसे विचलित कर दिया। लेकिन जब उसने उसे अपनी अटारी में पड़े हुए समय की कल्पना की जब वह उसे देखने हस्पताल में गयी थी तो उसकी मनःस्थिति कुछ बदली। अब वह अपने इर्द-गिर्द मुस्कुराते हुए नज़रें दौड़ाने लगा, उस अँधियारी गली की ओर देखकर मुस्कुराने लगा और सुबह

के सितारों–भरे आकाश को देखकर दिल ख़ुश करता रहा।

उसके हृदयसागर में दो लहरें उठीं; एक ने उसे गर्मा दिया और दूसरी ने जो ठण्डी, उदास व मलिन थी उसे निराशा के जाले में लपेट लिया। अस्पताल में पड़े–पड़े उसने नतालिया के बारे में इतना कुछ सोचा था, इतना याद किया था उसे गोया वह उसकी नातिन हो। वही तो पहली स्त्री थी जिसने उस पर दया की थी, उसकी सुश्रुषा की थी। उसका ख़ाली व एकांकी जीवन जिसमें न कोई सहारा था, न कोई मित्र, पूर्णरूपेण उसकी ओर केन्द्रित हो गया था, उसी लड़की की ओर जिसने उसके साथ भलाई की थी और जो अब धिक्कार के काबिल थी।

उसने वे भाव स्मरण किये जो उस समय उसके दिल में पैदा हुए थे जब वह उसके पलंग के करीब बैठी थी। वह उसी भाव को जो अब धुँधली–सी स्मृति मात्र बनकर रह गया था उसी तीव्रता व वेग के साथ पुनरुत्पन्न करना चाहता था।

इतने में एक ज़ोर का शोर सुनायी दिया। "अरे आप हैं! कब आये अस्पताल से आप?" उसने फुर्ती से सिर घुमाया और उसे देखा। वह दरवाज़े पर खड़ी थी। उसका सिर और चेहरा एक सफ़ेद शाल में लिपटा हुआ था पर उसकी बड़ी–बड़ी नीली चमकदार आँखें अब भी दिखायी दे रही थीं।

मैं कल ही वहाँ से आया हूँ। कहिये क्या हाल है! उसने उत्तर दिया और आगे कुछ कहने में असमर्थ वह मौन हो उसकी ओर निहारने लगा।

"आप कितने दुबले हो गये हैं! अरे रे रे!" उसने दया–भाव दर्शाते हुए कहा और शाल से अपना चेहरा और भी ढँक लिया।

"मैंने सुना था आप भी बीमार थीं," पाल ने कहा।

"मैं? ना ऽ हीं। हाँ, हाँ ठीक है वह तो अब मेरी तबियत ठीक है। मेरे दाँतों में बुरी तरह दर्द हो गया था...बहुत दिन से चला आ रहा है।"

पाल को याद आया कि कल रात अटारी में जब वह उसके आगे से गुज़री थी तो उसके गाल इस तरह लिपटे हुए नहीं थे।

"अब तो सब ठीक है ना? आप बिल्कुल अच्छे हैं? क्या काम पर जाना शुरू कर दिया फिर से?" नतालिया ने कुछ देर बाद पूछा।

"जी हाँ, काम पर जाने लगा हूँ। कल ही से शुरू कर दिया है।"

"अच्छा, फिर मिलेंगे," और उसने पाल की ओर हाथ बढ़ा दिया।

पाल ने उसका हाथ थामा ज़ोर से दबाया और यह इच्छा प्रकट करते हुए कि इतनी जल्दी वह न जाय फुर्ती से कहा :

"ज़रा ठहरिए! यहाँ बैठ जाइये। में आपका शुक्रिया अदा करना चाहता हूँ। आपने जो मेरे बारे में इतनी चिंता की उसके लिए मैं आप का बहुत अहसानमन्द हूँ..."

"ओह, क्या कह रहे हैं आप! बकवास है यह सब...क्या ख़्याल है दोपहर को किसी वक़्त मेरे साथ चाय क्यों न पियें आप? शाम के वक़्त तो मैं आम तौर पर घर नहीं मिलती। आयेंगे न आप?"

"मैं आऊँगा, ज़रूर आऊँगा! ख़ुशी-ख़ुशी आऊँगा! शुक्रिया!"

"अच्छा, मैं जाती हूँ ज़रा दूकान पर।" और वह गायब हो गयी।

पाल इस धुँधली आशा में खड़ा प्रतीक्षा करता रहा कि वह अब लौटेगी और कहेगी आओ मेरे साथ ऊपर चलो। लेकिन वह उधर से ऐसी फुर्ती से गुज़री कि पाल की ओर मुड़कर भी न देखा। उसे ऐसा लगा कि वह अपनी शाल में दबाये कुछ बोतलें लिये जा रही हैं।

उसने साँस ली, कुछ देर और वहाँ बैठा रहा और फिर जाकर लेट गया। वह उदास हो उसके बारे में सोचने लगा। बड़ी देर तक उसकी आँख न लगी। दो दिन बाद वह सीढ़ियाँ चढ़ता हुआ अटारी की ओर चला उसके पास काग़ज़ में लिपटा हुआ एक रूमाल था। उसने उसे डेढ़ रुबल में खरीदा था। दरवाज़ा खुला हुआ था। जब उसने पाल को देखा तो नतालिया झपट कर कमरे के अन्दर गयी, अपनी शाल खींची और उसने जल्दी से अपना सिर लपेट लिया।

"अरे, आप! बड़ा अच्छा हुआ, आप बरवक़्त आ गये। मैं अभी चाय पीने ही वाली थी। आइये, आइये ना!"

ख़ामोशी में उसने अपना उपहार उसके हाथों में दे दिया और बड़े कोमल स्वर में भुनभुनाया :

"यह आपके ही लिए लाया हूँ...आपका शुक्रिया।

"क्या है यह? ओह, रूमाल है! क्या ख़ूब है यह भी! आह आप भी कितने प्यारे हैं! उसने धीरे से कहा और उसकी ओर बढ़ते हुए अपनी बाहें फैलादीं मानो उसका आलिंगन करना चाहती हो। पर वह फिर रुक गयी और उस रूमाल की प्रशंसा करने लगी।

पाल ने देखा कि उसके उपहार की प्रशंसा व स्तुति हो रही है। उसने देखा कि वह रूमाल को इस तरफ से उस तरफ से हिला-डुला कर देख रही है। सहसा अपनी विलासी प्रवृत्ति से प्रेरित हो वह दीवार पर टंगे एक छोटे से आईने की ओर मुड़ी, बड़ी कुशलता से उसने अपने हाथ हिलाये, शाल खोली और वह उपहार अपने सिर पर डाल लिया।

"अरे, बाप रे!" पाल ने आश्चर्य प्रकट किया।

उसकी दोनों आँखों के नीचे ख़ून जैसी लाल बड़ी-बड़ी खराशें नज़र आयीं। उसका निचला होंठ सूजा हुआ था, जाहिर है किसी के भारी आघातों के ही कारण ऐसा हुआ होगा।

पाल के विस्मय को सुनकर उसे वे खराशें याद आयीं पर अब सोचना बेकार था। वह लपक कर कुर्सी पर जा गिरी और अपने मोटे-मोटे गोरे हाथों से उसने अपना चेहरा ढँक लिया।

"बदमाशों ने, सुसरों ने आपको कितनी बेदर्दी से पीटा!" पाल के मुँह से ये शब्द यों निकल पड़े मानो उसने एक गहरी साँस ली हो।

एक लम्बी निस्तब्धता कमरे पर छा गयी। पाल घबरा गया। उसने कमरे में चारों ओर दृष्टि दौड़ाई पर न वह कुछ कह सका और न ही कुछ सोच सका। उसके मस्तिष्क में जो उलझन और वेदना घर कर गयी थी उसने उसके चेचकदार, चिन्तनशील चेहरे को और भी विकृत कर दिया और अब वह एक भयंकर, रोगियों का-सा पीला खोल बन गया।

मेज पर रखे समोवार का पानी खौल रहा था। भाप के महीने छल्ले उसमें से निकलते और हवा में ऐसे विलीन हो जाते कि उनका पता ही न चलता। उसमें से सी-सी की ऐसी अजीब आवाज़ निकल रही थी मानो कोई छोटा, हीन पशु अपनी रूखी विजय पर सीटी बजा रहा हो और उपहास कर रहा हो।

कमरा साफ़ कर दिया गया था। अब अस्त-व्यस्त नहीं लग रहा था। कमरा बिल्कुल साधारण और भद्दा; इतना भद्दा कि उसे सुन्दर कहा ही नहीं जा सकता था; हालांकि उसमें रहने वाली ने उसकी दीवार पर लगे फटे हुए कागज़ को सस्ते और भड़कीले चित्रों से ढँक कर सड़ी खिड़की की चौखट पर तीन गुलदस्ते रखकर सजाने की कोशिश की थी। छत का ताबूत-नुमा आकार असह्य था। उसे देख-देख कर मतली आती थी; ऐसा लगता था कि अब गिरी, अब ढही। और यदि छत गिरी तो कमरा बिल्कुल अँधियारा हो जायगा ऐसा अँधियारा जैसे कि कब्र।

पाल ने नतालिया की ओर देखा। उसका वक्ष धड़क रहा था, कन्धे ज़ोर-ज़ोर से हिल रहे थे। वह यह समझ ही न पाया कि ऐसा क्यों हो रहा है।

"अच्छा तो मैं चलता हूँ...फिर कभी आऊँगा!" उसने आह भरी लेकिन वहाँ से उठा नहीं क्योंकि वह वास्तव में उसके जज्बात को समझता था।

यकायक नतालिया ने अपने हाथ मुँह पर से हटाये, कुर्सी पर से कूदी और दौड़कर उसके गले में बाँहें डाल दी।

"नहीं, नहीं, खुदा के लिए न जाओ। अब क्या हो सकता है। तुमने तो देख ही लिया है अब," उसने अपना हाथ चेहरे की ओर ले जाते हुए कहा "ओह, मैं कितना चाहती थी कि तुम इसे न देख लो! कितने अच्छे हो, कितने दयालु, कितने नाजुक ...तुम...तुम कभी...मुझसे कुछ माँगते भी नहीं हो। उन दूसरों की तरह तुम गलियर नहीं हो। कल जब मैंने तुम्हें देखा तो मुझे अपार खुशी हुई। आह! मैंने सोचा तुम मुझसे मिलने आओ। लेकिन फिर मैंने सोचा मैं अपना यह भयंकर चेहरा तुमको क्योंकर दिखाऊँगी! मैं समझती थी तुम मुझे देखकर मुझ पर थूकोगे और चले जाओगे, बस यही हमारा तुम्हारा रिश्ता ख़त्म हो जायगा। इसीलिए मैंने तुमसे कहा नहीं। कोई और होता तो मुझ पर हँस देता लेकिन तुम ऐसा नहीं कर सकते...प्यारे! तुम इतने अच्छे कैसे लगते हो!"

शर्म, दुख और सुख के विस्फोट से पाल का सिर झन्नाने लगा और वह फर्श की ओर देख कर बुदबुदाया :

"नहीं, नहीं तुम तो जानती हो मैं बहुत...यानी बहुत अच्छा आदमी नहीं हूँ। मैं गूंगा हूँ। मुझे तो भले-बुरे की भी पहचान नहीं। मसलन यही बात ले लो मुझे तुमसे बहुत हमदर्दी है, मुझे रंज है तुम्हारी इस तकलीफ का। लेकिन इसे अदा क्योंकर करूँ? मैं जानता ही नहीं कैसे कहूँ। मेरे पास शब्द भी नहीं हैं। कभी ज़िन्दगी भर मैंने उन्हें नहीं सुना। कभी किसी ने...कभी भी...जो शब्द मुझे चाहिए. ..वे मैंने कभी...सुने ही नहीं..."

"अरे, मेरे कलेजे के टुकड़े! इतनी प्यारी-प्यारी बातें तो कर रहे हो और सोचते हो बात भी नहीं कर सकते! तो आओ, लो बैठ जाओ आओ यहाँ मेरे पास आकर बैठ जाओ। हम चाय पीलें। ठहरो, ज़रा मैं किवाड़ बन्द कर दूँ वरना कोई मूर्ख आन धमकेगा। ख़ुदा इनका बेड़ा गर्क करे कमबख्तों का! इन्हें दोखज का वास्ता सबों को! काश तुम्हें खबर होती कि तुम्हारे भाइयों में कितने नीच पुरुष मिले हुए हैं! अरे, मेऽरे ख़ुदा! तुम उनसे मिलो तो जी मचलने लगे...ऐसे नेस्ती हैं वे बदमाश कि बस!"

वह उत्तेजित हो गयी थी। अब जो उन्हें कोसने पर आयी तो न तो "तुम्हारे भाई" उसने छोड़ो न "मेरी बहनों" को बख्शा। ऐसा लगा कि उसमें नुक्ताचीनी करने की बहुत शक्ति है, उसकी शैली बड़ी जोशीली बड़ी अपूर्व, बड़ी पैनी थी। लेकिन इससे तो सिर्फ़ उसकी बातों की प्रभावोत्पादकता ही बढ़ी। अपने परीक्षणों और अनुभव से प्राप्त की हुई बातों को उसने ऐसे फेंका जैसे पत्थर फेंक रही हो और उन्हें एकत्र करके ऐसे अजीबो-गरीब अन्दाज़ में निष्कर्ष निकाल रही थी जो बड़े वजनी और सशक्त थे।

एक ऐसी ज़िन्दगी जिसका उसे पहले कभी संकेत भी न मिला था आज उसका बड़ा निर्मल, स्पष्ट चित्र पाल के सामने आ गया था। यह एक ऐसी अभिशप्त, घोर मूर्खतापूर्ण और गन्दी ज़िन्दगी थी कि उसका ध्यान आते ही उसकी भवों पर एक रूखे पसीने की बूँदें उभर आयीं। वह उस ज़िन्दगी और उसका वर्णन करने वाली दोनों से आतंकित हो गया था।

और सच पूछो तो वर्णन करने वाली भी बेतहाशा भड़क उठी थी। उसकी आँखें उनके नीचे की खराशों के कारण असाधारण रूप से गहरी लग रही थीं और क्रोध व आनन्द से बहुत चमक रही थीं। लगता था उसका सारा चेहरा आँखों ने ढँक लिया है। हाँ, सिर्फ़ उसका निचला होंठ, जो सूजा हुआ था और उसके छोटे–छोटे तीखे दाँत दिखा रहा था ऐसा था जो इस भ्रम को दूर कर सकता था। वह बड़े उदास स्वर में बातें कर रही थी और अपना उपहास कर रही थी। साथ ही "तुम्हारे भाई" पर तो वह प्रतीकारपूर्ण उपालंभ बरसा रही थी और उनकी सफलताओं पर भयंकर खेद प्रकट कर रही थी। कभी वह हँसती, कभी रो पड़ती और हँसी व रोना दोनों को एक ही में मिला देती। अन्त में जब वह थक गयी और उसकी आवाज़ भी कर्कश हो गयी तो वह रुक गयी और अपने भाषण के प्रभाव से वह स्वयं चकित रह गयी।

पाल की मानवीय आकृति अदृश्य हो चुकी थी। उसकी आँखें चौंधिया गयी थीं। उसके दाँत बड़े भीषण रूप से कड़कड़ाने लगे; वे इतने ज़ोर से कसे हुए थे कि उसकी कपोल–पलकें उभड़ आयी थीं। उसका सारा चेहरा भूखे भेड़िये की नाक की तरह दिखायी दे रहा था। वह नतालिया की ओर झुका पर रहा मौन। जब वह अपने शिकवे–शिकायतें और रहस्योद्घाटन पूरे कर चुकी और यह सोचने लगी कि पाल को उसकी मूर्छा से किस तरह दूर करे पर तब तक वह ख़ुद उस मूर्छा से बाहर आ चुका था।

"अच्छा!" वह चिल्लाया। "तो यानी कि मैं इन बातों के बारे में कुछ जान भी न सका!" यह सब उसने इस प्रकार कहा मानो अब जो स्थिति थी उससे वह भली भाँति परिचित हो चुका हो; और उसका हल उसके पास हो। "क्या इसी क़िस्म की ज़िन्दगी बसर कर रही हो तुम! बाप रे बाप! क्या ऐसा हो भी सकता है!" उसने अपना सिर हाथों पर रख लिया। अपनी कुहनियाँ मेज पर रखे वह फिर विचारों में खो गया।

अब नतालिया और भी गरम और दिलजोई के अन्दाज में बोलने लगी। अब उसे अपने आपको और ग़ैरों को क्षमा करने और न्यायोचित ठहराने का कारण मिल गया था। सारा–का–सारा दोष उसने शराब के सिर मढ़ने का प्रयत्न किया क्योंकि

वही एक ऐसी शक्ति थी जिसने सब कुछ नष्ट किया था। पर शीघ्र ही उसे ख़याल हुआ कि वोडका तो बहुत ही तरल-सी चीज़ है भला यही ज़िन्दगी की सारी कुरीतियों और बुराइयों की बुनियाद कैसे हो सकती है, तो उसने फिर लोगों पर तोहमतें लगानी शुरू कर दीं। जब उन्हें ख़ूब बुरा-भला कह चुकी तो फिर ज़िन्दगी की बातों पर आ गयी।

"तुम तो जानते हो, ज़िन्दा रहना बड़ा दुश्वारी का काम है। हर जगह रास्ते में गढ़े ही गढ़े हैं। एक से बचे तो दूसरे में गिर पड़े, और बस वहीं गये। इसलिए अच्छा यह है कि आँखें बन्द कर लो और जहाँ भी वह टेढ़ा-मेढ़ा रास्ता ले जाय चलते जाओ। भला ज़िन्दगी का रास्ता कहीं समतल और सीधा है भी? कौन पा सकता है उसे? हमारी ज़िन्दगी गन्दी और मुसीबतों से भरी हुई है। लेकिन शादीशुदा लोगों के लिए भी यह कोई ज्यादा सुविधाजनक नहीं है। बच्चों का होना ही, पहले तो बुरा है लेकिन उसके साथ पति, बर्तन-भांड़े और न जाने क्या-क्या और भी हैं। ज़िन्दगी तो ऐसी गन्दी है कि क्या कहा जाय!

पाल ने उसे ग़ौर से सुना और उस ज़िन्दगी की कल्पना की जिसमें चप्पे-चप्पे पर गढ़े हैं और उन्हीं के बीच से एक सकरा रास्ता गुज़रता है जिस पर इन्सान आँखों पर पट्टियाँ बाँधे चला जा रहा है और वे अँधियारे, घूरने वाले गढ़हे उसकी मखौल उड़ा रहे हैं, तथा अपनी अपवित्र और जी मचला देने वाली दुर्गन्ध से वायु को दूषित कर रहे हैं। अकेला, निर्बल इन्सान लड़खड़ाता हुआ, चक्कर खाता है और गिर पड़ता है...

अब उसके वक्ता ने कुछ छोटी-सी दार्शनिक विषय पर बहस छेड़ दी थी। अब वह कुछ अनोखी बातों के बारे में बातें कर रही थी – कब्रों की, उन पर उगे हुए चिरायते, ज़मीन की नमी और उमस की...

पाल को लगा कि वह अभी रो पड़ेगा। अब उसके जाने का वक़्त हो गया था।

"मैं जा रहा हूँ। फिर आऊँगा," उसने आहिस्ता से कहा। नतालिया ने उसे रोकने की कोशिश न की। विदा होते समय उसने सिर्फ़ अपने वे दो कोमल शब्द कहे, "जल्दी आना" और पाल ने उस पर सिर हिला दिया।

वह बाहर गली में निकल गया। घण्टों वह शहर में भटकता रहा और यह महसूस करता रहा कि आज शाम को मैं बालिग हो गया हूँ। उसे महसूस हुआ अब वह बड़ा हो गया है और वजन में भारी हो गया है क्योंकि वह अपने साथ अनेक नये विचार, नयी कल्पनाएँ और नये जज्बे लिए हुए था। उसके आस-पास की हर चीज़ में, सारे शहर में कुछ नयापन दिखायी दिया, उसे सन्देह होने लगा,

उसका विश्वास डिग गया और दिल में एक ग्लानिपूर्ण दया का भाव, उमड़ आया। यह शायद इसलिए हुआ हो क्योँकि उस दिन पाल को शहर के बहुत से हिस्सों के रहस्य मालूम हो गये थे।

वह रात भर घूमता रहा और जब सूर्य की किरणों ने अपना प्रकाश धरती पर फैलाया तो वह घर लौट आया।

## 7

**ए**क सप्ताह बीत गया। पाल लगातार सात दिन तक नतालिया से मिलने जाता रहा।

जीवन के सम्बन्ध में साधारणतया और अपने दोनों के जीवन के बारे में विशेषतया जो उन्होंने बातें की उनसे दोनों को असीम आनन्द प्राप्त हुआ। पाल ने जो ख्वाब अस्पताल में देखे थे अब वह उनकी ताबीर देख रहा था। उसने नतालिया को शान्तस्वभावी एरिफी के बारे में बताया, अपनी उस ज़िन्दगी के बारे में बताया जब वह छोटा लड़का था और स्नानगृह के समीप गढ़े में पड़ा रहता था और बाद में किस तरह कब्रिस्तान के आस-पास, शहर और गांवों में घूमा-फिरा करता था। इन तमाम विचारों में कुछ उलझन और आत्म-विश्वास की कमी की छाप लग गयी थी। लेकिन इसमें भी जो खास अभिप्राय निहित था वह यह कि उसकी ज़िन्दगी में कहीं कुछ-न-कुछ अभाव है, कहीं कुछ ऐसा अंग टूट गया है जिसकी मरम्मत बहुत ज़रूरी है।

नतालिया ने भी उसे अपनी रामकहानी सुनायी जो बड़ी साधारण थी। जब सोलह वर्ष की थी और एक व्यापारी के घर पर नौकरानी का काम करती थी तो किसी ने अचानक मेरे साथ पाप किया था। मेरे माँ बाप ने मुझे घर से निकाल दिया। वे निम्न मध्य वर्ग के लोग थे और उनका नाम क्रिब्त्सोव था। तमाम लोगों की भाँति जिनका ऐसे अवसर पर कोई पुरसा हाल नहीं होता मैं भी बाहर सड़क पर आन पड़ी। सहसा एक परोपकारिणी मुझे मिली और उसके बाद एक परोपकारी पुरुष भी। एक और परमार्थी मिला – फिर एक और और उसके बाद तो भलेमानुसों का ख़ुदा जाने कहाँ से, रेला आ गया और तब से लेकर आज आठ वर्ष तक उनकी संख्या बढ़ती ही गयी। आह भरते हुए उसने अपने तमाम गुनाहों को स्वीकार किया। लेकिन पाल इन तमाम परोपकारियों को पहले ही जान चुका था। उस कहानी को सुनकर तो वह सिर्फ़ उदास हो गया, उसके प्रति कोई विशेष प्रतिक्रिया उसमें न पैदा हुई।

अब उन दोनों में एक साधारण मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध कायम हो गया था। और

उससे उसी लहजे में और उसी अपनत्व के साथ बातें करती थी जैसे किसी स्त्री से करती। और वह भी उससे इस तरह गुफ्तगू करता जैसे किसी मर्द से बातें कर रहा हो। नतालिया के चेहरे की खराशें अब धीरे-धीरे मिटती जा रही थीं। उसके चेहरे का प्राकृतिक, स्वस्थ गुलाबी रंग फिर बहाल होने लगा था। वह बड़ी हृष्ट-पुष्ट थी। देवदासियों का पेशा करने वाली स्त्रियों के गालों पर जो हल्का पीलापन आ जाता है वह उसके चेहरे पर अभी बहुत नुमायाँ नहीं हो पाया था। गाने से उसे प्रेम था और वह प्राय: बड़े मूर्खतापूर्ण दुखप्रद गाने गाया करती थी जो सदैव उसके असफल प्रेम की अभिव्यंजना ही करते रहते थे। लेकिन न जाने क्यों बजाहिर 'प्रेम' शब्द से उसके हृदय में कोई खास आनन्दप्रद भाव नहीं पैदा होते थे। प्रेम शब्द का जिस उदासीनता और रुखाई से वह उच्चारण करती थी शायद कोई 60 वर्षीया वृद्धा भी न करती। क्योंकि वृद्धा कम-से-कम इस शब्द द्वारा अपने अतीत की उन मधुर और सुखद स्मृतियों को तो याद कर लेती है।

वह पाल से बहुत मुहब्बत करती थी और यह था भी बहुत स्वाभाविक ही। वही तो पहला व्यक्ति था जो उसके पास न गया था, जा ही नहीं सकता था जैसा कि उससे पहले सभी लोग किया करते थे। वह समझ गयी थी कि उसका व्यवहार उसके साथ बहुत ही विनम्रता का था – ऐसा जैसा कि स्त्रियों के प्रति होना चाहिए था – और उससे उसका दिल ख़ुश होता था, वह कुछ अच्छा महसूस करती थी। उसके इस रवैये से यह ज़रूरी न रहा कि नतालिया उसके साथ अशिष्टता का व्यवहार करे – या निर्ल्लजता बरते। और न ही अब यह आवश्यकता शेष रही थी कि वह अपने आप में वह नकचढ़ापन इख्तियार कर ले जो अभी तक उसकी ज़िन्दगी में घर न पाया था। साथ ही वह उससे हरेक बात बड़ी सादगी और सीधेपन के साथ कह देती थी, और वह भी हालांकि ख़ुद बहुत कम बोलता था लेकिन नतालिया की बातें बड़े ध्यान से सुना करता था।

अब पाल की जबान भी खुल गयी थी और वह पहले की अपेक्षा कहीं अधिक बोलने लगा था। यह भी बड़ा स्वाभाविक था क्योंकि वह उसे भली प्रकार समझने लगी थी – उसकी आत्मा और उसके विचारों की क़द्र करती थी। वह उसके लिए प्रिय और अभिन्नहृदय बनता जा रहा था। पर इस सबसे पाल को अचरज ही होता था। वह उसे असाधारणतया भलाई, दयालुता और नम्रता का बर्ताव करती थी और फिर मजे की बात तो यह थी कि वह उन्हीं औरतों में से एक थी जिनके बारे में उसने अब तक कभी कोई अच्छी बात सुनी ही न थी।

प्राय: वह एरिफी की बातें याद किया करता था कि एरिफी और नतालिया में कौन बेहतर व्यक्ति है। पर उसने इस प्रश्न का उत्तर स्वयं कभी न दिया, उसे

अन्देशा था कि कहीं वह उत्तर स्वर्गीय की स्मृति का अपमान न कर दे कहीं उसके लिए हानिकारक सिद्ध न हो जाय। शामें पाल के लिए असीम आनन्द की वस्तु थीं। क्योंकि उस समय वह अपना काम समाप्त करके आजादी के साथ और बआसानी नतालिया के घर आ सकता था। वे साथ बैठते, चाय पीते और घण्टों बेफिक्री के साथ बातें करते थे।

वह मार्मिक छोटी-छोटी कहानियाँ जो सस्ते काग़ज़ पर छपी होती थीं, और दो या पाँच कोपेक की होती थी बड़े चाव से पढ़ती थी। उसका सारा ढेर उसके पलंग के नीचे रक्खे बक्स में भरा हुआ था। कभी-कभी वह कोई कहानी पाल को भी बड़े उत्साह से पढ़कर सुनातीं और उसे पढ़ने के लिए प्रेरित करती जिसके लिए वह हमेशा वायदा कर लेता था।

पाल के दिल का बोझ हल्का हो गया था, वह अब निश्चिन्त हो गया था। अब उसने हँसना भी सीख लिया था जो इत्तेफाक से उसे शोभा नहीं देता था। मिरोन बड़ी प्यार भरी नज़रों से उसकी ओर देखता और मन-ही-मन हँसता, कभी-कभी तो वह बड़ी धूर्तता से हँस पड़ता लेकिन पाल पर इसका कोई विशेष प्रभाव न पड़ता वह तो अपने मालिक को अब पहले से भी अधिक चाहने लगा था। मिरोन भी पाल की बातों में ख़ूब दिलचस्पी लेने लगा। और पाल उसके इस उपकार का बदला गधे की तरह काम करके देता था।

एक दिन मालिक ने पूछा :

"अरे पाल, अगर तू मुझे भी किसी दिन अपने साथ वहाँ ले चले तो कैसा रहे?"

पाल की जिज्ञासा बढ़ी और उसने मिरोन का यह सुझाव स्वीकार कर लिया और एक दिन शाम को वे दोनों नतालिया की अटारी में बैठे चाय पी रहे थे। वृद्ध बैठा, बड़ा चौकन्ना हो उन दोनों को देखता रहा और बातें सुनता रहा और बीच-बीच में कहीं दो या तीन बार चुटकियाँ लेता रहा।

उस दिन शाम उन तीनों ने बड़े हर्ष व उल्लास में बिताई। पाल के साथ घर वापस आते हुए पहले तो मिरोन कुछ मन-ही-मन बुदबुदाया। फिर पाल के कन्धों पर हाथ रखते हुए उसने कहा :

"तू भी बड़ा मजेदार लड़का है, भैया! और वह भी – ख़ूब लौंडिया है। अगर तुम दोनों की कभी खींचा-तानी न हुई तो बड़े मजे से रहोगे दोनों।"

पाल के पल्ले खाक न पड़ा लेकिन यह अनुमान लगाते हुए कि मालिक ने वह अच्छे ही मन से कहा होगा उसने उसे धन्यवाद दिया ऐसे वक्तों पर जब वह गड़बड़ा जाता था धन्यवादों का ही सहारा ढूँढा करता था।

एक बार जब पाल और नतालिया हमेशा की भाँति बैठे हुए चाय पी रहे थे – और वे दोनों थे बड़े जबरदस्त पियक्कड़ – तो उन्होंने यही बात छेड़ दी कि कौन क्या पसन्द करता है। पाल ने अपनी पसन्द की चीज़ें गिनायीं और फिर वह नतालिया की फेहरिस्त सुनने लगा।

नतालिया ने कई चीज़ों के नाम लिये। झूले, कागनेक शराब जिस में लेमनेड मिली हुई हो, (बल्कि सल्सर के साथ तो कागनेक उसे और भी अधिक पसन्द थी) सर्कस, संगीत, गाने, किताबें, हेमन्त (क्योंकि यह ऋतु बड़ी उदास होती है) छोटे-छोटे बच्चे (उनके शरारती बनने के पहले) गोश्त, पकौड़ियाँ आदि, आदि और अन्त में सूची ख़त्म करते हुए उसने कहा कश्तियाँ।

"यह तो मुझे बहुत ही पसन्द है," उसने अपने दिल की बात कह दी, उसकी आँखें चमक रही थीं। "एक में सवार होओ तो वह ऐसी झुलाती है मानो बच्चे को पालने में झुला रही हो। और इस तरह तुम बच्चे बन जाओगे, कोई बात तुम्हारी समझ में नहीं आयेगी, न ही तुम कुछ सोचोगे बस घूमते रहोगे, सैर करते रहोगे। ...मुझे मौका मिले तो मैं तो बस सैर ही करता रहूँ, सारा समुद्र देख लूँ और ज़िन्दगी भर नाव में बैठी रहूँ। मजा आ जाय बस! आह, क्या आनन्द आया नाव की सैर में!"

और इसके फलस्वरूप उन्होंने इतवार को नाव में सैर करने की ठानी। जुलाई का महीना था, मौसम अच्छा था – साफ़ और गर्म। उन्होंने एक हल्की, ठोस नाव चुनी। पाल ने पतवार थामी और प्रवाह के विरुद्ध उन्हें खेते हुए चले। किनारा एक ओर से तो कत्थई रंग की चट्टान से घिरा हुआ था और दूसरी ओर हरी झाड़ियों की लम्बी कतार थी जिनमें से यत्र-तत्र ऊँचे, सफ़ेद, भरे वृक्ष खड़े आसमान को छूते थे; रुपहले रंग के पापलर वृक्ष, और हवा में ज़ोर से हिलाते हुए ओक के दरख़्तों की शाखाएँ नीचे की ओर झुकी थीं। नाव आगे बढ़ती गयी और अपने पीछे कल-कल करते हुए पानी के लहराते हुए झाग छोड़ती गयी जो निराशा और असन्तोष की आवाज़ें निकालते रहे क्योंकि नाव से आगे न बढ़ सकने का उन्हें काफ़ी मलाल रहा। निर्मल और गहरे आकाश का प्रतिबिंब उसी प्रकार पानी में दिखायी दे रहा था जैसे कि उन झाड़ियों और वृक्षों की परछायीं उसमें पड़ रही थी। वृक्षों की छाया पानी की सतह के बिल्कुल नीचे पड़ रही थी। झाड़ियाँ इस अदा व नाज के साथ आगे-पीछे हिल रही थीं मानो मन-ही-मन अपने आप पर प्रसन्न हो रही हों।

साहसिक और चपल समुद्री पक्षी बड़ी फुर्ती से पानी में तैर रहे थे। लम्बी दुम वाले पक्षी अपनी काली दुमें बेहूदगी से हिलाते हुए तट पर ऐसे दौड़ रहे थे।

जैसे वे छोटे कौवे हों। जब नदी की लहर तट से टकराती तो किनारे पर पड़े पत्ते काँपने लगते थे। हर कहीं कोई गीत गा रहा था जो बड़ा सबल, मधुर और सुरीला था जिसकी आवाज़ नदी के बहाव के साथ चली आती थी।

लाल कमीज पहने हुए, सिर खोले पाल बड़ी समाना से और ज़ोर शोर से कश्ती खे रहा था मानो कोई अनुभवी नाविक अपनी पेशियों पर ज़ोर देकर नाव खींच रहा हो। कभी उनके बालों का गुच्छा उसके माथे पर आ गिरता था जिसे वह सिर का एक झटका देकर पीछे को कर लेता था। उसकी आँखें हर्ष से चमक रही थीं और वह उस सूखी, सुगंधित वायु में गहरी-गहरी साँसें ले रहा था। कभी-कभी वह कह उठता : "वाह, वाह कैसा ख़ूबसूरत समाँ है!"

नतालिया घुटनों पर हाथ रखे उसके रूबरू बैठी हुई थी और उसके होठों पर एक अलौकिक मुस्कान नृत्य कर रही थी। जैसे ही पतवार पानी में डुबकी लगाती वह भी उसके साथ हिचकोले खाती जाती। पतवार के पानी में डूबने में सुन्दर, चमकीली बूँदें नदी के धरातल को चूमती हुई धीरे-धीरे टपकती थीं। नतालिया ने नाव के खिवैया की ओर देखा जो विशालकाय और हृष्ट-पुष्ट था और उसकी नर्म व नाजुक झुकी हुई आँखों से निकल कर मुस्कान उसके होंठों तक फैल गयी जो भरी-पूरी और सुगंधित मुस्कान थी।

उन दोनों में से कोई भी कुछ न बोलना चाहता था। दोनों ने महसूस किया कि सब कुछ ख़ामोशी में ही अच्छा लग रहा है। वे दोनों किसी लोकप्रिय रोमाँस के नायक व नायिका प्रतीत हो रहे थे – अभी तक तो उनमें प्रेम आरंभ ही हुआ था लेकिन वे पहले से ही एक दूसरे को निकट से देखने और समझने की कोशिश में थे। और यही कोशिश थी कि हालात बेहतर बनाने और उनके एक दूसरे के निकट आने में उन्हें काफ़ी मदद मिली थी लेकिन पाल और नतालिया अभी तक नायक-नायिका जैसे लग ही रहे थे, हुए नहीं थे क्योंकि कुछ कारण ऐसे थे जो उन्हें ऐसी स्थिति में रखे हुए थे और जिनका ज्ञान केवल भाग्य ही को था।

जब नैया खेते-खेते वे दूर, किनारे के करीब एक घास के प्लाट पर पहुँचे तो पाल ने पूछा, "क्या किनारे की ओर चलें?" यह घास का प्लाट प्रकृति ने खास तौर पर छोटे-मोटे पिकनिक के लिए बना दिया था। वह सारा-का-सारा भोज वृक्षों से घिरा हुआ था। छोटी-छोटी नर्म घास जिसमें ढेरों साधारण से फूल लगे थे वहाँ उगी हुई थी।

वे नाव से निकल कर वहाँ पहुँचे; उनके पास खाने का डिब्बा, पीतल की केतली और एक बोतल थी जिसमें कुछ पीने के लिए था। आधे ही घण्टे में

घास-प्लाट पर आग सुलग गयी थी जिस पर चाय की केतली रखी हुई थी। थोड़ी-थोड़ी देर में केतली के ढक्कन में से पानी की बूँदें निकलतीं और आग पर गिरतीं, और छन-छन की आवाज़ निकालते हुए भाप बन कर उड़ जाती थीं। धुआँ भी सफ़ेद फाख्ता की भाँति घूमता-इठलाता हुआ गोल-गोल मालाएँ गूंथता हुआ हवा में विलीन हो जाता था और छोटे-छोटे कीड़े-मकोड़े उसकी गन्ध और गर्मी से मदमस्त भिनभिनाते हुए बड़ी आलस के साथ ज़मीन पर गिरते जाते थे।

वहाँ की हर चीज़ शान्त व स्थित थी मानो उनकी बातें सुनने के लिए वे ख़ामोश हो गयी हों। पाल ने खड़-खड़ करते हुए पुड़िया खोली। नतालिया स्वप्नद्रष्टा का-सा मुख लिए फूल और घास के तिनके तोड़ रही थी और आहिस्ता-आहिस्ता गुनगुनाते हुए उसने उन फूलों के गुलदस्ते बना लिये थे। वैसे यह लगता बड़ा भावुकतापूर्ण था पर था कुछ ऐसा ही। नतालिया ने फूल एकत्र करके छोटी बच्ची की नाई उनकी सुगन्ध सूँघी। मैं उन अन्य नवयुवतियों से क्षमा याचना करता हूँ क्योंकि मैंने अपनी नायिका को उसी कोटि में रख दिया है जिसमें वे सब हैं। मुझे पर विश्वास कीजिये मेरा यह उद्देश्य नहीं है। यदि आप सब चुप हो जायें मैं उनकी तुलना अपनी नायिका से करने का दुस्साहस हरगिज न करूँगा। मैं कोई आदर्शवादी नहीं हूँ। मैं तो इस बात का कायल हूँ कि यदि सभी लोग अच्छे बनना चाहें और उस दिशा में प्रयत्न करें तो अवश्य अच्छे बन सकते हैं।

अब केतली में चाय का पानी उबलने लगा; उन्होंने चाय तैयार की और चाय व नाश्ता किया। वे दोनों बड़ी एहतियात के साथ ज़रा-ज़रा से टुकड़े एक-दूसरे के मुँह में दे रहे थे और कुछ-कुछ देर में हर चीज़ की तारीफ में एक दो वाक्य कहना न भूलते थे। जब "कुछ पीने के लिए" वाली बोतल में से निकाल कर पाल ने तीन गिलास पी डाले तो उसका सिर चकराने लगा और उसने बात-चीत करने की ज़रूरत महसूस की।

"ज़िन्दगी उन्हीं के लिए अच्छी और सुखी व समृद्ध होगी जो उसकी पेचीदगियों से वाकिफ है," पाल ने सोच-समझ कर कहा।

नतालिया ने उसकी ओर देखा और कुछ क्षण बाद कहा :

"तो इसमें अच्छाई क्या है?"

प्रश्न का उत्तर देने के पहले पाल को कुछ सोचना पड़ा। जब नतालिया ने देखा कि वह उत्तर देने में संकोच कर रहा है तो उसने उसके उत्तर की प्रतीक्षा किये बग़ैर ही कहा :

"मैं ख़ुद भी नहीं जानती। लेकिन मेरे लिए तो ठीक भी यही है कि मैं इसे न समझ पाऊँ। कम-से-कम बोलने में बड़ी आसानी होती है। ज़िन्दगी जैसी कुछ

भी है उसे वैसे ही गुजार दी जानी चाहिए और दूसरे लोगों पर कतई ध्यान नहीं देना चाहिए।"

अब वे दोनों फलसफा बघारने लगे लेकिन शीघ्र ही उससे उक्ता गये। उन्होंने गप्पें मारना शुरू कर दीं। पाल का खुमार बढ़ता गया। शान्त व गरम संध्या का आगमन हुआ। नतालिया ने देखा कि अन्धेरा हो रहा है; वह उदास हो गयी और घर जाने की उसने इच्छा प्रकट की। उसे पाल को यह समझाने और विश्वास दिलाने में बड़ी देर लगी कि अब घर लौटने का वक़्त हो गया। हालांकि वह उसकी बात मान भी गया लेकिन उसका शरीर टूट रहा था इसलिए वहाँ से हिला तक नहीं। वह एक बेहूदा हँसी हँसा जिससे जाहिर हुआ कि वह अपने शक्तिशाली नशे और उसके काफिर असर से बड़ी मुश्किल से लड़ रहा है।

आख़िरकार वह उसे नाव की तरफ खींच ले गयी जहाँ पहुँच कर वह फ़ौरन लम्बा हो गया और उसे नींद आ गयी। नतालिया ने डांड सँभाल लिए। नाव नदी के प्रवाह के साथ धीरे-धीरे तैरती हुई किनारे की ओर चली। हवा का एक तेज झोंका आया और उनकी सुलगाई हुई आग बिखर गयी। चिनगारियाँ पानी पर और किनारे पर झाड़ियों की पड़ी हुई परछाई पर जाकर गिरीं।

नतालिया नाव को नदी के बीच की ओर को ले चली। धुँधले चन्द्रमा की मृदुल चाँदनी में उसने ख़ामोश हो पाल को निहारा लेकिन वह ज़रूर किसी गमगीन ख़याल में घिरी हुई होगी क्योंकि उसके कपोलों पर आँसू ढुलक आये थे। किनारे के एक ओर झाड़ियों की पंक्तियाँ थीं और दूसरी ओर पैनी चट्टाने थीं। आकाश में उज्ज्वल तारागण चमक रहे थे। चारों ओर निस्तब्धता छाई हुई थी। ऐसा महसूस होता था मानो हरेक चीज़ तन्द्रा-मग्न हो गयी हो। यहाँ तक कि नाव के नीचे का पानी भी बिल्कुल गतिहीन और मौन था। ऐसा घना अन्धकार नीरवता उस पर आच्छादित थी कि लगता था कि वह मक्खन की तरह चिकना और मोटा है। शहर की रोशनियाँ दूर कहीं फासले पर टिमटिमा रही थीं और वहाँ से एक पोली-सी आवाज़ सुनायी दे रही थी जो पारी-पारी से पहले तो ऐसी लगी जैसे किसी सोये हुए पशु की कराह लेकिन बाद में लहर की भाँति लगातार जारी रही।

जब वे तट के समीप पहुँचे तो कश्ती ज़ोर से किनारे से टकराई और पाल जाग पड़ा। उसे शर्म आयी कि वह अब तक सोता ही रहा।

जब वे तट से दूर उस निर्जन और सुनसान गली तक आ पहुँचे तब पाल ने कहा, "मुझे माफ़ करना नतालिया, कि मैंने इस प्रकार की हरकत..."

वह अचम्भित हो गयी :

"किस लिए?"

तब बड़ी दृढ़ता के साथ उसने नतालिया को समझाया कि इस प्रकार नाव में ही सो जाना उसके लिए मुनासिब न था।

"अरे वाह!" उसने आश्चर्य से कहा। "यह तुम्हें कहाँ से सूझी? इस क़िस्म की बकवास – कहाँ सीख गये तुम?"

"यह बकवास नहीं है," उसने जिद्द के साथ कहा, "यह तो तुमने ख़ुद ही उस किताब में से पढ़ कर मुझे सुनाया था। याद नहीं तुम्हें?" और उसने उसे वह वाक्य स्मरण कराया। "यही बात है ना?" उसे अपनी बात के सही होने पर गर्व हुआ और फिर उसने कहा : "क्या किताबों में बेवकूफी की बातें हो ही नहीं सकतीं?" और इसी बात से हम अनुमान लगा सकते हैं कि साहित्य के बारे में उसका ज्ञान कितना सीमित था।

जब वे घर पहुँचे तो वह जीना चढ़ा कर आख़िरी सीढ़ी पर जाकर रुक गया। अपना हाथ आगे बढ़ाते हुए वह बोला, "अच्छा, विदा।" नतालिया हिचकिचाई, पर अचानक उसने उसका हाथ अपने दोनों हाथों में ले लिया और उसे ज़ोर से दबा कर कुछ विचित्र स्वर में वह भुनभुनायी :

"मेरे प्यारे! तुम कितने सुन्दर हो! कितने सुन्दर!"

और उसे यों ही अपनी प्रतीक्षा में स्तम्भित छोड़ कर झटपट सीढ़ियाँ चढ़ कर गायब हो गयी।

कुछ ही दिन बाद उन्होंने फिर नाव की सुहानी सैर का इरादा किया...

और ज़िन्दगी यों ही गुज़रती रही।

लेकिन जिस तरह इन्सान एक ही क़िस्म की ज़िन्दगी से ऊब जाता है उसी तरह नियति इस प्राकृतिक दृश्य के रसास्वादन से उक्ता गयी थी और इसीलिए नतालिया ने इस काल्पनिक प्रणय को वास्तविक रोमाँस में परिणत कर दिया।

और वह कुछ इस तरह शुरू हुआ :

एक दिन सायं एक मधुरदर्शी, मूँछों वाले चेहरे ने दूकान के दरवाज़े में से झाँका और बड़ी विनम्रता से पाल से पूछा :

"अगर आप इजाजत दें तो क्या मैं मालूम कर सकता हूँ कि क्या यहाँ नतालिया नामक एक नवयुवती रहती है? नतालिया...अर – रर –"

उस ख़ूबसूरत शक्ल इंसान के लिए बेहतर होता अगर वह यह सवाल न करता। सवाल सुनते ही पाल की आँखें भड़कते हुए शोले की भाँति लाल हो गयीं।

"मुझे नहीं मालूम," उसने बड़ी रुखाई और गुस्से से जवाब दिया।

"आप जानते तो हैं उन्हें – एक भोली-सी गोरे रंग की, नीली आँखों वाली

मझोले कद की नवयुवती हैं वह।"

"जी, नहीं मैं नहीं जानता," पाल ने दोहराया, अब तो उसका लहजा वास्तव में सख्त और गुस्से से भरा था।

"नहीं, नहीं साहब...अऽहँ उन्होंने तो कहा कि यहीं रहतीं हैं," सवाल करने वाला सकुचाया, उसे यह जान कर निराशा हुई थी कि वह यहाँ नहीं रहती। "माफ़ कीजियेगा, अच्छा, नमस्ते!"

पाल ने उसके अभिवादन का उत्तर भी न दिया। हालांकि वह आदमी जा चुका था फिर भी वह यही सोचता रहा कि बूटों का फर्मा उसके सिर पर दे मारे।

"क्या आप जानते हैं यहाँ नतालिया नाम की कोई लड़की रहती है?" आँगन में से किसी व्यक्ति की विनम्र, भारी-भरकम आवाज़ सुनायी दी :

पाल फार्मा हाथ में लिये, उछला और दरवाज़े की ओर लपका। लेकिन ज्योंही वह पहुँचा नतालिया की आवाज़ उसे सुनायी दी :

"इधर से, इधर से आओ, याकोव वासिलिच!"

पाल लौट पड़ा, दूकान में आकर बैठ गया। बौखलाहट के कारण उसने सूजा गलत जगह घुसेड़ दिया, जूते को फर्श पर फेंक दिया और फिर आँगन की ओर चल पड़ा देहलीज पर खड़ा होकर उसने खिड़की की ओर दृष्टि डाली। उसे दिखायी तो कुछ भी न दिया पर नतालिया की आवाज़, खिलखिलाहट और आदमी की गहरी, लुभाने वाली आवाज़ें उसे ज़रूर सुनायी दीं। फिर जीने पर किसी की पद-चापें सुनायी पड़ीं। वे दोनों बाहर आ गये। पाल ने झट दरवाज़ा भेड़ दिया और ज़रा-सी दरार में से वह आँख लगाये झाँकने लगा।

डर्बी सफ़ेद हैट वाले ऊँचे आदमी के साथ नतालिया चली। वह अपनी मूँछों पर ताव दिये जा रहा था और उसे घूरता जा रहा था। नतालिया ने आँखें टेढ़ी करके दरवाज़े की ओर देखा जिसके पीछे पाल खड़ा हुआ था। वे दोनों आगे बढ़ गये।

पाल दुकान पर लौट आया और खिड़की के करीब बैठ गया। उसने सिर पीछे की ओर कर लिया ताकि सड़क को ठीक से देख सके। लेकिन वहाँ से उसे सिर्फ़ सामने की ऊपर की मंजिल, छत और आसमान ही दिखायी दिये। आज पहली बार उसने महसूस किया मानो वह तलघर के इस गहरे, नम और धुंएँ वाले फर्श में गड़ा जा रहा है। गम व मलाल के बोझ से उसका सिर लुढ़क गया और वह विचार-सागर में डूबने-उतरने लगा। मालिक उसके पास आया और उससे बातचीत करने लगा लेकिन उसे जवाब न मिला। बड़े हमदर्दी-भरे स्वर में उसने पूछा :

"क्या हुआ पाल? तू तो ऐसा दुखी और निढाल लग रहा है जैसे तुझ पर

कोई पहाड़ गिर पड़ा हो!"

"ओह!" पाल ने जवाब दिया। उसकी नज़रों में निराशा झाँक रही थी, मानो उसे किसी की तलाश हो।

"मैं यकीन के साथ कह सकता हूँ अभी-अभी जो स्त्री किसी आवारा गर्द के साथ गयी है नतालिया ही थी," मालिक ने कहा।

"नहीं, वह नहीं थी।"

"नहीं? तो जाकर खुद देख क्यों नहीं लेता उसे?" मिरोन ने अपने नौकर की ओर सन्देह और जिज्ञासा की नज़रों से देखते हुए पूछा,

"अभी जाता हूँ मैं।"

और वह अटारी पर जाकर ही माना, लेकिन नतालिया के कमरे में ताला लगा हुआ था। वह जीने की सबसे ऊपरी सीढ़ी पर बैठ गया और जीने के अन्धकारमय गढ़े की ओर देखने लगा। बैठे-बैठे उसे जमाहियाँ आने लगीं और वह सिर झुकाये उस निस्तब्ध वातावरण में वहीं बैठा रहा।

नीचे कोई खड़ा बातें कर रहा था पर पाल की समझ में वे बातें न आयीं। वह तो एक ही पहेली में उलझा हुआ था। किस तरह नतालिया को इन बदमाश सफ़ेद हैट वालों के साथ घूमने-फिरने से रोके। इसके पहले जो शख़्स आया था। वह भी डबी फेल्ट हैट लगाए था। लेकिन उसका रंग काला था और उसके मूँछों के बजाय खशखशी लाल दाढ़ी थी। वह भी बिल्कुल शैतान की नकल था। पाल ने सोचा आख़िर ऐसे आदमी पैदा ही क्यों होते हैं, जीते ही क्यों हैं? उन्हें देश निकाला देकर कड़ी मेहनत क्यों नहीं करवाई जाती? पाल उलझन में पड़ गया, इन जैसे सवालों का जवाब देना उसके बसकी बात न थी। एक अर्से से उसकी उदासी और दुःख ख़त्म हो गये थे, अब वे फिर पैदा हो गये। इसीलिए यह विचार बड़ी सख्ती से उसे सता रहा था और उसे महसूस हो रहा था वह घायल हो गया है जिसकी वेदना उसे और भी सता रही थी।

इसी मनोव्यथा में लीन वह बैठा प्रतीक्षा करता रहा और घण्टा, दो घण्टे तीन घण्टे यहाँ तक कि सवेरा हो गया और नतालिया न आयी। आख़िरकार उसे किसी बग्घी के फाटक पर रुकने की कर्कश ध्वनि सुनायी दी। आँगन में क़दमों की चापें सुन पड़ी।

उसके बदन में झरझरी-सी दौड़ गयी। वह चलने के लिए उठा लेकिन अब समय जा चुका था। नतालिया अपना पीला सिकुड़ा हुआ चेहरा और रूसी आँखें लिए सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर आयी। उसने पाल को देखा और अचानक स्तम्भित हो खड़ी रह गयी।

"अरे, तुम! क्यों?" उसने कहा और उसकी ओर देखने के बाद चुप हो गयी।

उसका ख़ून सूख गया, वह एड़ी से चोटी तक काँप गया। उसका चेहरा रात भर जागने के कारण रूखा हो गया, रात भर जो विचार उसके मस्तिष्क में आते रहे उन्होंने उसे व्याकुल कर दिया था। उसकी आँखों ने उसे भयभीत कर दिया; आज उसकी नज़रें ऐसी भयभीत लग रही थीं कि नतालिया ने पहले उन्हें कभी न देखा था।

नतालिया इतनी शर्मिंदा न थी जितनी भयभीत। अरगनी पर झुकी हुई वह निश्चल खड़ी रही और वह बड़ी ढिठाई से उसकी ओर घूरता रहा, वहाँ से हिला तक नहीं। वातावरण में नीरवता थी वह ढलुंआ छत में लगी खिड़की से आती हुई रोशनी से चकाचौंध, उसके बदन में हड़फूटन हो रही थी। वह प्रकाश सीधे पाल के चेहरे पर पड़ रहा था और सारे जीने से गुज़रते हुए नतालिया को छू रहा था और उससे उसके चेहरे की भाव-भंगिमा क्षण-प्रतिक्षण बदलती जा रही थी।

पाल यदि ख़ुद अपने चेहरे को देख सकता तो उसे बड़ा अचरज होता। घुटनों पर बाँहें रखे और ठोढ़ी पर हथेलियाँ टिकाए वह बैठा हुआ ऐसा देख रहा था जैसे जज बैठा अपराधी की ओर देख रहा हो। स्थिति बड़ी विकट थी और हर क्षण वह अधिक दमघोट बनती जा रही थी। दोनों अचल खड़े रहे। वह खौफ के मारे पीली पड़ती गयी और पाल की कठोर, निन्दापूर्ण दृष्टि को देख-देखकर वह काँपने लगी। उसे महसूस हुआ कि पाल का तीखा, चेचकरूह चेहरा और भी प्रचण्ड बनता जा रहा था, घृणा और क्रूरता से वह लाल पीला होता जा रहा था। ख़ुदा जाने यह कठिन परिस्थिति किस प्रकार खत्म होती यदि उस जोड़े की सहायता को बिल्ली न आ जाती। बिल्ली फुदकते हुए छत पर से कूदी, पाल के ऊपर से उछली और सररर से सीढ़ियाँ तय करती हुई नतालिया की टांगों में से होकर अदृश्य हो गयी।

मैं न तो प्रेतात्माओं को उकसाता हूँ और न ही मानव शक्ति को मैं केवल एक ही शक्ति द्वारा शासित हूँ और वह है सत्य की शक्ति। मैं तो महज एक बिल्ली पेश कर देता हूँ जो कि बजाहिर बड़ी छोटी और महत्त्वहीन घटना है और आये दिन होती रहती है लेकिन उससे बड़ी-बड़ी घटनाओं का जन्म होता है। ऐसी तुच्छ घटनाओं पर बहुत कम ध्यान दिया जाता है। मैं आपको इस सम्मानीय बिल्ली का आकार और रंग तो नहीं बता सकता लेकिन जिस सहायता से इसने पाल और नतालिया को उस विकट स्थिति से उबारा उसके लिए मैं उसका बहुत अहसानमन्द हूँ।

एक चीख़ नतालिया के मुँह से निकली और फुर्ती से सीढ़ियाँ तय करती हुई ऊपर की ओर भागी और पाल उछल कर एक ओर को हट गया।

"मनहूसनी, मुझे कैसे डरा दिया कमबख्त ने।" नतालिया ने हाँफते हुए धीरे-धीरे कहा और दरवाज़े का ताला खड़खड़ाने लगी।

पाल भी काँप गया। दोनों की मूर्छा अब भंग हो गयी थी। कमरे का द्वार खोल कर नतालिया ने उसे अन्दर बुला लिया।

पाल चुपचाप अन्दर चला गया। उसके चेहरे से ऐसा झलक रहा था मानो उसने कोई बड़ा महत्त्वपूर्ण फैसला कर लिया है। खिड़की के पास पड़ी कुर्सी पर जाकर वह बैठ गया और नतालिया अपनी पुरानी वजह की शाल खोलने लगी।

"आज इतने सवेरे कैसे उठ बैठे तुम?" नतालिया ने पूछा। उसे लगा कि ख़ामोशी फिर वहाँ छा जायगी और फलस्वरूप एक बार और वही विकट स्थिति पैदा हो जायगी।

पाल ने बड़ी निराशा से उसकी ओर देखा। फिर मानो अन्दर से प्रोत्साहित हो उसने भारी आवाज़ में और लड़खड़ाती जबान से कहा।

"मैं तो अभी तक सोया ही नहीं हूँ। कल शाम जबसे मैंने उस बदमाश को तुम्हारे साथ देखा – तबसे मुझे चैन ही न मिला, नींद भी न आयी। तुम इस प्रकार की ज़िन्दगी बसर करना छोड़ दो! क्या तुम्हें यह अच्छी लगती है? सभी कोई जो चाहें तुम्हारे साथ खिलवाड़ कर सकते हैं। भला, क्या तुम इसी काम के लिए इस दुनिया में जन्मी थीं? यह तो शराफत नहीं है! हरगिज नहीं! क्या तुम्हें इसी में आनन्द आता है? क्या यह मुमकिन भी है? कोई भी आदमी आया, तुम्हें ले गया और तुम्हारे साथ खिलवाड़ करके छोड़ गया। नहीं, तुम बन्द करो इसे! बन्द करो मैं कहता हूँ, नतालिया!"

अन्तिम शब्द उसके मुँह से बड़े शान्त स्वर में निकले मानो उससे बड़ी दीनता से निवेदन कर रहा हो, उससे कुछ याचना कर रहा हो। जाहिर है नतालिया को उससे ऐसे किसी विस्फोट की अपेक्षा न थी, वह निश्चल खड़ी रही और शाल को ज़ोर से पकड़े रही, उसका चेहरा भय से पीला पड़ गया। उसके होंठ हिले पर उनमें से आवाज़ न आयी बल्कि उसकी बेहूदगी ही प्रकट हुई। वह कुछ कहना अवश्य चाहती थी लेकिन उसमें या तो ऐसा करने की सामर्थ्य न थी या क्या कहे इसका वह निश्चय न कर पाई थी।

पाल ने उसकी ओर देखा, अपना सिर नीचा किया और उत्तर की प्रतीक्षा करने के बाद फिर उसी विनम्रता से अपना प्रश्न दुहराया :

"नतालिया?"

वह उसके करीब गयी, उसके कन्धों पर अपने हाथ रख दिए और बड़ी उदासी, शान्तता व कटु विश्वास के साथ बोली :

"देखो, अगर तुम्हारा यही विचार है तो मैं तुमसे झूठ नहीं बोलूँगी। मैं हर बात सच-सच तुम्हें बता दूँगी। मैं जानती हूँ कि जिस क़िस्म की हरकतें मैं करती हूँ उनसे तुम्हें कोई ख़ुशी नहीं हो सकती! मैं इसे समझती हूँ, पाल! पर मैं और क्या करूँ? तुम जानते हो यही मेरी रोजी का जरिया है। मैं और कोई काम कर ही नहीं सकती। काम? मैं जानती ही नहीं काम किसे कहते हैं और न मुझे काम पसन्द है। क्या काम करके भूखों मरना कोई अच्छी बात है? लेकिन मुझमें शर्म का माद्दा ज़रूर है – यहाँ तुम्हारे सामने खड़ी हूँ। और मैं शर्मिन्दा हूँ। मुझे बहुत शर्म आ रही है पाल, यकीन जानो! लेकिन मैं और कर भी क्या सकती हूँ? और कोई काम मुझे नहीं आता। मुझे तो ऐसी ही ज़िन्दगी बसर करनी है – और मैं करूँगी। जानते हो मैं क्या करूँगी? मैं यहाँ से हटकर किसी और कमरे में चली जाऊँगी और तुम्हें पता भी न दूँगी कि कहाँ जा रही हूँ। तुम मुझे भूल जाना! तुम्हें मेरी ज़रूरत ही क्या है? बेहतर हो तुम कोई अच्छी पारसा लड़की ढूँढ लो, उससे शादी कर लो और ख़ुश रहो। तुम्हारे लिए अच्छी लड़कियों की कोई कमी नहीं!"

अन्तिम वाक्य उसका बयान नहीं था एक प्रश्न-सा था जो पाल से पूछा गया था।

पाल ने ज़ोर से सिर हिला दिया।

हम उसी के बारे में तो बातें नहीं कर रहे हैं! हरगिज नहीं। असल समस्या तो तुम ही हो, मैं नहीं! मैं हूँ ही कौन? मैं यहाँ बिल्कुल ठीक हूँ! लेकिन तुम्हें यह ज़िन्दगी शोभा नहीं देती! यह बड़ी घिनावनी है! ज़रा देखो तो! वह यहाँ आया और बग्घी में बैठाकर ले गया, छिः! जानती हो वे बदमाश हैं! वे कोई मामूली आदमी नहीं हैं। जब तुम इसके बारे में सोचती हो तो क्या तुम्हारे रोंगटे खड़े नहीं होते? साले गुण्डे कहीं के।"

"प्यारे पाल, क्या किया जाय, यह तो इसी तरह होना है," उसने पाल के कन्धे थपथपाये, उसका स्वर सान्त्वनापूर्ण था। पाल के शब्दों में जो तीव्र वेदना थी और उसके चेहरे पर जो झुंझलाहट और घृणा की छाप लगी थी उसे देखकर वह सहम गयी।

"नऽहीं, इस तरह नहीं होता है! तुम मुझसे झूठ बोल रही हो। मैं कोई दूध पीता बच्चा नहीं हूँ। तुम्हें मुझे बहलाने की ज़रूरत नहीं है। मैंने इस पर ख़ूब ग़ौर कर लिया है। बस खुलासा सबका यही है कि तुम इस ज़िन्दगी को छोड़ दो। इससे आजाद हो जाओ!"

"अरे, मेरे जिगर के टुकड़े! मैं क्या कर सकती हूँ?" उसने मैत्री भाव से धीरे से कहा, और भयभीत हुए जा रही थी और उसके कंधों से चिपटी जा रही थी।

कुर्सी में धंसते हुए, अपने एक हाथ से खिड़की की चौखट का सहारा लिए और दूसरे से अपने घृणा से प्रज्ज्वलित चेहरे का पसीना पोंछते हुए उसने संकेत किया।

"नहीं, यह होना ही चाहिए! हर कीमत पर होना चाहिए! छोड़ दो इस घिनावनी ज़िन्दगी को! निकाल बाहर करो उन हरामजादों को! लानत हो इन पर ख़ुदा की!"

"चीख़ो मत, वे सुन लेंगे। बन्द करो अपनी चीख़ें! आओ हम आहिस्ता-आहिस्ता बातें करें। ज़रा सोचो तो सही..."

"नहीं, मैं नहीं सोचूँगा! मैं पहले से ही ग़ौर कर चुका हूँ।"

"नहीं, ज़रा एक मिनट ठहरो।"

और अपना सारा साहस बटोरते हुए उसने पाल का हाथ पकड़ लिया। बैठने के लिए वहाँ कुछ नहीं था, इसलिए वह अपने घुटनों के बल उसके सामने बैठ गयी।

"मैं किसी काम के योग्य नहीं हूँ। मुझे कोई काम नहीं देगा क्योंकि मेरे पास उस क़िस्म का सार्टिफकेट है..." उससे कहना शुरू किया और एक-एक शब्द पर ज़ोर देने लगी।

वह बेचैनी से हिला। फिर सहसा उसे कुछ बात सूझी, वह जम गया, उस पर झुक गया और उसकी आँखों में आँखें डालकर बड़ी शान्ति व दृढ़ता के साथ बोला :

"देखो, क्या मुझसे शादी करोगी तुम? करोगी मुझसे शादी? आओ तो, आज से तुम्हारा – और सदैव तुम्हारा ही रहूँगा।" उसकी आवाज़ सरगोशी में तब्दील हो गयी मानो उसे किसी ने रोक दिया हो।

वह पीछे को झुक गयी, उसकी आँखें खुली-की-खुली रह गयीं। अचानक वह उछली, उसे गले से लगाया और उसके कानों में खुसर-पुसर करने लगी :

"प्रियतम! हृदयेश्वर! मेरे कलेजे के टुकड़े! शादी करोगे तुम मुझसे – मुझसे! तुम! तुम – मुझसे – शादी! तुम तो मज़ाक़ करते हो – तुम अभी बच्चे हो!"

नतालिया ने उसके चुम्बन लेने शुरू कर दिये, उसकी बाँहें पाल की गर्दन में पड़ी हुई थीं और वह पागलों की तरह हँसे जा रही थी, साथ रोये भी जा

रही थी।

आज उसके व्यवहार में पाल को कुछ अजनबियत दिखायी दी। उसकी आँखों के आगे अन्धकार छा गया था। पहले तो उसे लगा उसका ख़ून धमनियों में तेजी के साथ दौड़ रहा है। पर शीघ्र ही वह परास्त हो गया, उसने नतालिया को सख्ती से भींच लिया, और हाँफते हुए, बुदबुदाते हुए अपने गर्म, भूखे होठों से उसके चेहरे पर बार-बार चुम्बन लेता रहा...

उगते हुए सूर्य की पहली किरणें खिड़की में से होती हुई कमरे में दाख़िल हुईं और उन्होंने अपने मृदुल, गुलाबी प्रकाश से कमरा जगमगा दिया।

पाल की आँख पहलें खुली। कमरे में जगमगाहट थी और शान्ति व चकाचौंध करने वाले प्रकाश का साम्राज्य था। दूर कहीं फासले से कुछ रूखी और अस्पष्ट आवाज़ आयी। धूप नतालिया के चेहरे पर पड़ रही थी। उसकी पलकें ज़ोर से कसी हुई थीं और उसकी भवों पर क्रोध झलक रहा था। उसका ऊपरी होंठ ऊपर को उठा मानो वह असन्तुष्ट हो और उसके चेहरे से चंचलता व क्रोध झलक रहा था। उसके लाल कपोल देखकर पाल ने अनुमान लगाया कि वह सोने का सिर्फ़ बहाना ही कर रही है। उसके भूरे बाल नींद के कारण बिखर गये थे और हल्के, सुन्दर फुज्जीदार भांज उसके कन्धों पर पड़े हुए थे। एक स्थूल कन्धा तो नंगा ही था; साँस के कारण उसके पतले, गुलाबी नथुने ऊपर-नीचे हो रहे थे। उसका सारा शरीर धूप से नहा रहा था और वह चमक रही थी।

पाल उसकी बगल में लेटा हुआ उसके बालों पर हल्के-हल्के हाथ फेर रहा था। नतालिया ने आँखें खोलीं, उनमें नींद भरी हुई थी। वह उसे देखकर प्यार से मुस्कुराई और धूप से बचने के लिए उसने सिर फेर लिया।

पाल उठा और उसने कपड़े पहने। फिर चुपचाप बिना आवाज़ किये उसने एक कुर्सी उठाई और उसे नतालिया के पलंग के पास रख लिया। और फिर उसकी ओर निहारने लगा – उसकी यकसां साँसों की आवाज़ सुनने लगा। आज वह उसके इतनी निकट, जानी-पहचानी, और इतनी प्यारी लग रही थी कि पहले कभी न लगी थी। वह मुस्कुराया और अपने भविष्य के बारे में मन्सूबे बनाने लगा – इस प्रकार के ख्वाब देखना और मन्सूबे बनाना एक ख़ुश व खुर्रम प्रेमी के लिए जो अभी तक अपने प्रेम से थका नहीं है, उचित ही है।

उसने अपनी उस दूकान की कल्पना की जो वह अपने विवाह के बाद खोलने की योजना बना रहा था। एक छोटा-सा कमरा होगा; मिरोन का-सा अँधियारा और धुएँ वाला नहीं बल्कि रोशन और साफ़। उसी से लगा हुआ एक और कमरा होगा जो हमारे अपने रहने के लिए होगा। वह भी होगा छोटा-सा ही,

लेकिन उसकी दीवारों पर नीला काग़ज़ चिपका हुआ होगा। वह बड़ा ख़ूबसूरत दिखायी देगा। कमरे की खिड़कियाँ बागीचे के सामने बनी होंगी जहाँ बैठकर हम लोग चाय पिया करेंगे। गर्मी के मौसम में हरियाली से उठती हुई रसीली ख़ुशबू सहज ही कमरे में आ जाया करेगी। नतालिया खाना पकाया करेगी, मैं उसे जूते सीना सिखाऊँगा फिर हमारे बच्चे होंगे। और फिर इसी क़िस्म की अच्छी-अच्छी ख़ूबसूरत चीज़ें ज़िन्दगी में मिला करेंगी।

पाल आनन्द-मग्न हो उठा और उसने एक गहरी साँस ली। वह मेज तक गया, समोवार उठाया और उसे हाल में ले जाकर उसमें कोयले भरने लगा। वह ज़ोर से हँस पड़ा। उसके लिए यह सब कल्पना करना कितने सौभाग्य की बात थी! वह उठेगी और देखोगी कि समोवार मेज पर रखा उबाल खा रहा है। और वह उसके साथ बैठा हुआ घरवाली का काम कर रहा होगा! वह उसकी झट बड़ाई करने लगेगी...

जब आग की लपट बुझ गयी तो उसने कोयले और डाल दिये, फिर बड़ी सावधानी से क़दम रखता हुआ वह कमरे में वापस आ गया ताकिर आकर हरेक चीज़ व्यवस्था से रख दे। नतालिया कभी की जाग चुकी थी और उसका स्वप्न चूर-चूर हो गया था। वह अपने हाथ सिर के पीछे रखे बिस्तर पर लेटी हुई थी और बड़े फूहड़पन से जम्हाई ले रही थी। उसके चेहरे पर कोई विशेष भाव-भंगिमा नहीं थी सिवाय इसके कि उसका चेहरा यह प्रकट कर रहा था कि वह पाल को जानती है – बहुत अच्छी तरह जानती है। पाल दुखित हो उठा था।

"मैंने समोवार चढ़ा दिया है।" उसने कुछ खेद प्रकट करते हुए कहा।

"ऐं? क्या बज गया?"

"दोपहर गुज़र चुका।"

इस प्रकार की बातें करते हुए उसे डर लग रहा था। जिस प्रकार के विचार उसके मस्तिष्क में चक्कर लगा रहे थे उनके अनुसार तो उन्हें कुछ और ही बातें करना चाहिए थीं। लेकिन वे क्या बातें होंगी यह कहना उसके लिए कठिन था। वह फिर उसके पलंग के पास बैठ गया।

"भला, कैसा महसूस कर रहे हो तुम?" नतालिया ने मुस्कुराते हुए पूछा।

"अरे, बड़ा मजा आ रहा है मुझे नताशा! बड़ा ख़ुश हूँ मैं!" उसने प्रमुदित हो अपना हृदय उडेल लिया।

"ओह यह तो बड़ी अच्छी बात है," नतालिया ने किंचित हँसी के साथ कहा।

पाल उसका चुम्बन लेना चाहता था। उसने उसका सिर उठाया और उस पर

झुक गया।

"ओह, तो तुम्हें यह काम पसन्द आया!" वह फिर हँस दी।

उसके शब्दों और हँसी ने पाल के शरीर में सिहरन पैदा कर दी।

"तुम कह क्या रही हो?" उसने परेशान हो पूछा।

"मैं? मैं तो कुछ नहीं कह रही, बस यों ही। क्या अब भी तुम मुझसे शादी करना चाहते हो?"

नतालिया के स्वर में निहित सन्देह व उपहास पाल ताड़ गया। आख़िर उसका क्या तात्पर्य हो सकता है।

पलंग पर बैठे-बैठे ही नतालिया कपड़े पहनने लगी। उसके मुख पर उदासी और कुछ क्रूरता झलक रही थी।

"तुम्हें हो क्या गया है, नताशा?" पाल ने डरते-डरते पूछा।

"क्यों?" उसने पाल की ओर देखे बिना ही पूछा।

पाल ठीक से कुछ समझ न पाया। उसे सिर्फ़ इतना महसूस हुआ कि नतालिया को उस स्थिति-विशेष में वैसी बातें नहीं करना चाहिए थीं जैसी वह कर रही थी। लेकिन वैसे व्यवहार के लिए उसके पास भी कारण थे। जब नींद से जागी थी तो उसमें एक प्रमुख परिवर्तन आ गया था। उन दोनों के दरम्यान जो कुछ हुआ था वह सब उसे याद हो आया। उसे याद आया और महसूस हुआ कि अपनी विलासप्रिय वृत्ति के वश में होकर अपना एक परम मित्र खो दिया था – वह वृत्ति जिसने उनके सम्बन्धों को उसी परिचित, बोझिल और गन्दी कोटि में रख दिया था। वह ऐसे अनेक अनुभव कर चुकी थी और उनसे ऊब गयी थी। पाल में जो चीज़ उसे पसन्द थी वह था उसका सम्मानपूर्ण और दोस्ती का रवैया। वह अभी कुछ घण्टे पहले तक शेष था। लेकिन अब उसे महसूस हुआ कि वह मैत्री खत्म होने वाली है। वह अच्छी तरह जानती थी कि इस प्रकार के रिश्तों का किस तरह अन्त होता है। वही उनके प्रारम्भ का ढंग था और वही उनका अन्त। हालांकि वह देख रही थी कि पाल ख़ुश था, प्रफुल्लित था लेकिन वह यह कल्पना ही न कर सकती थी कि वह ऐसा कुछ समय और रहेगा। उसने अपना एक अच्छा दोस्त खो दिया था। उसे अपने आप पर क्रोध आ रहा था। उसका हृदय शोक और पीड़ा से भर गया था। पाल अब तक अपने सिंहासन पर से लुढ़का नहीं था लेकिन उसे कुछ ऐसा ही महसूस हो रहा था। वह ख़ुद ऐसा महसूस कर रही थी कि अब गिरी, अब गिरी।

जब वह कपड़े पहन रही थी तो पाल ने उसे देखा और उसकी वासना जाग्रत हो गयी उसका दिल बार-बार उसे चूमने और उसका आलिंगन करने को व्याकुल

हो उठा। किसी प्रकार के ज़ब्त की कोई ज़रूरत न समझते हुए, और दरअसल ज़ब्त की उसकी शक्ति भी न थी, उसने उसे सीने से लगा लिया। नतालिया ने भी किंचित उदासीन और वक्र मुस्कान के साथ अपने आपको उसके सुपुर्द कर दिया। उसे सर्दी लग रही थी लेकिन पाल ने उसे गरमा दिया था – गर्मी उन दोनों के लिए काफ़ी थी इसलिए अब उसने सर्दी महसूस न की।...

दस मिनट बाद वे दोनों चाय पी रहे थे; वह पहले ही नहा-धोकर, बन-संवर कर पलंग पर बैठी हुई थी और वह उसके रूबरू कुर्सी पर बैठा हुआ था। वह शान्त उत्साह और थकान महसूस कर रहा था। वह उदास थी और चाय की पिर्च मुँह को लगाते हुए उसे निहार रही थी और गहरी साँसें ले रही थी।

सहसा पाल ने देखा कि उसके गालों पर बड़े-बड़े आँसू ढुलक आये थे जो चाय में गिरते जा रहे थे पर वह उसे तब भी पिये जा रही थी। शायद ही कभी किसी ने अश्रु-मिश्रित चाय पी हो और फिर भी इतनी शान्त और उदासीन लगी हो जितनी कि यह विकट लड़की लग रही थी।

"तुम्हें हो क्या गया है, क्यों? क्या हुआ? आख़िर यह सब है क्या?" पाल ने कुर्सी पर से कूद कर उसके करीब जाते हुए फुर्ती से पूछा।

नतालिया ने अपनी पिर्च मेज पर दे मारी और उसकी अश्रुमिश्रित चाय बिखर गयी। सिसकियाँ लेते हुए वह बोली :

"मैं बेवकूफ हूँ! मैंने अपने आपको लूट लिया है! ज़िन्दगी में एक ही बार मैंने बुलबुल की मधुर ध्वनि सुनी थी और अपने आप ही उसे डरा कर भगा दिया है। यह मैंने ही बनाया था, मैंने ही इसे बर्बाद कर दिया! नताशा, तू ख़त्म हो गयी! अब मैं अपने आपको रो-रोकर ख़त्म कर लूँगी। ओह! ओह! मूर्ख! मूर्ख!"

पाल की समझ में कुछ न आया। उसके चुम्बन-आलिंगनों ने तो नतालिया का शक और बढ़ा दिया। वह रोती रही। अन्ततः पाल ने कहा :

"बस बहुत हो गया नताशा! ख़त्म करो इसे! चलो मुझसे शादी कर लो और हम फिर नयी ज़िन्दगी शुरू करेंगे! मेरी अपनी दूकान होगी और तुम घर की स्वामिनी बनोगी, मेरी पत्नी जैसी कि दूसरी स्त्रियाँ होती हैं! कितनी अच्छी ज़िन्दगी होगी हमारी!"

नतालिया ने उसकी बाँह परे को धकेल दी। कृत्रिम हँसी हँसते हुए, फिर भी इस प्रकार मानो वह मूर्छित हो, एक धुँधली आशा में उसने कहा :

"आख़िर कब तक? सिर्फ़ हफ़्ते भर तो तुम वैसी बातें करोगे, हम तुम्हें ख़ूब जानती हैं! हम ख़ूब जानती हैं तुम्हें, मेरे प्यारे! मेरा वह मतलब हरगिज नहीं था। उसका तो मुझे ख़याल भी न आया था। डरो मत। मैं तुम्हारे सुझाव पर ध्यान नहीं

दूँगी। न उसे कबूल करूँगी। क्या वाकई तुम्हारा ख़याल है कि मैं तुमसे शादी कर लूँगी? मैं किसी से शादी नहीं करूँगी, तुमसे भी नहीं। फिर तुम अच्छे आदमी हो, और अच्छा ज्यादा दिन नहीं रहता। मैं नहीं चाहती कि शादी के बाद तुमसे अपनी गुज़री हुई ज़िन्दगी के बारे में उलाहने सुनूं। नहीं, मैं नहीं सुनना चाहती! तुम समझते हो शादी के बाद तुम मुझे अपनी आज की ज़िन्दगी की याद नहीं दिलाओगे? अरे भइया! और सबों की तरह तुम भी वैसा ही करोगे। मैं जानती हूँ। मुझ जैसी लड़कियों के लिए तो ज़िन्दगी की इस दलदल में सूखा स्थान एक भी नहीं है। लेकिन छोड़ो भी, क्यों बहस करें हम इन बातों पर। मुझे तुम्हारा सुझाव नहीं चाहिए। मुझे तो अगर किसी चीज़ का गम है तो इसी का कि मैंने मूर्खता की और तुम जैसे दोस्त को हाथों से खो दिया। और इसमें दोष मेरा अपना है। ओह, हो मैं कैसी मूर्ख हूँ!"

पाल ने उसे समझाने की बड़ी कोशिश की लेकिन असफल रहा। उसके आँसुओं ने उसे बहुत द्रवित किया और उसके दिल में एक उदासी व भय पैदा कर दिया जो किसी अस्पृश्य वस्तु के प्रति था।

"सुनो, नताशा! मुझे सताओ नहीं," उसने गंभीरता से कहा। इन शब्दों से मुझे न बेधो। वे मेरी समझ में नहीं आते। मैं उनके गूढ़ अर्थ तक नहीं पहुँच सकता। लेकिन ये शब्द ही तो सारी तकलीफ नहीं है। मैं ज़ोर के साथ यह कह सकता हूँ, चाहो तो मैं अपना दिल खोलकर तुम्हें दिखा सकता हूँ। देखो, तुम इस दुनिया में मेरे लिए सबसे ज्यादा प्यारी चीज़ हो! तुमसे बढ़कर मेरा और कोई नहीं है। यही मैं महसूस करता हूँ। मैं तुम्हारे लिए सब कुछ कर सकता हूँ। मुझे हुक्म दो, 'पाल सूर्य को बुझा दो!' मैं रेंगता-सरकता छत पर चढ़ जाऊँगा और इतनी फूँकें मारूँगा कि या तो वह बुझ जायगा या फिर मैं फटकर ख़त्म हो जाऊँगा। मुझे आज्ञा दो, 'पाल, लोगों की गर्दन काट दो!' मैं जाकर सबके सिर उतार लाऊँगा। कहो, 'पाल, खिड़की से नीचे कूद पड़ो!' और मैं जा कुदूँगा! मैं वह सब करूँगा जो तुम मुझसे करवाना चाहोगी। तुम कहोगी, 'पाल, मेरे क़दम चूम लो!' और मैं भी अभी, इसी क्षण उन्हें चूम लूँगा। चूमूँ क्या? चूमने दो ना!

वह दौड़ कर उसके क़दमों से लिपट गया।

नतालिया इस विस्फोट से अचम्भित हो गयी थी। वह उसके पहले शब्दों को कुछ अविश्वास-भरी मुस्कुराहट के साथ सुनती रही। और जब पाल ने सूरज को बुझाने का सुझाव रखा तो वह कहकहा लगाकर हँस पड़ी। जब उसने उसके सम्मान में लोगों को कत्ल करने की बात की तो वह काँपने लगी। वह बड़ा भयावह लग रहा था उसके सारे शरीर से ज्वाला भड़क रही थी और वह लरज

रहा था। और जब उसने नतालिया के चरण चूमने चाहे तो उसे अपार गर्व महसूस हुआ और उसने बिना किसी आपत्ति के उसे इसकी अनुमति देदी।

इन्सान को गुलाम बनाने में हमेशा लोग मजा लेते आए हैं। और यहाँ भी नतालिया ने एक इन्सान को ही गुलाम बना लिया था। लेकिन एक और मानवीय प्रवृत्ति भी उसमें मौजूद थी और वह थी दया-भाव – जब वह उसके क़दमों पर गिरा तो उसने उस पर तरस खाया। वह झुकी, पाल को फर्श पर से उठाया और ऊपर उठाकर उसे इस प्रकार प्यार किया कि ऐसा पहले किसी को न किया था। आख़िरकार वे दोनों थक कर चूर हो गये और इन तमाम बातों से ऊब गये।

लेकिन अभी तक वे पूरी तरह शान्त नहीं हुए थे। उन्होंने शहर के बाहर मैदान में घूमने जाने का इरादा किया। पाल सब कुछ भूल गया – दुकान, मालिक, घर-बार। और नतालिया के साथ उन निर्जन, सकरी गलियों में चलता रहा जहाँ से वह उसे जान-बूझ कर ले जा रही थी ताकि कोई जान-पहचान वाला न मिल जाय। वे दोनों घण्टों उन मैदानों में अकेले घूमते रहे। वे बड़ी स्पष्टवादिता से एक-दूसरे से बोलते रहे ताकि मूर्ख या बेहूदा न लगें। एक-दूसरे पर अपने-अपने विचार व सिद्धान्त लादना वे नहीं चाहते थे और न ही एक दूसरे पर गालिब आना चाहता था। उन रवैयों और विचारों का यहाँ सर्वथा अभाव था जो सुसंस्कृत लोगों के प्रेम में प्रवेश करते हैं और प्रेम को अधिक स्वादु बनाने की अपेक्षा उसे तीखा बना देते हैं।

आइये तो फिर जैसा कि क़ानूनदां करते हैं हम भी “उपर्युक्त परिस्थितियों के कारण” अपने नायक व नायिका की संस्कृति के अभाव के लिए उन्हें क्षमा कर दें।

अन्त में वे नदी पर आये और किनारे पर खड़े वेद वृक्षों तले लहरों से धुली हुई रेत पर बैठ गये। एक-दूसरे की बाहों में जकड़े हुए कुछ देर बाद उन्हें नींद आ गयी।

## 8

**कु**छ दिनों बाद पाल ने सोचा कि जो भी आदमी दूकान की खिड़की के नीचे से गुज़रता है ज़रूर नतालिया के कमरे पर ही जाता होगा। जब कभी भी कोई वहाँ से जाता वह उछलकर आँगन की ओर दौड़ता मालिक उसे देख लेता – पर पाल ने उसे पहले ही सब कुछ बता दिया था – और खी-खी करके हँस पड़ता। जब पाल ने बड़े आदर से अपने मालिक से निवेदन किया कि वह दम्पत्ति को

विवाह के अवसर पर आशीर्वाद दे तो मिरोन भौचक्का रह गया। और जब उसे होश आया तो उसने एक भाषण दे डाला :

"मूर्ख कहीं के! मेरी सुन ज़रा। मैं दो बार शादी कर चुका हूँ। मेरी पहली बीवी इतनी नासमझ थी कि मुझ में और दुकान पर काम करने वाले दूसरे आदमियों में फ़र्क़ ही नहीं कर सकती थी। दूसरी ने मुझसे इतना प्यार किया कि ख़ुदा जाने मैं ज़िन्दा कैसे रह गया। जब भी उसके जी में आता, जो कुछ भी उसके हाथ में होता वही मुझ पर दे मारती। उसे मर्दों को मारने में इतना मजा आता था कि तुम सोचोगे उसके माँ-बाप पुलिस में तो नहीं थे।"

इसके बाद उसने पारिवारिक जीवन का पूरा चित्र उसके सामने खींचकर रख दिया – बर्तन-भांड़े, पलुए, कर्छे, कपड़े धोना, फर्श धोना और अन्य सुविधाएँ। उसके वर्णनानुसार – और उसने शपथ खाकर कहा था, वह सच कह रहा है – उसकी गोभी में साबुन डाल दिया जाता था, उसे हाथों के बल चलाया जाता था, गीले पलुए उसके मुँह पर मारे जाते थे और उसकी घरवाली अपने बर्तनों की मजबूती अक्सर उसके सिर पर मारकर परखती थी। अन्त में मिरोन औरतों की बातों पर आ गया और फिर उसने एक दुखप्रद निष्कर्ष निकाला।

"तू तो बावला हो गया है! औरतों की कोई कमी है तेरे लिए? इसी को लेकर क्या करेगा तू? उसके साथ रह कर अपनी ज़िन्दगी तबाह करने के सिवा क्या मिलेगा तुझे? मेरी बात मान। माना उसने तेरे साथ कुछ भलाई की है। ठीक है, पर तू अब तो आदमी बन गया है, तु ख़ुश रहता है, हँसता है और बातचीत कर लेता है। लेकिन भाई मेरे, तूने तो कभी का उसका अहसान चुका दिया है। और कौन उसके साथ इस तरह का बर्ताव करेगा जैसे तूने किया है? बस जितना उसके साथ तूने किया वह काफ़ी है उसके लिए। अगर तुझे शादी करना ही मक्सूद है तो फिर ज़रा सलीके से शादी कर। मैं तेरे लिए एक अच्छी-सी सुन्दर, गोल-मटोल लौंडिया ढूँढ दूँगा। वह तो तेरे काम की भी होगी। ढेरों समान दहेज में लायेगी, उससे तू अपनी दूकान खोल लेना। लेकिन इससे ब्याह मत कर! महीने-भर में ही तू उक्ता जायगा। फिर कैसे जियेगा? तेरे पास कुछ भी तो नहीं है – न चमचे हैं न प्याले। करना-धरना उसे कुछ भी नहीं आता। लानत भेज सुसरी पर; बेकार है वह तेरे लिए!"

मिरोन का भाषण दूकान की दीवारों ने सुना, पाल पर उसका तनिक प्रभाव न पड़ा। पाल अब नतालिया से इतना अनुरक्त हो चुका था उसे दिल से दूर करने की बात तो दरकिनार उसकी एक क्षण की अनुपस्थिति भी अब उसे खलती थी; वह चाहता था कि वह दूकान में उसके सामने बैठी रहे ताकि वह उसी गर्मजोशी

और उत्साह के साथ काम करता रहे जैसा कि पहले किया करता था।

एक दिन काम खत्म करने के बाद जब वह उससे मिलने गया तो नतालिया कमरे पर नहीं थी। वह पीला पड़ गया और काँपने लगा। दरवाज़े पर बैठ गया और तब तक बैठा उसकी प्रतीक्षा करता रहा जब तक वह आ न पहुँची। जब वह लौटी तो आधी रात से ज्यादा समय बीत चुका था। लेकिन फिर भी वह उतनी ही गम्भीर और सन्तुष्ट थी जितनी हो सकती थी। उसने पाल को यह कहकर चुप कर दिया कि वह अपनी किसी सहेली से मिलने गयी थी जिसने उसे एक नौकरानी का काम दिलवाने का वादा किया था। पाल ने उसकी बात का विश्वास कर लिया और ख़ुश हो गया, उसके अपने सन्देह भी वह भूल गया।

पर उसके शीघ्र ही बाद वह सोचने लगा – यह पैसे कहाँ से लाती है? इस सवाल के आते ही उसके शरीर में सिहरन दौड़ गयी। उसी शाम उसने नतालिया से पूछ भी लिया। और उसने उसका जवाब एक और सवाल से दिया :

"मुझे कितने पैसों की ज़रूरत पड़ती होगी?"

पर पाल इस प्रश्न से सन्तुष्ट न हुआ।

"मैंने एक-एक कोपेक जोड़ कर रखा है। बस, उसी से काम भी चलाती हूँ।"

किसी बात ने उसे यह कहने के लिए उकसाया :

"दिखाओ मुझे कहाँ है तुम्हारे पैसे?"

वह सकुचाई अन्त में उसने कहा, "अच्छा। अगर तुम देखना ही चाहते हो तो मैं बता भी सकती हूँ।"

लेकिन उसे अपने सन्दूक की चाबी ही न मिली।

प्रश्न का जवाब न मिल सका।

जब पाल ने अपने भविष्य का सुन्दर चित्र नतालिया को दिखाया तो वह चुप रही और उसकी आँखें झपकने लगीं। जब वह अपनी कल्पना की उड़ानों में ख़ूब ऊपर उड़ गया तो उसे चुमकारने लगा, नतालिया का जिस्म ठण्डा था। एक बारगी तो वह इतनी स्पष्ट हो गयी कि वह पूछने पर मजबूर हो गया :

"शायद तुम्हें मेरी बात अच्छी नहीं लगी?"

वह बड़ी देर तक उसके प्रश्नों का उत्तर न दे सकी; उसकी नज़रों में असमंजस झलक रहा था। चुपचाप, मानो अपने शब्दों पर स्वयं उसे विश्वास न हो वह अन्ततः बोली :

"नऽऽहीं। तुम ऐसी बातें क्यों सोचते हो? ये बातें मुझे बहुत पसन्द हैं।"

उसे शान्त करने के लिए यही काफ़ी था।

पाल ने अपनी तनख्वाह लाकर नतालिया को देनी शुरू कर दी मानो वह उसकी स्त्री हो, गृहिणी हो। एक बार वह उसकी पोशाक के लिए कपड़ा खरीदकर लाया। उस उपहार को लेकर जो नतालिया की प्रतिक्रिया हुई वह बड़ी रस्मी और कोमल थी। उस समय पहली बार पाल ने अपने प्रति प्रकट की गयी सम्मान की कमी और द्वेष के चिन्ह नतालिया के व्यवहार में अनुभव किये। इस प्रकार की भावनाओं व विचारों को वह ठीक से न समझ पाता था लेकिन यह वह ज़रूर जानता था कि ऐसे विचार प्रकट नहीं किये जाने चाहिए।

कई दिन बाद एक बार जब वे दोनों चाय पी रहे थे, किसी के क़दमों की चापें और उच्छृंखल लोगों की सीटियों की आवाज़ें जीने में सुनायी पड़ी। कोई पतली, ऊँची आवाज़ में गा रहा था :

**"मैं चला अपनी प्यारी नताशा के यहाँ,**
**और लो यह आ गया मेरी प्यारी का घर।"**

पाल फ़ौरन भांप गया कि कुछ दुःखदाई घटना, घटने वाली है। वह गुस्से में गुर्राने लगा :

"तो वह आ गया मेरी प्यारी का घर – ऐं! तुम्हारे मेहमान आए हैं?" गायक ने अपना गाना समाप्त किया और निराश हो दरवाज़े पर आकर ठिठक गया।

वह कुछ दयनीय-सा छैल-छबैला, नाटा-सा शख़्स था जिसकी मूँछें ऊपर को चढ़ी हुई थीं। पाल की ओर घूरते हुए वह बड़ी बेतकल्लुफी के साथ कमरे में दाख़िल हुआ और उससे भी ज्यादा बेतकल्लुफ़ी से उसने अपना हैट खूंटी पर टांगा, फिर नतालिया की ओर बढ़ा जिसकी स्वागतपूर्ण मुस्कान में कुछ ऐसी झलक थी मानो वह असमंजस में पड़ गयी हो और साथ ही अपने जुर्म का उसे आभास भी हो रहा हो।

"कहो मेरी जान, सौन्दर्य की देवी नताशा!"

"क्या चाहते हो तुम? पाल ने गरजकर पूछा।

छैले ने पाल की ओर देखा, और मूँछों पर ताव दिया और फिर पाल की तरफ कोई ध्यान न देते हुए उसने वीरता के साथ नतालिया का हाथ पकड़ते हुए अपना अभिवादन पूरा किया।

"मिस क्रिवित्सोव! पहले तो मुझे चाय पिलाओ और फिर इस सड़ी शक्ल वाले सज्जन के बारे में बताओ।"

"मारो इस मरदूद को!" सड़ी शक्ल वाले सज्जन ने कुर्सी पर से उठते हुए कहा।

"क्या है यह? नताशा, क्या मतलब इस बात का?" अपनी मेजबान को सम्बोधित करते हुए अपमानित छैले साहब बोले।

"मारो इसको!" पाल ने क्रोध से काँपते हुए दोहराया।

"अच्छा भई, हम जाते हैं," मेहमान ने झट समझौता किया और जाते हुए सीढ़ियों पर चिल्लाता हुआ गया :

"ख़ुदा करे तुम्हारी शादी कामयाब हो जाय, नताशा! मैं उन्हें भी बता दूँगा —"

लेकिन वह किसे बतला देगा, यह न मालूम हो सका।

बड़ी देर तक वे मौन बैठे रहे।

पाल ने बड़ी मायूसी से पूछा :

"इनका आना कब बन्द होगा?"

"जब तुम उन सबको निकाल बाहर कर दोगे," नतालिया ने शान्तिपूर्वक कहा।

"क्या और भी बहुत से हैं?"

"मुझे नहीं मालूम। मैंने तो उन्हें कभी गिना नहीं। उनसे तुम्हें इतनी सख्त नफरत क्यों है?" वह उपहास करते हुए बोली।

"मैं इसे बर्दाश्त नहीं कर सकता? समझी? मैं इसे कतई बर्दाशत नहीं करूँगा! तुम अब मेरी हो चुकी हो।"

"अच्छा, तो यह बात है! तुमने मुझे खरीदा कब था? इस सौदे के लिए क्या दाम दिये थे तुमने?"

पाल उसे घूरने लगा।

"तुम हँसती हो...नहीं हँसना नहीं चाहिए तुम्हें। मैं तुमसे झूठ नहीं बोल रहा हूँ जानती हो! तुम अब मेरी हो, दिन में भी और रात को भी। मैं हमेशा तुम्हारे बारे में ही सोचता हूँ, हमेशा तुम्हारा ही ख़याल मेरे दिल में रहता है।"

"बस, काफ़ी है...ख़त्म करो इसे। अब हम ज्यादा बातें नहीं करेंगे!" नतालिया के स्वर में रुखाई थी।

कुछ दिनों तक तो पाल का नतालिया के मेहमानों के प्रति दृष्टिकोण उसे परेशान किये रहा। वह उन लोगों का नाता तोड़ना अनावश्यक समझती थी। उनमें से कुछ बड़े व्यक्ति थे, ख़ुशी मिजाज और दिलचस्प। कभी-कभी तो पाल उसके साथ न केवल असभ्यता का व्यवहार करता था बल्कि समाज-विरोधी बातें भी करता था। अगर वह हर वक़्त उसके साथ रहेगा तो नतालिया को बड़ी कठिनाई होगी। उसकी पसन्द-नापसन्द और थी जबकि पाल की पसन्द बड़ी अजीब और

हास्यास्पद थीं। लेकिन इस सबके बावजूद वह भला आदमी था, दिल का साफ़, ईमानदार; वह उससे प्रेम करता था और नतालिया को उसके प्रेम पर गर्व था। जब पाल उसे अपनी बराबर समझता तो वह बड़ी प्रफुल्लित हो जाती। वह उससे हरेक बात पर बड़ी आजादी के साथ बहस किया करता था और वह भी उससे उतनी ही बेतकल्लुफ थी। और यह भी बहुत बड़ी बात थी। वह अब सोचने लगी और मंसूबे बनाने लगी कि क्या कोई ऐसी सूरत भी निकल सकती है जिसमें वह पाल को भी अपने साथ रखे और साथ ही अपना पेशा भी जारी रख सके। हालांकि उसने सोचा कि इस प्रकार की ज़िन्दगी कभी–कभी दु:खदाई ही साबित होगी फिर भी अक्सर उसमें लुत्फ भी आया करेगा। हर अच्छी चीज़ तो वह अपने लिए रखना चाहती थी और बुराइयों में पाल को साझीदार बनाना चाहती थी। उसे आशा थी कि कुछ दिनों में वह पाल को इतना मोहित कर लेगी कि वह इस प्रकार का सुझाव स्वीकार करने को तैयार हो जायगा। शादी के सम्बन्ध में जो मन्सूबे वह बनाया करता था उसे वह बड़े ग़ौर से सुनती थी। आँखें मूँदे हुए वह मुस्कुराती और पारिवारिक जीवन के भव्य दृश्यों का चित्र देखती थी – दृश्य जो बड़े सौम्य व सुखद थे और रोचक भी।

कभी–कभी तो पाल के चित्रण की रौ में ही वह बह जाती थी। लेकिन वह बड़ी बुद्धिमान थी। और ख़ूब जानती थी कि यदि ये काल्पनिक चित्र यथार्थ में परिणत हो गये तो पाल की सारी तमन्नाएँ धूल में मिल जायेंगी। उसे दृढ़ विश्वास था कि पाल का उत्कट प्रेम जल्द ही बह जायगा। पाल के प्रेम को वह अपने ढंग से समझती थी और वह ढंग कोई ख़ुशामद या चापलूसी का नहीं था। वह भली–भाँति जानती थी कि उसका प्रेम गया नहीं और वह उसे उलाहने देगा, उसे पीटेगा। फिर इसके अलावा हमेशा एक ही पुरुष के साथ ज़िन्दगी भर रहना, दिन–रात, एक ही कमरे में बस अकेले ही रहना भी बोझित साबित होगा।

फिर बाद में कभी उसे ख़याल आता कि नहीं, वह उसके साथ बड़ी अच्छी तरह रह भी सकती है, और काफ़ी समय तक रह सकती है, लेकिन फिर वह यही निश्चय करती कि नहीं वह ठीक नहीं है। वह उसके योग्य नहीं है। वह सिर्फ़ इसलिए ही उससे शादी नहीं करेगी क्योंकि वह उस पर तरस खाती है; वह बहुत अच्छा आदमी है। नहीं नहीं, वह ऐसा नहीं करेगी चाहे वह उससे कितनी ही बार क्यों न कहे। वह उसके सुख व समृद्धि की कामना करती थी – लेकिन उसकी अपनी ज़िन्दगी तो उसी प्रकार जारी रहनी चाहिए जैसी कि वह अब तक रही है।

इस प्रकार के विचार अपने साथ कुछ अनजाने और मजेदार अहसास लाते

थे। जब वह इस प्रकार सोचती थी तो लगता था वह अब साफ़ और चतुर बनती जा रही है। अपनी विलासप्रियता और शारीरिक भूख से प्रेरित उसने कुछ क्रत्रिम चित्तवृत्तियाँ बना ली थीं। जब वह पाल के साथ होती तो बड़ी शान्त, चिन्तनशील और शालिनी बन जाती। पाल उसके साथ बड़ी नजाकज से पेश आता। वह अपना इसी प्रकार मनोविनोद कर लेती थी और पाल के साथ रहने में जो उसे जो उकताहट महसूस होने लगी थी उसे भी कुछ हद तक वह दूर कर लेती थी। लेकिन हमेशा वह अपनी वह भूमिका न निबाह पाती थी। तब वह उससे छिप जाती थी या अपने पंजे दिखाती थी। दूसरी ओर पाल उससे और ज्यादा अनुरक्त होता जा रहा था। बार-बार इच्छा होती कि नतालिया से मिलकर कुछ निर्णयात्मक बातें कर ले और आख़िरकार उसकी यह आकांक्षा पूरी भी हुई।

एक दिन शाम को शहर में घूमते-घूमते वे एक छोटे से बाग में चले गये। वे कुछ थक गये थे इसलिए बबूल के घने वृक्षों के नीचे पड़ी एक बेंच पर बैठ गये। हेमन्त के प्रतीक पीले-पीले पत्ते कभी-कभी चमककर उन पर प्रकाश डालते थे।

"हाँ तो, नताशा, क्या ख़याल है तुम्हारा?" पाल ने उसे कनखियों से देखते हुए बड़ी गम्भीरता से पूछा।

"काहे के बारे में?" एक टूटी हुई टहनी से पंखा झलते हुए उसने पूछा। वह समझ गयी थी सवाल का संकेत किस ओर है।

"मैंने कहा, फिर कब कर रही हो शादी?"

चाँद की किरणें बबूल के वृक्षों से छन-छनकर उन पर पड़ रही थीं। एक बारीक-सी छाया उन दोनों को अपने आगोश में लिए हुए थी। उनके पावों के नीचे की ज़मीन पर वे झिलमिलाती और बेंच के सामने चमककर उन्हें छोड़ देती थीं। बागीचे में निस्तब्धता छाई हुई थी। ऊपर शान्त, निर्मल आकाश में परदार, सुन्दर बादल धीरे-धीरे छंट रहे थे और उनकी रोवेंदार चमकीली बनावट में से कभी-कभी झिलमिलाते तारे झाँक लेते थे।

घूम-फिरकर थके हारे और बातें करते हुए नतालिया ने कुछ उदास, चिन्तनशील भंगिमा ग्रहण करली। शादी के प्रति उसका जो विरोध था वह उस क्षण बड़ा ही सच्चा, न्यायोचित और प्रामाणिक लग रहा था।

"शादी?" उसने अपना सिर हिलाया। "लो सुनो! भूल जाओ उस सबको। मैं कैसी बीवी बन सकती हूँ? मैं तो गली-कूचों में भटकने वाली औरत हूँ। और तुम एक ईमानदार और काम करने वाले आदमी हो। इसीलिए हम तुम मियाँ-बीवी नहीं बन सकते। मैं तो तुमसे पहले ही कह चुकी हूँ कि मैं आत्म-विहीन हूँ। मैं

अब और कुछ नहीं कर सकती।"

आत्म–ग्लानि में उसे आनन्द आ रहा था; इस समय वह सोच रही थी कि वह भी उन्हीं नायिकाओं में से एक है जिनके बारे में वह किताबें पढ़ती रही थी।

"और तुम्हें," उसने उसी उदास स्वर में कहा, "तुम्हें तो एक अच्छी–सी ईमानदार बीवी की ज़रूरत है। मैं तो पैदा ही इस पाप–भरी ज़िन्दगी के लिए हुई थी। मैं चाहती हूँ तुम्हारी ज़िन्दगी अच्छे तरह से बसर हो। तुम्हारी अच्छी–सी बीवी हो, बच्चे हों, और अपनी दूकान हो।" और अपने आँसू रोकते हुए लरजती आवाज़ में उसने उसके कान में कहा, "और मैं चुपचाप, दबे पाँव तुम्हारे यहाँ आया करूँगी और देखूंगी मेरा प्यारा पाल किस हाल में है –

वह सिसकियाँ लेने लगी। सच पूछो तो उसने अभी जो कुछ भी कहा था वह बड़ा दुःखद और कष्टकर था। अपनी छोटी–सी किताब का उसे एक दृश्य याद हो आया – वह "उससे" बड़ी गहरी मुहब्बत करती थी, उसी पर और उसके सुख पर अपना प्रेम न्यौछावर करती थी, हरेक कोई उसकी उपेक्षा करता था लेकिन मेरी डिजायरी, अपने फटे–पुराने कपड़े पहने, मुसीबत की ज़िन्दगी बिताते हुए भी चार्ल्स लिकान्ते से प्रेम करती थी, उसकी खिड़की पर खड़ी होकर शीशे में से उसे झाँका करती थी; चार्ल्स उसकी पत्नी फ्लोरंस के पैरों में बैठा कोई किताब पढ़ कर सुना रहा था, फ्लोरंस एक हाथ से अपने घुटने पर बच्चे को बिठाए थी और दूसरा हाथ चार्ल्स के बालों को कुरेद रहा था। वह बैठी अपनी चिमनी की ओर नज़रें गड़ाए हुए थी। बेचारी मेरी बहुत दूर से पैदल चल कर वहाँ आयी थी और अपने साथ अपना भोलापन और प्यार लाई थी लेकिन हाय! अब समय हो चुका था! वह खिड़की पर खड़ी–खड़ी ठिठुर गयी। – ' नतालिया को खबर ही न हुई कि आख़िर वह कहानी ख़त्म कहाँ हुई। किताब के आख़िर के पन्ने फट गये थे। जब उसे यह कहानी याद आयी नतालिया सिसकियाँ लेने लगी, वह फूट–फूट कर रोने लगी।

पाल हमदर्दी और प्यार, मजबूरी और गम से दबा धूजने लगा। उसने उसे कस कर सीने से लगा लिया। आँसुओं से जार–जार उसने भर्राई हुई आवाज़ में कहा :

"नताशा प्यारी! नताशा, मेरी रानी! बस बहुत हो गया। बन्द करो! मैं तुमसे प्यार करता हूँ। अब मैं तुझे इस तरह नहीं छोड़ सकता!"

आख़िरकार वह किंचित ठण्डी पड़ी। उसके प्रेम से उत्तेजित और उसकी आत्मा की उच्चता से भयभीत, जिसे वह भली प्रकार समझता था, पाल ने शान्तिपूर्वक तथा दृढ़ता से कहा :

"लो सुनो ज़रा! तुम मेरी हो क्योंकि तुम दिन–रात मेरे दिल में समाई रहती हो। मेरे लिए तुमसे बढ़कर और तुम्हारे अलावा कोई नहीं है न ही मुझे किसी और की आवश्यकता है। किसी की मुझे चाह नहीं। बस मेरी तो तुम्हीं हो, और रहोगी, कहो तुम मेरी रहोगी। ख़ुदा के लिए मेरी बात समझो नताशा! मैं तुम्हें किसी और को नहीं दूँगा। क्योंकि तुम्हारे बिना ज़िन्दा रहना मेरे लिए ना मुमकिन है। भला में तुम्हारे बग़ैर कैसे ज़िन्दा रह सकता हूँ जब चौबीस घण्टे मुझे तुम्हारा ही ख़याल रहता है? तुम मेरी हो! मैं तुम्हें अपना सर्वस्व दे दूँगा! समझ रही हो? आओ बस इस पर ज्यादा बातें करने की हमें ज़रूरत नहीं!"

लेकिन नतालिया तो उस पर बहस करके ही मानी। उसने पाल के सम्मुख अपने को हीन प्रदर्शित करके गर्व अनुभव किया। जब उसने अपने आप पर गालियों–कोसनों की बौछार की तो उसे परम हर्ष हुआ। उसकी दीनता व आत्म ग्लानि और भी स्पष्ट और रूखी प्रतीत हुई। शीघ्र ही वह कहने लगी :

"तुम समझते हो इस अर्से में मैं बिल्कुल पाक रही हूँ? क्यों क्या यही ख़याल है तुम्हारा, भोले बुत? हर रात मैं –"

लेकिन वह वाक्य पूरा न कर सकी। पाल खड़ा हो गया, अपने हाथ उसके कंधो पर रखकर उसने उसे झिझोड़ा और कर्कश आवाज़ में आहिस्ता से कहा :

"ख़ामोश! चुप रहो! मैं तुम्हें जान से मार डालूँगा!"

वह बड़ी भयंकरता से दाँत पीसने लगा।

नतालिया उसके हाथों से दबी पीछे को झुकी हुई थी, वह अपने हाथों से उसके कंधे दबाये हुए था। वह जानती थी उसने जो कुछ कहा वह न कहना चाहिए था। अब वह सहम गयी। पाल ने देखा वह लरज रही थी और उसे देखकर उसके हृदय में दया उमड़ आयी, उसकी क्रोधपूर्ण डाह शान्त पड़ गयी लेकिन उसके घाव की पीड़ा कम न हुई। वह उसके पास ही लुढ़क गया। एक लम्बी ख़ामोशी, एक उक्ता देने वाला सन्नाटा छा गया। नतालिया का भय अभी दूर न हुआ था पर उसने वह मौन तोड़ा। बड़ी नाजुक आवाज़ में वह भुनभुनायी :

"आओ घर चलें।"

वह कुछ देर बिना बोले उसके साथ चलता रहा, फिर तिरस्कारपूर्ण स्वर में बोला :

"अगर तुम ऐसी बातें मुझसे कह सकती हो तो इसका मतलब है तुम्हें मुझसे मुहब्बत नहीं है। तुम्हारे शब्दों में दया का कहीं नाम तक नहीं। तुम्हें तो चाहिए था बस चुप रहतीं।"

नतालिया ने गहरी साँस ली; उसके चेहरे पर सच्चा प्रायश्चित झलक आया।

तब पाल ने कहना जारी किया :

"खैर, जो हुआ सो हुआ। आइन्दा कभी ऐसी बातें अपने मुँह से न निकालना। हम बहुत बातें कर चुके। मेरे पास कुछ पैसे हैं – बयालीस रुबल। मालिक पर मेरे उन्नीस और आते हैं। शादी के लिए हमें इतने काफ़ी हैं बल्कि कुछ और दिन भी इनमें निकल जायेंगे। तुम्हारे पास कपड़े भी हैं जिन्हें पहनकर गिरजे में चल सको? वह वाली फ्राक तो तुमने कभी पहनी ही नहीं – एक बार भी नहीं पहनी, ऐ?"

"हाँ, नहीं पहनी।" नम्रता से उसने जवाब दिया।

"अच्छा तो, तुम्हें एक और बनवा देंगे। कल मैं तुम्हें कुछ कपड़ा ला दूँगा।"

वह कुछ न बोली। जब वे घर पहुँचे तो पाल ने जीने पर ही उससे विदा होना चाहा और सरगोशी के अन्दाज़ में कहा :

"मैं आज ऊपर नहीं चलूँगा।"

"बहुत अच्छा।" उसने सिर हिलाया और सीढ़ियाँ तै करती हुई ऊपर को दौड़ी।

ताला खुलने की आवाज़ उसने सुनी और गली में से निकल गया। नतालिया की दुःखद बातों ने उसे बहुत जख्मी कर दिया था। समूची गली उसके प्रति उदासीन और रूखी थी, उसमें वे विचार व भावनाएँ पुनः जाग रही थीं, जिन्हें मुद्दत से वह भूल गया था। अकेलेपन का ख़्याल और गम से भरी भावनाएँ उसे घेर रही थीं। उसके पुराने विचार व भावनाएँ उसे अब और भी कष्टकर प्रतीत हो रही थीं, उसकी समझ में कुछ न आ रहा था जबकि उन विचारों ने एक नयी शक्ल अख़्तियार कर ली थी।

नतालिया ने अपने कमरे को ताला लगाया पर कपड़े न उतारे खिड़की खोलकर उसके सामने बैठ गयी और उसने चैन की साँस ली। हथेली पर गाल रखे वह खिड़की में से देखने लगी।

आकाश में बादल घिर आए। घने अन्धकार से उभरकर वे क्षितिज को एक मखमली पर्दे से ढँक रहे थे। वे इतने आहिस्ता-आहिस्ता छा रहे थे मानो मुद्दत से यही काम करते-करते थक गये हों। आकाश पर फैलते हुए उन्होंने एक-एक करके सभी तारों को बुझा दिया था। और फिर मानो आकाश की इस सजावट को मिटा कर उसकी सुन्दरता नष्ट करके उन्हें खेद हुआ हो और उसकी नर्म, शान्तिपूर्ण चमक-दमक धरती से छिपाने का उन्हें पश्चाताप हो वे सारे बादल रोने लगे और पानी की बड़ी-बड़ी बूँदें आने लगीं। पानी लोहे की छत पर इस ज़ोर से टप-टप पड़ रहा था मानो धरती को चेतावनी भेज रहा हो।

पाल की तरह नतालिया को भी रंज हो रहा था। लेकिन उसे लगा वह फंस गयी है। "अच्छा, तो यह है तुम्हारी ज़ात! बिल्कुल दूसरों की तरह के ही हो! आज मुझसे मुहब्बत करते हो, कल मेरे दाँत तोड़ दोगे! हाँ तो, मेरे लख्तेजिगर! तुम मुझसे खिलवाड़ करोगे हुहँ! अच्छा, ज़रा ठहर जाओ।"

उसे पाल का विकृत, भयंकर चेहरा, उसके कट-कटाते दाँत और उसकी वह कानाफूसी याद हो आयी – "चुप रहो! मैं तुम्हें जान से मार डालूँगा।" क्यों? क्या इसलिए कि वह इतनी साफ़गो थी और उसने सब कुछ उसे सच-सच बता दिया था? वाह, वाह, क्या कहने हैं! और इस पर वह अपने आपको मेरा दोस्त कहता है! वह तो यह भी सोचता है कि उसे मुझसे मुहब्बत है।

ज़िन्दगी में पहली बार किसी ने उसे मार डालने की धमकी दी थी। जब ग़ैर उसे मारते थे तो योंही मार लेते थे, शराब के नशे में बग़ैर कुछ कहे-सुने उसे पीट लेते थे और अब तुम भी उन्हीं के नक्शेक़दम पर चलने लगे – तुममें और उनमें फ़र्क़ ही क्या रहा? इसके बाद वह इसी विचार में लीन हो गयी कि पाल के साथ ज़िन्दगी कैसी रहेगी – और दिन-रात वह इसी सोच-विचार में गुंथी रही। उसे सवेरे जल्दी ही उठना पड़ेगा। वैसे तो उसकी आँखों में नींद होगी लेकिन समोवार भी तो चढ़ाना ही होगा, पाल को काम पर जाना होगा। इसलिए स्टोव जलाकर उसके लिए अगर कुछ हुआ तो खाना तैयार किया करेगी। सारा कमरा उसे झाड़ना-पोंछना पड़ेगा। फिर मेज सजानी पड़ेगी। दोपहर का खाना हुआ और उसके बाद बर्तन धोने पड़ेंगे, फर्श झाड़ना होगा, अपने लिए या पाल के लिए कुछ सीना-पिरोना पड़ेगा और शाम के लिए समोवार चढ़ा देना होगा। और बस तब शाम हो जाया करेगी –

फिर फर्ज करो अगर उन्हें फुर्सत हुई तो वे दोनों घूमने चले जायेंगे।। लेकिन उसके साथ घूमने जाना तो बड़ा बोझिल और खुश्क रहता है। उनसे मिलने भी शायद ही कोई आये। वह उजड्ड और चिढ़चिढ़ा तो वैसे ही है। घूम-फिर कर वे लौटेंगे, खाना खायेंगे और सो जायेंगे और एक दिन पूरा हो जायगा।

लेकिन अगर उसके पास कोई काम न हुआ तो? और अगर मेरी पिछली ज़िन्दगी पर वह मुझे भला-बुरा कहने लगा तो? मारने-पीटने लगा तो? और फिर हो सकता है बारह साल के छोकरे से लेकर सत्तर साल के बूढ़े तक से उसे जलन हो। और मैं उससे बातें क्या करूँगी? वह तो मुझसे भी ज्यादा मूर्ख है – पढ़ना-लिखना भी नहीं जानता। मुझे तो किताबें पढ़ने में मज़ा आता है, बहुत-सी किताबें मैं कहाँ से लाऊँगी?

जितना ज्यादा वह अपनी और पाल की विवाहिता ज़िन्दगी के बारे में सोचती

जाती वह उतनी ही बदमजा और बोझिल दिखायी देती।

उसने अपने आप से प्रश्न किया, "मैं अपने आप को क्यों उसके हाथों बेच दूँ?" और तुरन्त उसे महसूस हुआ कि पाल के पास उसके एवज देने के लिए कुछ भी तो नहीं है। फिर उसने यह सोचना शुरू किया कि आख़िर वह कौन-सी चीज़ है जो हम दोनों को प्रेम-बन्धन में बाँधे हुए है। आख़िर उस पर पाल का कौन-सा अहसान है जिसके तले वह दबी हुई है? उसे यह नतीजा निकाल कर अपार आनन्द हुआ कि वह नहीं बल्कि पाल ही उसके अहसानों तले दबा हुआ है और वह उसके प्रति इसलिए अनुरक्त हुई थी क्योंकि पाल की स्थिति दयनीय थी और वह बिल्कुल अकेला था।

तो अब मैं क्या करूँ? उसने साँस ली और उसे चैन पड़ गया।

बड़े घृणापूर्ण स्वर में उसने ज़ोर से पाल को फटकारा :

"अबे, माता के मठ! हा! तू ठहर ज़रा मैं तुझे बताती हूँ! मैं बताती हूँ तुझे मैं किस क़िस्म की औरत हूँ! अब तू पीस अपने दाँत मुझ पर कलमुहें! तू समझे बैठा है मैं तेरी गुलमुटी हूँ, तेरी बाँदी हूँ! अभी तुझे पता चल जायगा, तूने देखा ही क्या है अभी!"

ऊपर को उछल कर उसने एक रूमाल अपने सिर पर डाल लिया।

किवाड़ों में ताला लगाने की परवाह किये बग़ैर ही वह धड़धड़ाती हुई जीना उतर कर नीचे चली गयी। उसने ज़रा भी यह न सोचा कि बारिश ज़ोरों से हो रही है, लोहे की छतों पर, पगडण्डियों और खिड़की के शीशों पर उसके गिरने की पट-पट की बोझिल आवाज़ आ रही है। वह दौड़ती हुई चली गयी। वह पाल को यह बताने जा रही थी कि वह किस क़िस्म की औरत हैं। भयंकर क्रोध और साहस और अपनी स्वाधीनता का अहसास उसमें पैदा हो गया था।

## 9

**न**तालिया को घर से गये हुए दो दिन हो चुके थे। पहले ही दिन सवेरे ज्योंही पाल उसके कमरे में दाख़िल हुआ उसे लगा कि कुछ अनहोनी हो गयी है। दिन भर वह नतालिया की प्रतीक्षा करता रहा। उस दिन रात वह उसे शहर के आस-पास तलाश करता रहा। धर्मशालाएँ और सरायें सब उसने छान मारीं लेकिन वह कहीं न मिली। उसने अपने दाँत कटकटाये, गुस्से में ख़ूब गुर्राया, उछलता-कूदता फिरा और अगले दिन ख़ामोश हो गया। प्रत्याशित कुछ भयंकर अनहोनी के घटने के विचार ने उसे आन दबोचा। शनैः-शनैः नतालिया के प्रति उसका प्रकोप बढ़ता

गया। तीसरे दिन तक तो वह ऐसा दुर्बल और निढाल हो गया, गाल इस कदर पिचक गये मानो किसी भयंकर रोग से उठा हो।

उसी दिन शाम को दो गाड़ियाँ उसकी दूकान की खिड़की के सामने से गुज़रीं और खड़खड़ करती हुई फाटक की ओर बढ़ गयीं। पाल ने नतालिया की हँसी सुनी तो उसका चेहरा पीला पड़ गया और भौचक्का हो आँगन की ओर लपका।

नतालिया एक पीले से आदमी के बाहुपाश में थी जो पोशाक से सैनिक के दफ़्तर का क्लर्क लगता था। उसकी मूँछें, चेहरा, जाकेट सब कुछ ऐसा दीख रहा था मानो मुर्झा गये हों। वह शराब में धुत्त लोट रही थी, गाने गा रही थी और हँस रही थी। उसके पीछे ही एक और जोड़ा चल रहा था एक पतली-दुबली, साँवली-सी लड़की किसी अधेड़ उम्र के व्यक्ति के साथ जा रही थी जो शक्ल से रसोइया दिखायी देता था।

हाल में लगे तख्तों की एक दरार में से पाल यह सब झाँक रहा था। अन्दर ही अन्दर उसका ख़ून खौल रहा था। उसने सोचा कहीं क्रोध के मारे उसका दम न घुट जाय। लेकिन जब वे सबके सब जीना चढ़कर उसकी नज़रों से ओझल हो गये तो फ़ौरन उसका गुस्सा शान्त हो गया और वह निराशा के अन्धकार में डूब गया। वह भौचक्का हो हाल के दरवाज़े की ओर लुढ़कता हुआ चला। उसका सिर पानी के कनस्तर से जाकर टकराया। अटारी में जो बातें हो रही थीं और कहकहे लगा रहे थे उनकी आवाज़ें नीचे पाल के कानों तक पहुँच रही थीं। नतालिया के चेहरे की भाव, भंगिमाएँ – आनन्दित, ज़ोर-ज़ोर से हँसती हुई, बहुत प्रफुल्लित, बहुत उल्लसित ऐसी कि कभी पाल के साथ न रही थी – सब उसकी नज़रों में घूम रही थीं।

"इतनी उल्लसित व प्रमुदित वह मेरे साथ क्यों नहीं हुई?" उसने सोचा। तुरन्त बड़ी सत्य प्रियता के साथ उसने अपने प्रश्न का उत्तर ख़ुद ही दिया। "मेरे साथ, पाल के साथ वह इतनी ख़ुश कभी न हुई। मैं बेहूदा हूँ, रूखा हूँ, और दिक करता हूँ।" इस बात के अहसास से उसकी तकलीफ दुगुनी हो गयी। ऐसा प्रतीत हुआ कि वह उसके हाथ से गयी और इसमें दोष भी उसी का था। वह हाथ से जाती रहेगी! वह उससे हाथ धो बैठेगा! और फिर उसकी पुरानी ज़िन्दगी उसे वापस मिल जायगी; वह फिर अकेला, ख़ामोश, सबसे तिरस्कृत, भोंडा और उपहासास्पद अनाथ हो जायगा। वही जो हर उस शख़्स के साथ होता है जो किसी स्त्री से प्रेम करता है और उसे खो बैठता है। पाल ने अब नतालिया की बेहतरीन विशेषताएँ स्मरण कीं। उसके बारे में कुछ भी बुरा सोचने का वह ख़याल भी न कर सकता था। अन्त में नतालिया इतनी पाक, इतनी कोमल, इतनी भोली दीख

पड़ी – और उसका होना पाल के लिए बहुत ज़रूरी भी हो गया था – कि उसकी पीड़ा और बढ़ गयी, उसका दम घुटने लगा।

अचानक वह उछल पड़ा और हँस दिया। उसका चेहरा ख़ुशी से दमक रहा था मानो महत्त्वपूर्ण फैसला कर चुका हो, और आँगन में से कूदता हुआ बाहर हो गया। धड़धड़ाता हुआ वह जीना चढ़ कर ऊपर पहुँचा; खी–खी और हा–हा की आवाज़ उसके कानों पर पड़ी।

वह दरवाज़े पर खड़ा था। नतालिया उत्तेजित हो, प्रमुदित और साहसी, एक हाथ अपने कूल्हे पर रखे और दूसरे में रूमाल थामे नाचने ही वाली थी। उसे तो सिर्फ़ नतालियाही साफ़, सुन्दर और ख़ुश दिखायी दे रही थी – बाक़ी सब धुँधला था।

"अरे, नताशा!" पाल उल्लसित हो काँपती हुई आवाज़ में चीख़ा।

"अरे, तुम हो प्यारे!..." उसका अचरज–भरा उत्तर भयभीत हो, काँपते हुए, कुहरे को चीरता हुआ पाल तक पहुँचा।

भीषण नीरवता का साम्राज्य था, प्रत्येक वस्तु कुहरे में तैरती हुई नज़र आ रही थी। सिर्फ़ नतालिया ही दिखायी दे रही थी – वह निश्चल हो खड़ी हुई घूर रही थी; उसकी बड़ी–बड़ी नीली आँखें बड़ी भोली, बड़ी उज्ज्वल लग रही थीं।

"हाँ, हाँ। मैं ही हूँ...तुमसे...मिलने आया हूँ – कुछ देर तुम्हारे साथ बैठने। यहाँ तो बड़ा ही आनन्द–मंगल हो रहा है। मैंने सुना हरेक कोई कहकहे लगा रहा है सोचा, चलो मैं भी पहुँच जाऊँ," पाल ने असमंजस में पड़ते हुए कहा!

आँतरिक शक्ति उसे आगे बढ़ने के लिए उत्प्रेरित कर रही थी और वह लुढ़कता हुआ नतालिया के क़दमों में जा गिरा।

"नताशा! नताशा! मैं आ गया हूँ...निकाल बाहर करो। इन सब मरदूदों को! मुझे माफ़ करना। मैं तुम्हारे बिना जीवित नहीं रह सकता!...कैसे जी सकता हूँ मैं भला? अकेला? नहीं, अकेला ज़िन्दा रहना असम्भव है!...मैं तुमसे मुहब्बत करता हूँ! मैं तुम पर दिलो–जान से मरता हूँ, तुम तो जानती हो! मैंने तुमसे सैकड़ों बार कह दिया है मुझे तुमसे प्रेम है! तुम मेरी हो...इन ग़ैर लोगों की तुम्हें क्या ज़रूरत है? दिन–रात, चौबीस घण्टे मैं तुम्हारा नाम जपता हूँ...मेरे सारे विचार, मेरी तमन्नाएँ, मेरे अरमान...मैं ख़ुश रहूँगा! मेरी ज़िन्दगी झूम उठेगी! मैं हँसूँगा ख़ूब बातें करूँगा..."

वह उसकी टांगों से लिपट गया, अपना सिर उसने नतालिया के घुटनों में दे दिया और बड़ी मन्द, विनम्र और दया–भरी वाणी में वह कुछ बुदबुदाया, उसके

शब्द इतने मार्मिक और हृदयग्राही थे कि सबके–सब उन्हें सुन कर स्तम्भित रह गये।

नतालिया के काटो तो ख़ून नहीं। उसका चेहरा फक हो गया वह पीछे दीवार से टिक गयी। उसने पाल का सिर जकड़ा और दोनों हाथों से उसे धकेलने की कोशिश की। लेकिन वही बड़ी–बुरी तरह उससे लिपटा हुआ था, हट न सका। नतालिया के नीले होंठ अपनी लाचारी के साथ हिले पर वह कुछ कह न सकी...

फिर कमरे में एक हल्की–सी दबी हुई हँसी सुनायी पड़ी। साँवले रंग वाली लड़की हँस रही थी। क्लर्क भी उसे देखकर हँसने लगा और फिर रसोइये ने भी उसी का अनुकरण किया। नतालिया हक्की–बक्की हो उनकी ओर मुड़ी, पाल की ओर उसने दृष्टि डाली और ख़ुद भी ठहाका मार कर हँस पड़ी। सारी अटारी चार व्यक्तियों के बुलन्द कहकहों से लरज उठी।

कहकहों के इस अचानक विस्फोट से दबा और अचम्भित पाल फर्श पर बैठा रहा और खुश्क तथा पागलों की तरह एक कोने की ओर टिकटिकी लगाये देखता रहा। असल में वह बड़ा ही हास्यास्पद लग रहा था। उसका चेहरा आँसुओं से भीग गया था, आँसू उसके चेचक के दागों में आकर जम गये थे और वह भौचक्का–सा बड़ा ही दयनीय दिखायी दे रहा था। उसके उलझे हुए बाल उसके माथे पर इस तरह भद्देपन से लटक रहे थे मानो किसी विदूषक के नकली 'बिग' हों। उसकी आँखें खुश्क थीं, मुँह खुला हुआ था, उसके चमारों के 'एप्रन' से फाड़ कर बनाई हुई, कमीज, उसके जूतों से चिपका हुआ किसी चिथड़े का पैबन्द – इस सबको देखते हुए यह असंभव था कि कोई उस दुखियारे पर तरस खाए।

चारों व्यक्ति उसे देख कर हँसते–हँसते दोहरे हो गये। वह असमंजस में पड़ गया और मौन, निश्चल हो फर्श पर ही बैठा रहा। किसी ने बियर की बोतल खोली और बहा दी। उसकी एक बारीक–सी धार बहती हुई पाल की ओर बढ़ी। साँवली लड़की ने हिस्टीरिया के दौरे में स्त्रियों का एक हैट उछाल कर उसके सिर पर फेंक दिया। वह जाकर उसके घुटनों पर गिर पड़ा। उसने उसे उठा लिया और देखने लगा उसे उस हैट पर भी असमंजस हो रहा था।

इसे देख कर तो लोग और खिलखिला पड़े। वे हँसते, कराहते, खरखर करते और तड़पने लगते। पाल इतने फूहड़ व भोंडे अन्दाज़ में खड़ा हुआ कि और भी हास्यास्पद लगने लगा। और जब वह लड़खड़ाता हुआ दरवाज़े तक गया तब भी बड़ा उपहासकर लग रहा था। वह दरवाज़े पर जाकर घूमा और उसने हैट फर्श पर फेंक दिया। नतालिया की ओर संकेत करते हुए उसने दाँत पीस कर कहा :

"याऽऽद रखना!" और वह चला गया, उसके जाने पर फिर ठहाकों की झड़ी लग गयी।

"अरे, वाह क्या हीरो है!" कोई चिल्लाया। हँसते-हँसते लोगों की आँखों में पानी आने लगा। "ओ हो हो हो! अहा हा! हा! हा! ओह, शैतान का हवाला उसे! हा, हा, हा! अरे उसकी गर्दन का चिथड़ा भी देखा तुमने! हः! हः! हः! कमर ऐसी झुकी हुई थी जैसे उसकी पूंछ हो! ओह हः हः हः! अरे उसके बाल! हः हः हः ऐसे थे जैसे फूलों का गुलदस्ता! हः हः हः! ओह, फट जाय इसका पेट मरदूद का हः हः हः!"

और बाहर आँगन में मूसलाधार बारिश हो रही थी जिसकी आवाज़ ऐसी कर्कश थी जैसे ढोल पिट रहे हों। शाम हो चुकी थी। तीन दिन तक लगातार बारिश होती रही और काली टहनियों पर लगे आख़िरी पत्ते तक झाड़ कर ले गयी। नियति की निष्ठुर उदारसीनता से त्रस्त और थके-हारे पेड़ों के गुद्धे ठण्डी, घृणापूर्ण, दुःखद हवा के भयंकर वेग में सिर नचाते थे और ज़मीन पर इस तरह रगड़ते मानो कुछ अपनी प्यारी चीज़ तलाश कर रहे हों। हठी, जिद्दी बारिश और न रुकने वाली गड़गड़ाती हुई तेज हवा ने मरणासन्न हेमन्त के लिए बड़ा ही अद्भुत 'मरसिया' पेश किया था; और आसन्न जाड़ों का असाधारण स्वागत कर रही थी। घने, रूखे, सफ़ेद बादल आकाश पर इस तरह घिर रहे थे मानो अब कभी छंटने की उन्हें कोई इच्छा ही न हो; मानों आकाश को अपना सौन्दर्य सूखी, टुकड़े-टुकड़े हुई धरती को बताने से रोक रहे हों। चौथे दिन तो बर्फ गिरने लगा। बर्फ़ के भारी गीले लोंदे हवा में शहर भर में चक्कर काटते रहे; अब भी कुछ तलाश करती हुई हवा, बेधड़क, बेतहाशा बढ़ती हुई हवा मकान की दीवारों और छतों पर बर्फ चिपका रही थी।

उस दिन शाम को पाल ने आँगन में इस तरह क़दम रखे मानो उसका काम तमाम हो गया हो। वह बड़े फूँक-फूँक कर क़दम रख रहा था कि कहीं उसके बूट ख़राब न हो जायं। जीना चढ़कर वह ऊपर गया और कुछ खोया हुआ-सा नतालिया के दरवाज़े पर खड़ा हुआ। आज उसने अपने बेहतरीन साफ़-सुथरे कपड़े पहने थे, उसका चेहरा शान्त और अकड़ा हुआ था। वह कुछ क्षण रुका, फिर उसने दरवाज़े पर दस्तक दी। वहाँ खड़े-खड़े वह थक गया, कभी इस पाँव पर खड़ा होता तो कभी उस पर लेकिन दरवाज़ा न खुला। उसने बड़ी हल्की-सी लेकिन कुछ ज़ोर सीटी बजायी।

"कौन हैं?" किसी की आवाज़ आयी।

"मैं हूँ, नतालिया, मैं!" पाल ने शान्तता से और ज़ोर से जवाब दिया।

"आह!" और दरवाज़ा खुल गया।

"हलो!" पाल ने टोपी उतारते हुए उसका अभिवादन किया।

"हलो, अरे मसखरे तुम हो! क्या है? ठीक तो हो अब? भई उस दिन तो तुमने हमारा बड़ा मनोरंजन किया! क्या दिखायी दे रहे तुम! तुम तो ऐसे लग रहे थे जैसे उन्होंने तुमसे फर्श धो डाला हो उस दिन तो तुमने कपड़े भी ढंग के नहीं पहने थे?"

"मुझे तो वह सूझा ही नहीं। माफ़ करना!" पाल मुँह फेरते हुए हँस दिया।

"चाय पियोगे क्या तुम? मैं समोवार चढ़ाये देती हूँ।"

"नहीं शुक्रिया! मैं पहले ही पी चुका हूँ।"

नतालिया ने पाल के रस्मी शब्द तोड़ लिये।

"यह क्या बात है? इतना दुराव क्यों?"

नतालिया तिरस्कारपूर्ण हँसी-हँसी। अब तो वह उसकी नज़र में भी और लोगों की तरह ही था, उसमें और दूसरों में वह कोई फ़र्क़ न समझती थी। जिस दिन वह ग़ैरों के सामने उसके क़दमों पर गिरा था उसी दिन से उसकी क़द्र कम हो गयी थी। उसके पहले अपनी बेवफाई के लिए वह बड़ी बेदर्दी से पीटी गयी थी। उसी को वह पाल से भी आशा रखती थी। लेकिन वह तो था ही कुछ और क़िस्म का। वह समझती थी कि यदि वह पाल के साथ भी दूसरों की तरह व्यवहार करेगी तो उससे पाल को कोई लाभ न होगा। वे लोग तुम्हें पीटते थे – यानी वे तुमसे मुहब्बत करते थे जब वे वास्तव में तुम्हें प्यार करते तो न सिर्फ़ वे तुम्हें पीटते हैं बल्कि तुम्हें जान से मारने की भी कोशिश करते हें, वे तो किसी भी हद तक जा सकते हैं। लेकिन पाल – वह तो बेचारा ग़ैरों के सामने सिर्फ़ उसके पैरों में गिर पड़ा था और औरतों की तरह रोया था! यह कोई मर्दानगी की बात तो है नहीं। यह तो एक मर्द को शोभा नहीं देती। तुम न तो ख़ुदा से दुआ करो, न गिड़गिड़ाओ, न रोओ बल्कि औरत को हासिल करने के लिए लड़ो। बस, फिर वह तुम्हारी हो जायगी। लेकिन शायद तब भी हो पाये...

पाल ने आह भरी।

"अब हमारा-तुम्हारा कोई सम्बन्ध नहीं है। एक दिन था, हमारी-तुम्हारी दोस्ती थी लेकिन वह मुद्दत हुई ख़त्म हो गयी है। बस, सब कुछ ख़त्म हो गया है!"

नतालिया विस्मित हो गयी पर उसने अपने विस्मय को छिपा लिया "जाहिर है तुम मुझसे विदा लेने आये हो।" वह उसके पास पलंग पर बैठ गयी और आइन्दा क्या कहेगा उसका इन्तजार करने लगी।

"यहाँ कुछ ज्यादा अन्धेरा है, नतालिया। ऐसा करो, लैम्प जला लो..."

"अच्छा!" और उसने लैम्प जला लिया।

नतालिया की ओर कुछ विचारमग्न हो उसने देखा और कहना शुरू किया :

"मैं तुमसे आख़िरी बार बातें कर रहा हूँ, नतालिया। अब कभी मिलने और बातें करने का मौका हमें नहीं मिलेगा!"

"वह भला कैसे?" उसने आँखें झुका लीं।

वह ख़ुद न जानती थी कि उस प्रकार की परिस्थिति में किस तरह बात करे। हर बात पर वह किसी संकेत की प्रतीक्षा करती तो ठीक से चीज़ों को समझ सके और उनका उचित उत्तर दे सके। उसने देखा पाल गत चार दिन में ही कितना दुबला हो गया था। आज की शान्तता ने नतालिया को चकित कर दिया था।

"तुम इस तरह से क्यों बातें कर रहे हो?"

"इसका अब वक़्त आ गया है। मैंने इस पर ख़ूब-ख़ूब ग़ौर कर लिया है। अब इसे ख़त्म होना चाहिए...और क्यों न हो, क्या अब भी कोई ऐसी चीज़ है जिसकी मैं तुमसे आशा कर सकूँ उसने उसकी ओर देखा और उसके जवाब की प्रतीक्षा करने लगा।"

जो कुछ हुआ था उसका नतालिया को रंज था। वह उस पर तरस कर रही थी। वह यह भांप गयी थी कि उसके मौन और शान्त होने के बावजूद वह दुःखी है और उसका दिल जख्मी है। आख़िर वह भी औरत तो थी। और एक औरत के होते हुए किसी भी बदनसीब इन्सान को देखकर वह अपनी दया नहीं रोक सकती थी।

"क्या मतलब है तुम्हारा?" वह उसकी ओर झुकी। "क्यों मैं तो हमेशा तैयार हूँ..."

"अरे नहीं, नहीं! उसकी ज़रूरत नहीं है!" उसने नतालिया को धकेल कर अलग कर दिया। "बस यही इसका अन्त है। ख़त्म हो गया हमारा रिश्ता। तुम ही ठीक कहती थीं। शादी से होता भी क्या है? अब मैं समझ गया हूँ उसकी हकीकत। मैं कैसा पति हो सकता हूँ? और तुम भला कैसी पत्नी बन सकती हो? यही तो सारे मामले की जड़ है..."

वह रुक गया।

"आख़िर यह कहना क्या चाहता है?" उसने सोचा। वह न समझ सकी। गीले-गीले बर्फ़ के लौंदे आ-आकर खिड़की के शीशों में जमते जाते थे मानो नतालिया को किसी चीज़ के प्रति चेतावनी देना चाहते हों या उसे कोई बात याद

दिलाना चाहते हों...

"हाँ, हाँ मैं भी यही समझती हूँ, तुमने ठीक ही कहा। मामला हमारा...ख़राब ही रहता," वह बड़ी शान्तिपूर्वक बुदबुदायी और उसे अब पहले से भी अधिक रंज पाल पर होने लगा।

"हाँ, हाँ बिल्कुल ठीक! लेकिन मैं तुम्हें इस हाल में नहीं छोड़ सकता। हरगिज़ नहीं! तुम बहुत देर तक मेरे दिल में समाई रही हो। मुझे तुमसे बहुत कुछ रकबत रही है। मैं फिर कह सकता हूँ कि इस दुनिया में तुमसे ज्यादा प्रिय और घनिष्ट इन्सान मेरे लिए कोई नहीं रहा है। तुम मुझे सबसे बढ़कर अजीज थीं। तुम्हारे ही साथ रहकर मैंने ज़िन्दगी को समझना सीखा। तुम्हारा मेरे लिए बहुत महत्त्व है। मेरे लिए सबसे ज्यादा मूल्यवान भी तुम ही थीं। मैं तुमसे ईमानदारी के साथ कहता हूँ – तुम मेरे दिल में बैठी रही हो!"

उसकी आवाज़ काँपने लगी। नतालिया के गालों पर आँसू ढलक आये। वह अब पाल की ओर देखना भी न चाहती थी और इसीलिए उसने अपना सिर घुमा लिया।

"तुम मेरे दिल में रही हो!" उसने दोहराया। "मैं तुम्हें इस तरह नष्ट होने और गन्दा होने के लिए नहीं छोड़ सकता! कभी नहीं! मैं वह नहीं कर सकता! उस स्त्री को जिससे मैं दिलो-जान से मुहब्बत करता हूँ, जिसे मैं दुनिया में सबसे अजीज चीज़ समझता हूँ उसका दूसरों द्वारा दुरुपयोग हो यह मैं बर्दाश्त नहीं कर सकता। नहीं, हरगिज नहीं, नतालिया, हरगिज नहीं!"

वह झुका हुआ खड़ा था और उसकी ओर नहीं देख रहा था। उस की आवाज़ से प्रकट होता था वह किसी नतीजे पर पहुँच चुका है और उसे उस पर दृढ़ विश्वास है – लेकिन साथ ही उसकी आवाज़ में कुछ और भी था। कुछ निवेदन, याचना और क्षमा-प्रार्थना। उसका बायाँ हाथ नतालिया के घुटने पर रखा था और दाहिना उसके कोट की जेब में।

"क्या मतलब है तुम्हारा?" नतालिया भुनभुनायी। वह अब भी उससे अलग थी और सिसकियाँ भर रही थी।

"बस यही मेरा मतलब है!..."

पाल ने जेब में से एक लम्बा चाकू निकाला और बड़े विश्वास और सफाई से उसके सीने में पेवस्त कर दिया।

"उफ!" उसकी कराह निकली और वह पलंग पर लुढ़क गयी, ठीक उसके सामने उसका चेहरा पाल के सामने आ गया।

पाल ने उसे अपनी बाहों में ले लिया और उसे बिस्तर पर लिटा दिया,

उसके कपड़े सीधे किये और उस पर एक ग्लानिपूर्ण नज़र डाली। नतालिया के चेहरे पर विस्मय की छाप लगी हुई थी। उसकी भंवें ऊपर उठ गयी थीं, उसकी आँखें अब मन्द थी लेकिन खुली-की-खुली रह गयी थीं। उसका मुँह अधखुला था और गालों पर आँसू ढुलक रहे थे।

पाल की कसी हुई नसें फ़ौरन तड़ख उठीं। उसने मन्द कराह ली। उसने नतालिया का चेहरा गर्म, भूखे चुम्बनों से ढँक दिया, सिसकियाँ भरता हुआ वह लरजने लगा मानो बुखार आ गया हो। वह ठण्डी पड़ चुकी थी।

बर्फ़ पटाख-पटाख खिड़की के शीशों पर पड़ रहा था। चिमनी से टकराकर हवा ज़ोर का शोर मचा रही थी। आँगन में अन्धकार फैल गया था; कमरा बिल्कुल अंधियारा हो गया था। नतालिया का चेहरा अब एकमात्र सफ़ेद धब्बे में परिणत हो गया था। पाल स्तम्भित हो उसके शरीर पर झुक पड़ा था।

चौबीस घण्टे तक वे अकेले उस कमरे में रहे। नतालिया के सीने में चाकू लगा हुआ था, वह बिस्तर पर लेटी थी। पाल अपना सिर उसके वक्षस्थल पर रखे सो रहा था। खिड़की के बाहर हेमन्त की वायु शीत और नम, ज़ोर-ज़ोर से चल रही थी।

अगले दिन शाम को जब वे आए तो उन्होंने उन्हें इसी स्थिति में पाया।

## 10

**जब** पाल गिबली पर इन्सान के न्याय का सर्वोच्च क़ानून लागू हुआ तो वसन्त ऋतु आ चुकी थी।

नवोदित वसन्त के सूर्य का प्रकाश खिड़की में से होकर हाल में पड़ रहा था जहाँ अदालत का अधिवेशन हो रहा था। जूरी के दो सदस्यों के गंजे चिकने सिरों को धूप अपनी क्रूर गर्मी पहुँचा रही थी, जिसे पाकर उन्हें नींद-सी आने लगी थी। अपनी आलस जजों, अदालत और श्रोताओं से छिपाने की गरज से वे आगे की ओर झुके हुए थे और झूठ-मूठ यह प्रकट कर रहे थे कि अदालत के मामले में उन्हें असाधारण रुचि है।

उनमें से एक ने श्रोताओं की मुखाकृतियों को बड़ी ग़ौर से देखा। जाहिर है कि उनमें उसे एक शख़्स भी अक्लमन्द न जान पड़ा और इसीलिए उसने उदास हो अपना सिर हिला दिया। दूसरे ने अपनी मूछों पर ताव दिया और अपने सेक्रेटरी की ओर ग़ौर से देखने लगा जो पेंसिल तराश रहा था।

उसी क्षण-बेंच पर बैठे अफ़सर ने कहा।

"अपराधी के पूरे होश व हवास को देखते हुए...के आधार पर...मैं गवाह से प्रश्न पूछता हूँ..." और सरकारी वकील की ओर मुड़कर उसने पूछा : "कुछ कहना है आपको?"

यह मधुरदर्शी सज्जन जिसकी मूछें ऐसी थीं जैसे दो झींगर बैठे हों, बड़ी विनम्रता से मुस्कुरा दिया।

"मुझे कुछ नहीं कहना है, हुजूरे वाला!"

"बचाव-पक्ष के महाशय! आपको कुछ कहना है।"

बचाव-पक्ष का वकील भी सरकारी वकील से कुछ कम साफ़गो न था। उसने भी बुलन्द आवाज़ में कहा कि उसे कुछ नहीं कहना है और यही उसके चेहरे से भी झलक रहा था।

"अभियुक्त! तुम्हें कुछ कहना है?"

अभियुक्त को भी कुछ नहीं कहना था। वह बड़ा मन्द और रुक्ष-सा बैठा था और उसके चेचक-भरे, स्थिर चेहरे का लोगों पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ रहा था।

सरकारी वकील, बचाव पक्ष के वकील और अभियुक्त तीनों ने श्रोताओं को धोखा दिया। सभी ने एक आवाज़ में कहा किसी को भी कुछ नहीं कहना है।

सरकारी वकील में यह आश्चर्यजनक योग्यता थी कि वह अपना चेहरा एक भूखे बुलडाग की भाँति भयंकर और खूंखार बना लेता था। आडम्बर करने और डरावना चेहरा बनाने की ओर भी उसकी प्रवृत्ति थी। उसके हाव-भाव से ऐसा प्रतीत होता था मानो वह जूरी को धमका रहा हो कि यदि तुमने अभियुक्त के साथ ज़रा भी नरमी बरतने की जुरअत की तो तुम्हारे टुकड़े कर दूँगा।

बचाव-पक्ष के वकील को जब विरोध करना होता तो बोलते-बोलते नाक सिनकने की, बड़ी उदासी के साथ बाल पीछे करने की और अपनी तकरीर को करुणा भरे शब्दों में व्यक्त करने की आदत थी। बड़े प्रवाहरूप में, क्रोधित हो विरोध करते हुए उसने बुलन्द आवाज़ से कहा :

"जूरी के सदस्य महोदय!" इसी सम्बोधन में उसने अपनी सारी करुणा और वाक-शक्ति भर दी। लेकिन उसकी बाक़ी तकरीर बिल्कुल, सूखी, बोदी और प्रभावहीन थी जिसका जूरी के दिलों पर कोई असर न पड़ा। बचाव-पक्ष के वकील ने इसी एक संबोधन के लिए अपनी सारी शक्ति नष्ट कर दी थी।

मुकद्दमे के दौरान में अभियुक्त की एक ही लालसा थी। जब उसे बारह वर्ष की कैद बामशक्कत की सजा हुई तो उसने अपनी यही इच्छा सबसे सामने जाहिर की :

"क्षमा कीजिए।" वह अफ़सर के सम्मुख झुक गया। उसकी आँखें सूख गयी थीं, याचना करते हुए वह बड़बड़ाया : "हुजूरे वाला! क्या मैं एक बार उसकी कब्र पर जा सकता हूँ?"

"क्या कहा?" अफ़सर सख्ती से चीख़ा।

"मैं सिर्फ़ उसकी कब्र पर एक बार जाना चाहता हूँ," अभियुक्त ने बड़े डरते-डरते अपनी इच्छा दोहराई।

"ना मुमकिन!" अफ़सर गरजा और धड़धड़ाता हुआ दालान से बाहर हो गया।

दो सिपाहीयों ने अपराधी को पकड़ा और उसी तरह से चले जिस तरह मुजरिम हमेशा अदालत से ले जाये जाते हैं।

• • •

यथार्थवाद और रोमानियत, स्वच्छंदतावाद के विलय के बारे में इन शब्दों में मैंने बीते वर्षों में सोवियत लेखकों के सारे काम का मूल्याँकन सुना। यह रूसी साहित्यिक जीवन पर अनन्त चिन्तन-मनन से उत्पन्न एक निष्कर्ष था। मुझे लगा कि इन दो सिद्धान्तों का विलय स्वयं गोर्की के लिए लाक्षणिक है : हमारी जनता के महान भविष्य के बारे में उनके स्वप्न की रोमानियत और इस भविष्य के निर्माण का यथार्थ हम उनकी रचनाओं में पाते हैं।

कोन्स्तान्तिन फेदिन

परिकल्पना प्रकाशन
लखनऊ

ISBN:81-87425-35-0
मूल्य / रु. 40.00

बेहतर ज़िन्दगी का रास्ता
बेहतर किताबों से होकर जाता है!

# जनचेतना
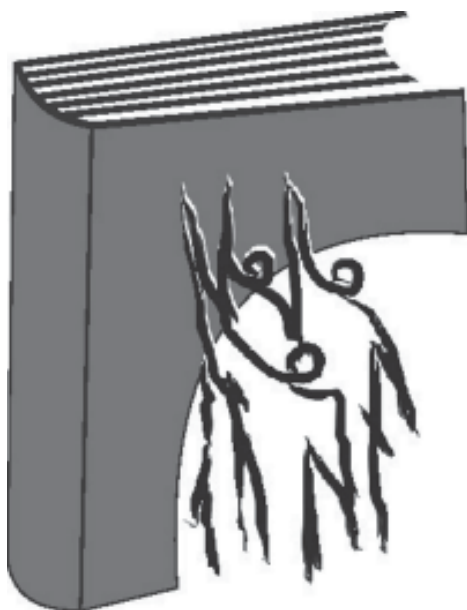
## सम्पूर्ण सूचीपत्र
## 2018

## *हम हैं सपनों के हरकारे*
## *हम हैं विचारों के डाकिये*

आम लोगों के लिए
ज़रूरी हैं वे किताबें
जो उनकी ज़िन्दगी की घुटन
और मुक्ति के स्वप्नों तक
पहुँचाती हैं विचार
जैसे कि बारूद की ढेरी तक
आग की चिनगारी।
घर–घर तक चिनगारी छिटकाने वाला
तेज़ हवा का झोंका बन जाना होगा
ज़िन्दगी और आने वाले दिनों का सच
बतलाने वाली किताबों को
जन–जन तक पहुँचाना होगा।

दो दशक पहले प्रगतिशील, जनपक्षधर साहित्य को जन–जन तक पहुँचाने की मुहिम की एक छोटी–सी शुरुआत हुई, बड़े मंसूबे के साथ। एक छोटी–सी दुकान और फ़ुटपाथों पर, मुहल्लों में और दफ़्तरों के सामने छोटी–छोटी प्रदर्शनियाँ लगाने वाले तथा साइकिलों पर, ठेलों पर, झोलों में भरकर घर–घर किताबें पहुँचाने वाले समर्पित अवैतनिक वालण्टियरों की टीम – शुरुआत बस यहीं से हुई। आज यह वैचारिक अभियान उत्तर भारत के दर्जनों शहरों और गाँवों तक फैल चुका है। एक बड़े और एक छोटे प्रदर्शनी वाहन के माध्यम से जनचेतना हिन्दी और पंजाबी क्षेत्र के सुदूर कोनों तक हिन्दी, पंजाबी और अंग्रेज़ी साहित्य एवं कला–सामग्री के साथ सपने और विचार लेकर जा रही है, जीवन–संघर्ष–सृजन–प्रगति का नारा लेकर जा रही है।

हिन्दी क्षेत्र में यह अपने ढंग का एक अनूठा प्रयास है। एक भी वैतनिक स्टाफ़ के बिना, समर्पित वालण्टियरों और विभिन्न सहयोगी जनसंगठनों के कार्यकर्ताओं के बूते पर यह प्रोजेक्ट आगे बढ़ रहा है।

**आइये, आप सभी इस मुहिम में हमारे सहयात्री बनिये।**

# सम्पूर्ण सूचीपत्र

# परिकल्पना प्रकाशन

## उपन्यास

| | | | |
|---|---|---|---|
| 1. | **तरुणाई का तराना**/याङ मो | | ... |
| 2. | **तीन टके का उपन्यास**/बेर्टोल्ट ब्रेष्ट | | ... |
| 3. | **माँ**/मक्सिम गोर्की | | ... |
| 4. | **वे तीन**/मक्सिम गोर्की | | 75.00 |
| 5. | **मेरा बचपन**/मक्सिम गोर्की | | ... |
| 6. | **जीवन की राहों पर**/मक्सिम गोर्की | | ... |
| 7. | **मेरे विश्वविद्यालय**/मक्सिम गोर्की | | ... |
| 8. | **फ़ोमा गोर्देयेव**/मक्सिम गोर्की | | 55.00 |
| 9. | **अभागा**/मक्सिम गोर्की | | 40.00 |
| 10. | **बेकरी का मालिक**/मक्सिम गोर्की | | 25.00 |
| 11. | **असली इन्सान**/बोरिस पोलेवोई | | ... |
| 12. | **तरुण गार्ड**/अलेक्सान्द्र फ़देयेव | (दो खण्डों में) | 160.00 |
| 13. | **गोदान**/प्रेमचन्द | | ... |
| 14. | **निर्मला**/प्रेमचन्द | | ... |
| 15. | **पथ के दावेदार**/शरत्चन्द्र | | ... |
| 16. | **चरित्रहीन**/शरत्चन्द्र | | ... |
| 17. | **गृहदाह**/शरत्चन्द्र | | 70.00 |
| 18. | **शेषप्रश्न**/शरत्चन्द्र | | ... |
| 19. | **इन्द्रधनुष**/वान्दा वैसील्युस्का | | 65.00 |
| 20. | **इकतालीसवाँ**/बोरीस लव्रेन्योव | | 20.00 |
| 21. | **दास्तान चलती है** (एक नौजवान की डायरी से)/अनातोली कुज़्नेत्सोव | | 70.00 |

22. **वे सदा युवा रहेंगे**/ग्रीगोरी बकलानोव 60.00
23. **मुर्दों को क्या लाज-शर्म**/ग्रीगोरी बकलानोव 40.00
24. **बख़्तरबन्द रेल 14-69**/व्सेवोलोद इवानोव 30.00
25. **अश्वसेना**/इसाक बाबेल 40.00
26. **लाल झण्डे के नीचे**/लाओ श 50.00
27. **रिक्शावाला**/लाओ श 65.00
28. **चिरस्मरणीय** (प्रसिद्ध कन्नड़ उपन्यास)/निरंजन 55.00
29. **एक तयशुदा मौत** (एनजीओ की पृष्ठभूमि पर)/मोहित राय 30.00
30. **Mother/***Maxim Gorky* 250.00
31. **The Song of Youth**/*Yang Mo* ...

## कहानियाँ

1. **श्रेष्ठ सोवियत कहानियाँ** (3 खण्डों का सेट) 450.00
2. **वह शख़्स जिसने हैडलेबर्ग को भ्रष्ट कर दिया**
(मार्क ट्वेन की दो कहानियाँ) 60.00

**मक्सिम गोर्की**

3. **चुनी हुई कहानियाँ** (खण्ड 1) ...
4. **चुनी हुई कहानियाँ** (खण्ड 2) ...
5. **चुनी हुई कहानियाँ** (खण्ड 3) ...
6. **हिम्मत न हारना मेरे बच्चो** 10.00
7. **कामो : एक जाँबाज़ इन्क़लाबी मज़दूर की कहानी** ...

**अन्तोन चेख़व**

8. **चुनी हुई कहानियाँ** (खण्ड 1) ...
9. **चुनी हुई कहानियाँ** (खण्ड 2) ...
10. **दो अमर कहानियाँ**/लू शुन ...
11. **श्रेष्ठ कहानियाँ**/प्रेमचन्द 80.00
12. **पाँच कहानियाँ**/पुश्किन ...
13. **तीन कहानियाँ**/गोगोल 30.00
14. **तूफ़ान**/अलेक्सान्द्र सेराफ़ीमोविच 60.00
15. **वसन्त**/सेर्गेई अन्तोनोव 60.00
16. **वसन्तागम**/रओ शि 50.00

17. **सूरज का ख़ज़ाना**/मिख़ाईल प्रीश्विन 40.00
18. **स्नेगोवेत्स का होटल**/मत्वेई तेवेल्योव 35.00
19. **वसन्त के रेशम के कीड़े**/माओ तुन 50.00
20. **क्रान्ति झंझा की अनुगूँजें** (अक्टूबर क्रान्ति की कहानियाँ) 75.00
21. **चुनी हुई कहानियाँ**/श्याओ हुङ 50.00
22. **समय के पंख**/कोन्स्तान्तीन पाउस्तोव्सकी ...
23. **श्रेष्ठ रूसी कहानियाँ** (संकलन) ...
24. **अनजान फूल**/आन्द्रेई प्लातोनोव 40.00
25. **कुत्ते का दिल**/मिख़ाईल बुल्गाकोव 70.00
26. **दोन की कहानियाँ**/मिख़ाईल शोलोख़ोव 35.00
27. **अब इन्साफ़ होने वाला है** ...
(भारत और पाकिस्तान की प्रगतिशील उर्दू कहानियों का प्रतिनिधि संकलन)
(ग्यारह नयी कहानियों सहित परिवर्द्धित संस्करण)/स. **शकील सिद्दीक़ी**
28. **लाल कुरता**/हरिशंकर श्रीवास्तव ...
29. **चम्पा और अन्य कहानियाँ**/मदन मोहन 35.00

## कविताएँ

1. **जब मैं जड़ों के बीच रहता हूँ**/पाब्लो नेरूदा 60.00
2. **आँखें दुनिया की तरफ़ देखती हैं**/लैंग्सटन ह्यूज 60.00
3. **उम्मीद-ए-सहर की बात सुनो** (फ़ैज़ अहमद फ़ैज़ के संस्मरण और चुनिन्दा शायरी, सम्पादक: शकील सिद्दीक़ी) 160.00
4. **माओ त्से-तुङ की कविताएँ** (राजनीतिक पृष्ठभूमि सहित विस्तृत टिप्पणियाँ एवं अनुवाद : सत्यव्रत) 20.00
5. **इकहत्तर कविताएँ और तीस छोटी कहानियाँ – बेर्टोल्ट ब्रेष्ट**
(मूल जर्मन से अनुवाद : मोहन थपलियाल)
(ब्रेष्ट के दुर्लभ चित्रों और स्केचों से सज्जित) 150.00
6. **समर तो शेष है...** (इप्टा के दौर से आज तक के प्रतिनिधि क्रान्तिकारी समूहगीतों का संकलन) 65.00
7. **मध्यवर्ग का शोकगीत**/हान्स माग्नुस एन्त्सेन्सबर्गर 30.00
8. **जेल डायरी**/हो ची मिन्ह 40.00
9. **ओस की बूँदें और लाल गुलाब**/होसे मारिया सिसों 25.00

10. **इन्तिफ़ादा :** फ़लस्तीनी कविताएँ/स. रामकृष्ण पाण्डेय ...
11. **लहू है कि तब भी गाता है**/पाश ...
12. **लोहू और इस्पात से फूटता गुलाब :** फ़लस्तीनी कविताएँ (द्विभाषी संकलन)
    **A Rose Breaking Out of Steel and Blood** (Palestinian Poems) 60.00
13. **पाठान्तर**/विष्णु खरे 50.00
14. **लालटेन जलाना** (चुनी हुई कविताएँ)/विष्णु खरे 60.00
15. **ईश्वर को मोक्ष**/नीलाभ 60.00
16. **बहनें और अन्य कविताएँ**/असद ज़ैदी 50.00
17. **सामान की तलाश**/असद ज़ैदी 50.00
18. **कोहेकाफ़ पर संगीत-साधना**/शशिप्रकाश 50.00
19. **पतझड़ का स्थापत्य**/शशिप्रकाश 75.00
20. **सात भाइयों के बीच चम्पा**/कात्यायनी (पेपरबैक) ...
    (हार्डबाउंड) 125.00
21. **इस पौरुषपूर्ण समय में**/कात्यायनी 60.00
22. **जादू नहीं कविता**/कात्यायनी (पेपरबैक) ...
    (हार्डबाउंड) 200.00
23. **फ़ुटपाथ पर कुर्सी**/कात्यायनी 80.00
24. **राख-अँधेरे की बारिश में**/कात्यायनी 15.00
25. **यह मुखौटा किसका है**/विमल कुमार 50.00
26. **यह जो वक्त है**/कपिलेश भोज 60.00
27. **देश एक राग है**/भगवत रावत ...
28. **बहुत नर्म चादर थी जल से बुनी**/नरेश चन्द्रकर 60.00
29. **दिन भौंहें चढ़ाता है**/मलय 120.00
30. **देखते न देखते**/मलय 65.00
31. **असम्भव की आँच**/मलय 100.00
32. **इच्छा की दूब**/मलय 90.00
33. **इस ढलान पर**/प्रमोद कुमार 90.00
34. **तो**/शैलेय 75.00

## नाटक

1. **करवट**/मक्सिम गोर्की 40.00
2. **दुश्मन**/मक्सिम गोर्की 35.00

3. **तलछट**/मक्सिम गोर्की ...
4. **तीन बहनें** (दो नाटक)/अन्तोन चेख़व 45.00
5. **चेरी की बग़िया** (दो नाटक)/अ. चेख़व 45.00
6. **बलिदान जो व्यर्थ न गया**/व्सेवोलोद विश्नेव्स्की 30.00
7. **क्रेमलिन की घण्टियाँ**/निकोलाई पोगोदिन 30.00

## संस्मरण

1. **लेव तोल्स्तोय : शब्द-चित्र**/मक्सिम गोर्की 20.00

## स्त्री-विमर्श

1. **दुर्ग द्वार पर दस्तक** (स्त्री प्रश्न पर लेख)/कात्यायनी (पेपरबैक) 130.00

## ज्वलन्त प्रश्न

1. **कुछ जीवन्त कुछ ज्वलन्त**/कात्यायनी 90.00
2. **षड्यन्त्ररत मृतात्माओं के बीच**
(साम्प्रदायिकता पर लेख)/कात्यायनी 25.00
3. **इस रात्रि श्यामला बेला में** (लेख और टिप्पणियाँ)/सत्यव्रत 30.00

## व्यंग्य

1. **कहें मनबहकी खरी-खरी**/मनबहकी लाल 25.00

## नौजवानों के लिए विशेष

1. **जय जीवन!** (लेख, भाषण और पत्र)/निकोलाई ओस्त्रोव्स्की 50.00

## वैचारिकी

1. **माओवादी अर्थशास्त्र और समाजवाद का भविष्य**/रेमण्ड लोट्टा 25.00

## साहित्य-विमर्श

1. **उपन्यास और जनसमुदाय**/रैल्फ़ फ़ॉक्स 75.00
2. **लेखनकला और रचनाकौशल**/
गोर्की, फ़ेदिन, मयाकोव्स्की, अ. तोल्सतोय ...
3. **दर्शन, साहित्य और आलोचना**/
बेलिंस्की, हर्ज़ेन, चेर्नीशेव्स्की, दोब्रोल्युबोव 65.00
4. **सृजन-प्रक्रिया और शिल्प के बारे में**/मक्सिम गोर्की 40.00

5. **मार्क्सवाद और भाषाविज्ञान की समस्याएँ**/स्तालिन 20.00

## नयी पीढ़ी के निर्माण के लिए

1. **एक पुस्तक माता-पिता के लिए**/अन्तोन मकारेंको ...
2. **मेरा हृदय बच्चों के लिए**/वसीली सुखोम्लीन्स्की ...

## आह्वान पुस्तिका शृंखला

1. **प्रेम, परम्परा और विद्रोह**/कात्यायनी 50.00

## सृजन परिप्रेक्ष्य पुस्तिका शृंखला

1. **एक नये सर्वहारा पुनर्जागरण और प्रबोधन के वैचारिक-सांस्कृतिक कार्यभार**/कात्यायनी, सत्यम 25.00

---

**दो महत्वपूर्ण पत्रिकाएँ**

# दिशा सन्धान

**मार्क्सवादी सैद्धान्तिक शोध और विमर्श का मंच**

**सम्पादकः** कात्यायनी / सत्यम

**एक प्रति : 100 रुपये, आजीवन: 5000 रुपये**
**वार्षिक ( 4 अंक ) : 400 रुपये ( 100 रु. रजि. बुकपोस्ट व्यय अतिरिक्त )**

**मीडिया, संस्कृति और समाज पर केन्द्रित**

**सम्पादकः** कात्यायनी / सत्यम

**एक प्रति : 40 रुपये आजीवन: 3000 रुपये**
**वार्षिक ( 4 अंक ) : 160 रुपये ( 100 रु. रजि. बुक पोस्ट व्यय अतिरिक्त )**

**सम्पादकीय कार्यालय :**

69 ए-1, बाबा का पुरवा, पेपर मिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006
फोनः 9936650658, 8853093555
वेबसाइट : http://dishasandhaan.in ईमेलः dishasandhaan@gmail.com
वेबसाइट : http://naandipath.in ईमेलः naandipath@gmail.com

# राहुल फाउण्डेशन

## नौजवानों के लिए विशेष

| | | |
|---|---|---|
| 1. | **नौजवानों से दो बातें**/पीटर क्रोपोटकिन | 15.00 |
| 2. | **क्रान्तिकारी कार्यक्रम का मसविदा**/भगतसिंह | 15.00 |
| 3. | **मैं नास्तिक क्यों हूँ और 'ड्रीमलैण्ड' की भूमिका**/भगतसिंह | 15.00 |
| 4. | **बम का दर्शन और अदालत में बयान**/भगतसिंह | 15.00 |
| 5. | **जाति-धर्म के झगड़े छोड़ो, सही लड़ाई से नाता जोड़ो**/भगतसिंह | 15.00 |
| 6. | **भगतसिंह ने कहा...**(चुने हुए उद्धरण)/भगतसिंह | 15.00 |

## क्रान्तिकारियों के दस्तावेज़

| | | |
|---|---|---|
| 1. | **भगतसिंह और उनके साथियों के सम्पूर्ण उपलब्ध दस्तावेज़**/स. सत्यम | 350.00 |
| 2. | **शहीदेआज़म की जेल नोटबुक**/भगतसिंह | 100.00 |
| 3. | **विचारों की सान पर**/भगतसिंह | 50.00 |

## क्रान्तिकारियों के विचारों और जीवन पर

| | | |
|---|---|---|
| 1. | **बहरों को सुनाने के लिए**/एस. इरफ़ान हबीब (भगतसिंह और उनके साथियों की विचारधारा और कार्यक्रम) | ... |
| 2. | **क्रान्तिकारी आन्दोलन का वैचारिक विकास**/शिव वर्मा | 15.00 |
| 3. | **भगतसिंह और उनके साथियों की विचारधारा और राजनीति**/बिपन चन्द्र | 20.00 |
| 4. | **यश की धरोहर**/ भगवानदास माहौर, शिव वर्मा, सदाशिवराव मलकापुरकर | 50.00 |
| 5. | **संस्मृतियाँ**/शिव वर्मा | 80.00 |
| 6. | **शहीद सुखदेव : नौघरा से फाँसी तक**/स. डॉ. हरदीप सिंह | 40.00 |

## महत्त्वपूर्ण और विचारोत्तेजक संकलन

| | | |
|---|---|---|
| 1. | **उम्मीद एक ज़िन्दा शब्द है**<br>('दायित्वबोध' के महत्त्वपूर्ण सम्पादकीय लेखों का संकलन) | 75.00 |
| 2. | **एनजीओ : एक ख़तरनाक साम्राज्यवादी कुचक्र** | 60.00 |
| 3. | **डब्ल्यूएसएफ़ : साम्राज्यवाद का नया ट्रोजन हॉर्स** | 50.00 |

## ज्वलन्त प्रश्न

| | | |
|---|---|---|
| 1. | **'जाति' प्रश्न के समाधान के लिए बुद्ध काफ़ी नहीं, अम्बेडकर भी काफ़ी नहीं, मार्क्स ज़रूरी हैं** / रंगनायकम्मा | ... |
| 2. | **जाति और वर्ग : एक मार्क्सवादी दृष्टिकोण** / रंगनायकम्मा | 60.00 |

## दायित्वबोध पुस्तिका शृंखला

| | | |
|---|---|---|
| 1. | **अनश्वर हैं सर्वहारा संघर्षों की अग्निशिखाएँ**/दीपायन बोस | 10.00 |
| 2. | **समाजवाद की समस्याएँ, पूँजीवादी पुनर्स्थापना और महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति**/शशिप्रकाश | 30.00 |
| 3. | **क्यों माओवाद?**/शशिप्रकाश | 20.00 |
| 4. | **बुर्जुआ वर्ग के ऊपर सर्वतोमुखी अधिनायकत्व लागू करने के बारे में**/चाङ चुन-चियाओ | 5.00 |
| 5. | **भारतीय कृषि में पूँजीवादी विकास**/सुखविन्दर | 35.00 |

## आह्वान पुस्तिका शृंखला

| | | |
|---|---|---|
| 1. | **छात्र-नौजवान नयी शुरुआत कहाँ से करें?** | 15.00 |
| 2. | **आरक्षण : पक्ष, विपक्ष और तीसरा पक्ष** | 15.00 |
| 3. | **आतंकवाद के बारे में : विभ्रम और यथार्थ** | 15.00 |
| 4. | **क्रान्तिकारी छात्र-युवा आन्दोलन** | 15.00 |
| 5. | **भ्रष्टाचार और उसके समाधान का सवाल सोचने के लिए कुछ मुद्दे** | 50.00 |

## बिगुल पुस्तिका शृंखला

| | | |
|---|---|---|
| 1. | **कम्युनिस्ट पार्टी का संगठन और उसका ढाँचा**/लेनिन | 10.00 |
| 2. | **मकड़ा और मक्खी**/विल्हेल्म लीब्नेख़्त | 5.00 |

3. **ट्रेडयूनियन काम के जनवादी तरीक़े**/सेर्गेई रोस्तोवस्की 5.00
4. **मई दिवस का इतिहास**/अलेक्ज़ैण्डर ट्रैक्टनबर्ग 10.00
5. **पेरिस कम्यून की अमर कहानी** 20.00
6. **अक्टूबर क्रान्ति की मशाल** 15.00
7. **जंगलनामा : एक राजनीतिक समीक्षा**/डॉ. दर्शन खेड़ी 5.00
8. **लाभकारी मूल्य, लागत मूल्य, मध्यम किसान और छोटे पैमाने के माल उत्पादन के बारे में मार्क्सवादी दृष्टिकोण : एक बहस** 30.00
9. **संशोधनवाद के बारे में** 10.00
10. **शिकागो के शहीद मज़दूर नेताओं की कहानी**/हावर्ड फ़ास्ट 10.00
11. **मज़दूर आन्दोलन में नयी शुरुआत के लिए** 20.00
12. **मज़दूर नायक, क्रान्तिकारी योद्धा** 15.00
13. **चोर, भ्रष्ट और विलासी नेताशाही** ...
14. **बोलते आँकड़े, चीख़ती सच्चाइयाँ** ...
15. **राजधानी के मेहनतकश : एक अध्ययन**/अभिनव 30.00
16. **फ़ासीवाद क्या है और इससे कैसे लड़ें?**/अभिनव 75.00
17. **नेपाली क्रान्ति : इतिहास, वर्तमान परिस्थिति और आगे के रास्ते से जुड़ी कुछ बातें, कुछ विचार**/आलोक रंजन 55.00
18. **कैसा है यह लोकतंत्र और यह संविधान किनकी सेवा करता है** आलोक रंजन/आनन्द सिंह 100.00

## मार्क्सवाद

1. **धर्म के बारे में**/मार्क्स, एंगेल्स 100.00
2. **कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र**/मार्क्स-एंगेल्स 25.00
3. **साहित्य और कला**/मार्क्स-एंगेल्स 150.00
4. **फ्रांस में वर्ग-संघर्ष**/कार्ल मार्क्स 40.00
5. **फ्रांस में गृहयुद्ध**/कार्ल मार्क्स 20.00
6. **लूई बोनापार्त की अठारहवीं ब्रूमेर**/कार्ल मार्क्स 35.00
7. **उजरती श्रम और पूँजी**/कार्ल मार्क्स 15.00
8. **मज़दूरी, दाम और मुनाफ़ा**/कार्ल मार्क्स 20.00
9. **गोथा कार्यक्रम की आलोचना**/कार्ल मार्क्स 40.00
10. **लुडविग फ़ायरबाख़ और क्लासिकीय जर्मन दर्शन का अन्त**/ फ़्रेडरिक एंगेल्स 20.00

| | | |
|---|---|---|
| 11. | **जर्मनी में क्रान्ति तथा प्रतिक्रान्ति**/फ़्रेडरिक एंगेल्स | 30.00 |
| 12. | **समाजवाद : काल्पनिक तथा वैज्ञानिक**/फ़्रेडरिक एंगेल्स | ... |
| 13. | **पार्टी कार्य के बारे में**/लेनिन | 15.00 |
| 14. | **एक क़दम आगे, दो क़दम पीछे**/लेनिन | 60.00 |
| 15. | **जनवादी क्रान्ति में सामाजिक-जनवाद के दो रणकौशल**/लेनिन | 25.00 |
| 16. | **समाजवाद और युद्ध**/लेनिन | 20.00 |
| 17. | **साम्राज्यवाद : पूँजीवाद की चरम अवस्था**/लेनिन | 30.00 |
| 18. | **राज्य और क्रान्ति**/लेनिन | 40.00 |
| 19. | **सर्वहारा क्रान्ति और ग़द्दार काउत्स्की**/लेनिन | 15.00 |
| 20. | **दूसरे इण्टरनेशनल का पतन**/लेनिन | 15.00 |
| 21. | **गाँव के ग़रीबों से**/लेनिन | ... |
| 22. | **मार्क्सवाद का विकृत रूप तथा साम्राज्यवादी अर्थवाद**/लेनिन | 20.00 |
| 23. | **कार्ल मार्क्स और उनकी शिक्षा**/लेनिन | 20.00 |
| 24. | **क्या करें?**/लेनिन | ... |
| 25. | **"वामपन्थी" कम्युनिज़्म - एक बचकाना मर्ज़**/लेनिन | ... |
| 26. | **पार्टी साहित्य और पार्टी संगठन**/लेनिन | 15.00 |
| 27. | **जनता के बीच पार्टी का काम**/लेनिन | 70.00 |
| 28. | **धर्म के बारे में**/लेनिन | 20.00 |
| 29. | **तोल्स्तोय के बारे में**/लेनिन | 10.00 |
| 30. | **मार्क्सवाद की मूल समस्याएँ**/जी. प्लेख़ानोव | 30.00 |
| 31. | **जुझारू भौतिकवाद**/प्लेख़ानोव | 35.00 |
| 32. | **लेनिनवाद के मूल सिद्धान्त**/स्तालिन | 50.00 |
| 33. | **सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी ( बोल्शेविक ) का इतिहास** | 90.00 |
| 34. | **माओ त्से-तुङ की रचनाएँ : प्रतिनिधि चयन** (एक खण्ड में) | ... |
| 35. | **कम्युनिस्ट जीवनशैली और कार्यशैली के बारे में**/माओ त्से-तुङ | ... |
| 36. | **सोवियत अर्थशास्त्र की आलोचना**/माओ त्से-तुङ | 35.00 |
| 37. | **दर्शन विषयक पाँच निबन्ध**/माओ त्से-तुङ | 70.00 |
| 38. | **कला-साहित्य विषयक एक भाषण और पाँच दस्तावेज़** / माओ त्से-तुङ | 15.00 |
| 39. | **माओ त्से-तुङ की रचनाओं के उद्धरण** | 50.00 |

## अन्य मार्क्सवादी साहित्य

| | | |
|---|---|---|
| 1. | **राजनीतिक अर्थशास्त्र, मार्क्सवादी अध्ययन पाठ्यक्रम** नयी | 300.00 |
| 2. | **ख्रुश्चेव झूठा था**/ग्रोवर फ़र | 300.00 |
| 3. | **राजनीतिक अर्थशास्त्र के मूलभूत सिद्धान्त** (दो खण्डों में) (दि शंघाई टेक्स्टबुक ऑफ़ पोलिटिकल इकोनॉमी) | 160.00 |
| 4. | **पेरिस कम्यून की शिक्षाएँ** (सचित्र) एलेक्ज़ेण्डर ट्रैक्टनबर्ग | 10.00 |
| 5. | **कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र**/डी. रियाज़ानोव (विस्तृत व्याख्यात्मक टिप्पणियों सहित) | 100.00 |
| 6. | **द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद**/डेविड गेस्ट | ... |
| 7. | **महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति : चुने हुए दस्तावेज़ और लेख** (खण्ड 1) | 35.00 |
| 8. | **इतिहास ने जब करवट बदली**/विलियम हिण्टन | 25.00 |
| 9. | **द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद**/वी. अदोरात्स्की | 50.00 |
| 10. | **अक्टूबर क्रान्ति और लेनिन**/अल्बर्ट रीस विलियम्स (महत्त्वपूर्ण नयी सामग्री और अनेक नये दुर्लभ चित्रों से सज्जित परिवर्द्धित संस्करण) | 90.00 |
| 11. | **सोवियत संघ में पूँजीवाद की पुनर्स्थापना**/मार्टिन निकोलस | 50.00 |

## राहुल साहित्य

| | | |
|---|---|---|
| 1. | **तुम्हारी क्षय**/राहुल सांकृत्यायन | 40.00 |
| 2. | **दिमाग़ी ग़ुलामी**/राहुल सांकृत्यायन | ... |
| 3. | **वैज्ञानिक भौतिकवाद**/राहुल सांकृत्यायन | 65.00 |
| 4. | **राहुल निबन्धावली**/राहुल सांकृत्यायन | 50.00 |
| 5. | **स्तालिन : एक जीवनी**/राहुल सांकृत्यायन | 150.00 |

## परम्परा का स्मरण

| | | |
|---|---|---|
| 1. | **चुनी हुई रचनाएँ**/गणेशशंकर विद्यार्थी | 100.00 |
| 2. | **सलाखों के पीछे से**/गणेशशंकर विद्यार्थी | 30.00 |
| 3. | **ईश्वर का बहिष्कार**/राधामोहन गोकुलजी | 30.00 |
| 4. | **लौकिक मार्ग**/राधामोहन गोकुलजी | 20.00 |
| 5. | **धर्म का ढकोसला**/राधामोहन गोकुलजी | 30.00 |
| 6. | **स्त्रियों की स्वाधीनता**/राधामोहन गोकुलजी | 30.00 |

## जीवनी और संस्मरण

| | | |
|---|---|---|
| 1. | **कार्ल मार्क्स जीवन और शिक्षाएँ**/ज़ेल्डा कोट्स | 25.00 |
| 2. | **फ़्रेडरिक एंगेल्स : जीवन और शिक्षाएँ**/ज़ेल्डा कोट्स | ... |
| 3. | **कार्ल मार्क्स : संस्मरण और लेख** | ... |
| 4. | **अदम्य बोल्शेविक नताशा**<br>(एक स्त्री मज़दूर संगठनकर्ता की संक्षिप्त जीवनी)/एल. काताशेवा | 30.00 |
| 5. | **लेनिन कथा**/मरीया प्रिलेज़ायेवा | 70.00 |
| 6. | **लेनिन विषयक कहानियाँ** | 75.00 |
| 7. | **लेनिन के जीवन के चन्द पन्ने**/लीदिया फ़ोतियेवा | ... |
| 8. | **स्तालिन : एक जीवनी**/राहुल सांकृत्यायन | 150.00 |

## विविध

| | | |
|---|---|---|
| 1. | **फाँसी के तख़्ते से**/जूलियस फ़्यूचिक | 30.00 |
| 2. | **पाप और विज्ञान**/डायसन कार्टर | 100.00 |
| 3. | **सापेक्षिकता सिद्धान्त क्या है?**/लेव लन्दाऊ, यूरी रूमेर | .... |

# Rahul Foundation

## MARXIST CLASSICS

### KARL MARX

| | | |
|---|---|---|
| 1. | **A Contribution to the Critique of Political Economy** | 100.00 |
| 2. | **The Civil War in France** | 80.00 |
| 3. | **The Eighteenth Brumaire of Louis Bonaparte** | 40.00 |
| 4. | **Critique of the Gotha Programme** | 25.00 |
| 5. | **Preface and Introduction to A Contribution to the Critique of Political Economy** | 25.00 |
| 6. | **The Poverty of Philosophy** | 80.00 |
| 7. | **Wages, Price and Profit** | 35.00 |
| 8. | **Class Struggles in France** | 50.00 |

### FREDERICK ENGELS

| | | |
|---|---|---|
| 9. | **The Peasant War in Germany** | 70.00 |
| 10. | **Ludwig Feuerbach and the End of Classical German Philosophy** | 65.00 |
| 11. | **On Capital** | 55.00 |
| 12. | **The Origin of the Family, Private Property and the State** | 100.00 |
| 13. | **Socialism: Utopian and Scientific** | 60.00 |
| 14. | **On Marx** | 20.00 |
| 15. | **Principles of Communism** | 5.00 |

### MARX and ENGELS

| | | |
|---|---|---|
| 16. | **Historical Writings** (Set of 2 Vols.) | 700.00 |
| 17. | **Manifesto of the Communist Party** | 50.00 |
| 18. | **Selected Letters** | 40.00 |

### V. I. LENIN

| | | |
|---|---|---|
| 19. | **Theory of Agrarian Question** | 160.00 |
| 20. | **The Collapse of the Second International** | 25.00 |
| 21. | **Imperialism, the Highest Stage of Capitalism** | 80.00 |
| 22. | **Materialism and Empirio-Criticism** | 150.00 |

23. **Two Tactics of Social-Democracy in the Democratic Revolution** 55.00
24. **Capitalism and Agriculture** 30.00
25. **A Characterisation of Economic Romanticism** 50.00
26. **On Marx and Engels** 35.00
27. **“Left-Wing” Communism, An Infantile Disorder** 40.00
28. **Party Work in the Masses** 55.00
29. **The Proletarian Revolution and the Renegade Kautsky** 40.00
30. **One Step Forward, Two Steps Back** ...
31. **The State and Revolution** ...

**MARX, ENGELS and LENIN**

32. **On the Dictatorship of Proletariat, *Questions and Answers*** 50.00
33. **On the Dictatorship of the Proletariat: *Selected Expositions*** 10.00

**PLEKHANOV**

34. **Fundamental Problems of Marxism** 35.00

**J. STALIN**

35. **Marxism and Problems of Linguistics** 25.00
36. **Anarchism or Socialism?** 25.00
37. **Economic Problems of Socialism in the USSR** 30.00
38. **On Organisation** 15.00
39. **The Foundations of Leninism** 40.00
40. **The Essential Stalin** *Major Theoretical Writings 1905–52* 175.00
    (Edited and with an Introduction by Bruce Franklin)

**LENIN and STALIN**

41. **On the Party** ...

**MAO TSE-TUNG**

42. **Five Essays on Philosophy** 50.00
43. **A Critique of Soviet Economics** 70.00
44. **On Literature and Art** 80.00

45. **Selected Readings from the Works of Mao Tse-tung** ...

46. **Quotations from the Writings of Mao Tse-tung** ...

## OTHER MARXISM

1. **Political Economy, *Marxist Study Courses*** (Prepared by the British Communist Party in the 1930s) 275.00
2. **Fundamentals of Political Economy** (The Shanghai Textbook) 160.00
3. **Reader in Marxist Philosophy**/ *Howard Selsam & Harry Martel* ...
4. **Socialism and Ethics**/*Howard Selsam* ...
5. **What Is Philosophy?** (A Marxist Introduction)**/** *Howard Selsam* 75.00
6. **Reader's Guide to Marxist Classics/***Maurice Cornforth* 70.00
7. **From Marx to Mao Tse-tung /**George Thomson ...
8. **Capitalism and After/**George Thomson ...
9. **The Human Essence/**George Thomson 65.00
10. **Mao Tse-tung's Immortal Contributions/***Bob Avakian* 125.00
11. **A Basic Understanding of the Communist Party** (Written during the GPCR in China) 150.00
12. **The Lessons of the Paris Commune/** *Alexander Trachtenberg (Illustrated)* 15.00

## BIOGRAPHIES & REMINISCENCES

1. **Reminiscences of Marx and Engels** (Collection) ...
2. **Karl Marx And Frederick Engels:** An Introduction to their Lives and Work/David Riazanov ...
3. **Joseph Stalin: A Political Biography** *by The Marx-Engels-Lenin Institute* ...

## PROBLEMS OF SOCIALISM

1. **How Capitalism was Restored in the Soviet Union, And What This Means for the World Struggle (Red Papers 7)** 175.00

2. **Preface of Class Struggles in the USSR** / *Charles Bettelheim* 30.00
3. **Nepalese Revolution: History, Present Situation and Some Points, Some Thoughts on the Road Ahead** / Alok Ranjan 75.00
4. **Problems of Socialism, Capitalist Restoration and the Great Proletarian Cultural Revolution** / *Shashi Prakash* 40.00

## ON THE CULTURAL REVOLUTION

1. **Hundred Day War:** The Cultural Revolution At Tsinghua University / *William Hinton* ...
2. **The Cultural Revolution at Peking University** / *Victor Nee* with *Don Layman* 30.00
3. **Mao Tse-tung's Last Great Battle** / *Raymond Lotta* 25.00
4. **Turning Point in China** / *William Hinton* ...
5. **Cultural Revolution and Industrial Organization in China** / *Charles Bettelheim* 55.00
6. **They Made Revolution Within the Revolution** / *Iris Hunter* ...

## ON SOCIALIST CONSTRUCTION

1. **Away With All Pests:** An English Surgeon in People's China: 1954–1969 / *Joshua S. Horn* ...
2. **Serve The People:** Observations on Medicine in the People's Republic of China /*Victor W. Sidel* and *Ruth Sidel* ...
3. **Philosophy is No Mystery** (Peasants Put Their Study to Work) 35.00

## CONTEMPORARY ISSUES

1. **Caste and Class: A Marxist Viewpoint /** Ranganayakamma 60.00

## DAYITVABODH REPRINT SERIES

1. **Immortal are the Flames of Proletarian Struggles /** *Deepayan Bose* 15.00

2. **Problems of Socialism, Capitalist Restoration and the Great Proletarian Cultural Revolution** / *Shashi Prakash* 40.00
3. **Why Maoism?** / *Shashi Prakash* 25.00

## AHWAN REPRINT SERIES

1. **Where Should Students and Youth Make a New Beginning?**
2. **Reservation: Support, Opposition and Our Position** 20.00
3. **On Terrorism : Illusion and Reality** / *Alok Ranjan* 15.00

## BIGUL REPRINT SERIES

1. **Still Ablaze is the Torch of October Revolution** 20.00
2. **Nepalese Revolution History, Present Situation and Some Points, Some Thoughts on the Road Ahead** / Alok Ranjan 75.00

## WOMEN QUESTION

1. **The Emancipation of Women** / *V. I. Lenin* ...
2. **Breaking All Tradition's Chains: Revolutionary Communism and Women's Liberation** /*Mary Lou Greenberg*...

## MISCELLANEOUS

1. **Probabilities of the Quantum World** / *Daniel Danin* ...
2. **An Appeal to the Young** / *Peter Kropotkin* 15.00

# अरविन्द स्मृति न्यास के प्रकाशन

1. **इक्कीसवीं सदी में भारत का मज़दूर आन्दोलनः निरन्तरता और परिवर्तन, दिशा और सम्भावनाएँ, समस्याएँ और चुनौतियाँ**
   (द्वितीय अरविन्द स्मृति संगोष्ठी के आलेख) 40.00
2. **भारत में जनवादी अधिकार आन्दोलनः दिशा, समस्याएँ और चुनौतियाँ**
   (तृतीय अरविन्द स्मृति संगोष्ठी के आलेख) 80.00
3. **जाति प्रश्न और मार्क्सवाद**
   (चतुर्थ अरविन्द स्मृति संगोष्ठी के आलेख) 150.00

## PUBLICATIONS FROM ARVIND MEMORIAL TRUST

1. **Working Class Movement in the Twenty-First Century: Continuity and Change, Orientation and Possibilities, Problems and Challenges** (Papers presented in the Second Arvind Memorial Seminar) 40.00
2. **Democratic Rights Movement in India: Orientation, Problems and Challenges** (Papers presented in the Third Arvind Memorial Seminar) 80.00
3. **Caste Question and Marxism** (Papers presented in the Fourth Arvind Memorial Seminar) 200.00

---

## जनचेतना

*एक वैचारिक मुहिम है*
*भविष्य-निर्माण का एक प्रोजेक्ट है*
*वैकल्पिक मीडिया की एक सशक्त धारा है।*

**परिकल्पना प्रकाशन, राहुल फ़ाउण्डेशन, अनुराग ट्रस्ट, अरविन्द स्मृति न्यास, शहीद भगतसिंह यादगारी प्रकाशन, दस्तक प्रकाशन और प्रांजल आर्ट पब्लिशर्स की पुस्तकों की 'जनचेतना' मुख्य वितरक है। ये प्रकाशन पाँच स्त्रोतों - सरकार, राजनीतिक पार्टियों, कॉरपोरेट घरानों, बहुराष्ट्रीय निगमों और विदेशी फ़ण्डिंग एजेंसियों से किसी भी प्रकार का अनुदान या वित्तीय सहायता लिये बिना जनता से जुटाये गये संसाधनों के आधार पर आज के दौर के लिए ज़रूरी व महत्त्वपूर्ण साहित्य बेहद सस्ती दरों पर उपलब्ध कराने के लिए प्रतिबद्ध हैं।**

# अनुराग ट्रस्ट

| | | |
|---|---|---|
| 1. | **बच्चों के लेनिन** | 35.00 |
| 2 | **Stories About Lenin** | 35.00 |
| 3. | **सच से बड़ा सच**/रवीन्द्रनाथ ठाकुर | 25.00 |
| 4. | **औज़ारों की कहानियाँ** | 20.00 |
| 5. | **गुड़ की डली**/कात्यायनी | 20.00 |
| 6. | **फूल कुंडलाकार क्यों होते हैं**/सनी | 20.00 |
| 7. | **धरती और आकाश**/अ. वोल्कोव | 120.00 |
| 8. | **कजाकी**/प्रेमचन्द | 35.00 |
| 9. | **नीला प्याला**/अरकादी गैदार | 40.00 |
| 10. | **गड़रिये की कहानियाँ**/क़यूम तंगरीकुलीयेव | 35.00 |
| 11. | **चींटी और अन्तरिक्ष यात्री**/अ. मित्यायेव | 35.00 |
| 12. | **अन्धविश्वासी शेकी टेल**/सेर्गेई मिखाल्कोव | 20.00 |
| 13. | **चलता-फिरता हैट**/एन. नोसोव, होल्कर पुक्क | 20.00 |
| 14. | **चालाक लोमड़ी** (लोककथा) | 20.00 |
| 15. | **दियांका-टॉमचिक** | 20.00 |
| 16. | **गधा और ऊदबिलाव**/मक्सिम गोर्की, सेर्गेई मिखाल्कोव | 20.00 |
| 17. | **गुफा मानवों की कहानियाँ**/मैरी मार्स | ... |
| 18. | **हम सूरज को देख सकते हैं**/मिकोला गिल, दायर स्लावकोविच | 20.00 |
| 19. | **मुसीबत का साथी**/सेर्गेई मिखाल्कोव | 20.00 |
| 20. | **नन्हे आर्थर का सूरज**/हद्याक ग्युलनज़रयान, गेलीना लेबेदेवा | 20.00 |
| 22. | **आकाश में मौज-मस्ती**/चिनुआ अचेबे | 20.00 |
| 23. | **ज़िन्दगी से प्यार** (दो रोमांचक कहानियाँ)/जैक लण्डन | 40.00 |
| 24. | **एक छोटे लड़के और एक छोटी लड़की की कहानी**/मक्सिम गोर्की | 20.00 |
| 25. | **बहादुर**/अमरकान्त | 15.00 |
| 26. | **बुन्नू की परीक्षा** (सचित्र रंगीन)/शस्या हर्ष | ... |

27. **दान्को का जलता हुआ हृदय**/मक्सिम गोर्की 15.00
28. **नन्हा राजकुमार**/आतुआन द सैंतेक्ज़ूपेरी 40.00
29. **दादा आर्खिप और ल्योंका**/मक्सिम गोर्की 30.00
30. **सेमागा कैसे पकड़ा गया**/मक्सिम गोर्की 15.00
31. **बाज़ का गीत**/मक्सिम गोर्की 15.00
32. **वांका**/अन्तोन चेख़व 15.00
33. **तोता**/रवीन्द्रनाथ टैगोर 15.00
34. **पोस्टमास्टर**/रवीन्द्रनाथ टैगोर ...
35. **काबुलीवाला**/रवीन्द्रनाथ टैगोर 20.00
36. **अपना-अपना भाग्य**/जैनेन्द्र 15.00
37. **दिमाग़ कैसे काम करता है**/किशोर 25.00
38. **रामलीला**/प्रेमचन्द 15.00
39. **दो बैलों की कथा**/प्रेमचन्द 25.00
40. **ईदगाह**/प्रेमचन्द ...
41. **लॉटरी**/प्रेमचन्द 20.00
42. **गुल्ली-डण्डा**/प्रेमचन्द ...
43. **बड़े भाई साहब**/प्रेमचन्द 20.00
44. **मोटेराम शास्त्री**/प्रेमचन्द ...
45. **हार की जीत**/सुदर्शन ...
46. **इवान**/व्लादीमिर बोगोमोलोव 40.00
47. **चमकता लाल सितारा**/ली शिन-थ्येन 55.00
48. **उल्टा दरख़्त**/कृश्नचन्दर 35.00
49. **हरामी**/मिखाईल शोलोख़ोव 25.00
50. **दोन किहोते** /सर्वान्तेस (नाट्य रूपान्तर - नीलेश रघुवंशी) ...
51. **आश्चर्यलोक में एलिस** /लुइस कैरोल
(नाट्य रूपान्तर - नीलेश रघुवंशी) 30.00
52. **झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई**/वृन्दावनलाल वर्मा
(नाट्य रूपान्तर - नीलेश रघुवंशी) 35.00
53. **नन्हे गुदड़ीलाल के साहसिक कारनामे**/सुन यओच्युन ...
54. **लाखी**/अन्तोन चेख़व 25.00
55. **बेझिन चरागाह**/इवान तुर्गनेव 12.00

| | |
|---|---|
| 56. **हिरनौटा**/द्मीत्री मामिन सिबिर्याक | 25.00 |
| 57. **घर की ललक**/निकोलाई तेलेशोव | 10.00 |
| 58. **बस एक याद**/लेओनीद अन्द्रेयेव | 20.00 |
| 59. **मदारी**/अलेक्सान्द्र कुप्रिन | 35.00 |
| 60. **पराये घोंसले में**/फ़्योदोर दोस्तोयेव्स्की | 20.00 |
| 61. **कोहकाफ़ का बन्दी**/तोल्सतोय | 30.00 |
| 62. **मनमानी के मज़े**/सेर्गेई मिखाल्कोव | 30.00 |
| 63. **सदानन्द की छोटी दुनिया**/सत्यजीत राय | 15.00 |
| 64. **छत पर फँस गया बिल्ला**/विताउते जिलिन्सकाइते | 35.00 |
| 65. **गोलू के कारनामे**/रामबाबू | 25.00 |
| 66. **दो साहसिक कहानियाँ**/होल्गर पुक्क | 15.00 |
| 67. **आम ज़िन्दगी की मज़ेदार कहानियाँ**/होल्गर पुक्क | 20.00 |
| 68. **कंगूरे वाले मकान का रहस्यमय मामला**/होल्गर पुक्क | 20.00 |
| 69. **रोज़मर्रे की कहानियाँ**/होल्गर पुक्क | 20.00 |
| 70. **अजीबोग़रीब क़िस्से**/होल्गर पुक्क | ... |
| 71. **नये ज़माने की परीकथाएँ**/होल्गर पुक्क | 25.00 |
| 72. **किस्सा यह कि एक देहाती ने दो अफ़सरों का कैसे पेट भरा**/मिखाइल सल्तिकोव-श्चेद्रिन | 15.00 |
| 73. **पश्चदृष्टि-भविष्यदृष्टि** (लेख संकलन)/ कमला पाण्डेय | 30.00 |
| 74. **यादों के घेरे में अतीत** (संस्मरण)/ कमला पाण्डेय | 100.00 |
| 75. **हमारे आसपास का अँधेरा** (कहानियाँ)/ कमला पाण्डेय | 60.00 |
| 76. **कालमन्थन** (उपन्यास)/ कमला पाण्डेय | 60.00 |

# ਪੰਜਾਬੀ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ

## ਦਸਤਕ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ

ਮੈਕਸਿਮ ਗੋਰਕੀ ਦਾ ਸਵੈ-ਜੀਵਨੀ ਨਾਵਲ (ਤਿੰਨ ਭਾਗਾਂ ਵਿੱਚ)

| | |
|---|---|
| 1. ਮੇਰਾ ਬਚਪਨ | 130.00 |
| 2. ਮੇਰੇ ਵਿਸ਼ਵ-ਵਿਦਿਆਲੇ | 100.00 |
| 3. ਮੇਰੇ ਸ਼ਗਿਰਦੀ ਦੇ ਦਿਨ | 200.00 |

| | |
|---|---|
| 4. ਪ੍ਰੇਮ, ਪ੍ਰੰਪਰਾ ਅਤੇ ਵਿਦਰੋਹ / ਕਾਤਿਆਈਨੀ | 20.00 |
| 5. ਥੀਏਟਰ ਦਾ ਸੰਖੇਪ ਤਰਕਸ਼ਾਸਤਰ / ਬ੍ਰੈਖ਼ਤ | 15.00 |
| 6. ਆਈਜੇਂਸਤਾਈਨ ਦਾ ਫਿਲਮ ਸਿਧਾਂਤ | 15.00 |
| 7. ਮਜ਼ਦੂਰ ਜਮਾਤੀ ਸੰਗੀਤ ਰਚਨਾਵਾਂ ਦੀਆਂ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ | 10.00 |
| 8. ਪਹਿਲਾ ਅਧਿਆਪਕ / ਚੰਗੇਜ਼ ਆਇਤਮਾਤੋਵ (ਨਾਵਲ) | 25.00 |
| 9. ਸ਼ਾਂਤ ਸਰਘੀ ਵੇਲਾ / ਬੋਰਿਸ ਵਾਸੀਲਿਯੇਵ (ਨਾਵਲ) | 30.00 |
| 10. ਭਾਂਜ / ਅਲੈਗਜ਼ਾਂਦਰ ਫ਼ਦੇਯੇਵ (ਨਾਵਲ) | 100.00 |
| 11. ਫੌਲਾਦੀ ਹੜ / ਅਲੈਗਜ਼ਾਂਦਰ ਸਰਾਫ਼ੀਮੋਵਿਚ (ਨਾਵਲ) | 100.00 |
| 12. ਇਕਤਾਲ਼ੀਵਾਂ / ਬੋਰਿਸ ਲਵਰੇਨਿਓਵ (ਨਾਵਲ) | 30.00 |
| 13. ਮਾਂ / ਮੈਕਸਿਮ ਗੋਰਕੀ (ਨਾਵਲ) | 180.00 |
| 14. ਪੀਲ਼ੇ ਦੈਂਤ ਦਾ ਸ਼ਹਿਰ / ਮੈਕਸਿਮ ਗੋਰਕੀ | 80.00 |
| 15. ਸਾਹਿਤ ਬਾਰੇ / ਮੈਕਸਿਮ ਗੋਰਕੀ | 200.00 |
| 16. ਅਸਲੀ ਇਨਸਾਨ ਦੀ ਕਹਾਣੀ / ਬੋਰਿਸ ਪੋਲੇਵਾਈ (ਨਾਵਲ) | 200.00 |
| 17. ਅੱਠੇ ਪਹਿਰ (ਕਹਾਣੀਆਂ) | 125.00 |
| 18. ਬਘਿਆੜਾਂ ਦੇ ਵੱਸ / ਬਰੁਨੋ ਅਪਿਤਜ (ਨਾਵਲ) | 100.00 |
| 19. ਮੀਤ੍ਰਿਆ ਕੋਕੋਰ / ਮੀਹਾਇਲ ਸਾਦੋਵਿਆਨੋ (ਨਾਵਲ) | 100.00 |
| 20. ਇਨਕਲਾਬ ਲਈ ਜੂਝੀ ਜਵਾਨੀ | 150.00 |
| 21. ਬੱਚਿਆਂ ਨੂੰ ਦਿਆਂ ਦਿਲ ਆਪਣਾ ਮੈਂ / ਵ. ਸੁਖੋਮਲਿੰਸਕੀ | 150.00 |
| 22. ਫਾਸੀ ਦੇ ਤਖ਼ਤੇ ਤੋਂ / ਜੂਲੀਅਸ ਫੂਚਿਕ (ਨਾਵਲ) | 50.00 |
| 23. ਭੁੱਬਲ / ਫ਼ਰੰਜ਼ਦ ਅਲੀ (ਪਾਕਿਸਤਾਨੀ ਪੰਜਾਬ ਦਾ ਨਾਵਲ) | 200.00 |
| 24. ਸਭ ਤੋਂ ਖਤਰਨਾਕ... (ਪਾਸ਼ ਦੀ ਸਮੁੱਚੀ ਉਪਲੱਬਧ ਸ਼ਾਇਰੀ) | 200.00 |
| 25. ਧਰਤੀ ਧਨ ਨਾ ਆਪਣਾ / ਜਗਦੀਸ਼ ਚੰਦਰ | 250.00 |

# ਸ਼ਹੀਦ ਭਗਤ ਸਿੰਘ ਯਾਦਗਾਰੀ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ

1. ਉਜਰਤ, ਕੀਮਤ ਅਤੇ ਮੁਨਾਫਾ / ਮਾਰਕਸ 30.00
2. ਉਜਰਤੀ ਕਿਰਤ ਅਤੇ ਸਰਮਾਇਆ / ਮਾਰਕਸ 20.00
3. ਸਿਆਸੀ ਆਰਥਿਕਤਾ ਦੀ ਅਲੋਚਨਾ ਵਿੱਚ ਯੋਗਦਾਨ / ਮਾਰਕਸ 125.00
4. ਲੂਈ ਬੋਨਾਪਾਰਟ ਦੀ ਅਠਾਰਵੀਂ ਬਰੂਮੇਰ / ਮਾਰਕਸ 50.00
5. ਪੂੰਜੀ ਦੀ ਉਤਪਤੀ / ਮਾਰਕਸ 45.00
6. ਰਿਹਾਇਸ਼ੀ ਘਰਾਂ ਦਾ ਸਵਾਲ / ਏਂਗਲਜ਼ 35.00
7. ਫਿਊਰਬਾਖ : ਪਾਦਰਥਵਾਦੀ ਅਤੇ ਆਦਰਸ਼ਵਾਦੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣਾਂ ਦਾ ਵਿਰੋਧ / ਮਾਰਕਸ-ਏਂਗਲਜ਼ 60.00
8. ਜਰਮਨੀ ਵਿੱਚ ਇਨਕਲਾਬ ਅਤੇ ਉਲਟ ਇਨਕਲਾਬ / ਏਂਗਲਜ਼ 50.00
9. ਮਾਰਕਸ ਦੇ "ਸਰਮਾਇਆ" ਬਾਰੇ / ਏਂਗਲਜ਼ 60.00
10. ਫਰਾਂਸ ਅਤੇ ਜਰਮਨੀ 'ਚ ਕਿਸਾਨੀ ਦਾ ਸਵਾਲ / ਏਂਗਲਜ਼ 20.00
11. ਸੋਸ਼ਲਿਜ਼ਮ : ਵਿਗਿਆਨਕ ਅਤੇ ਯੂਟੋਪੀਆਈ / ਏਂਗਲਜ਼ 35.00
12. ਕਾਰਲ ਮਾਰਕਸ ਬਾਰੇ / ਏਂਗਲਜ਼ 10.00
13. ਲੁਡਵਿਗ ਫਿਉਰਬਾਖ ਅਤੇ ਕਲਾਸੀਕੀ ਜਰਮਨ ਦਰਸ਼ਨ ਦਾ ਅੰਤ / ਏਂਗਲਜ਼ 30.00
14. ਟੱਬਰ, ਨਿੱਜੀ ਜਾਇਦਾਦ ਅਤੇ ਰਾਜ ਦੀ ਉੱਤਪਤੀ / ਏਂਗਲਜ਼ 65.00
15. ਕਾਰਲ ਮਾਰਕਸ ਅਤੇ ਉਨਾਂ ਦੀ ਸਿੱਖਿਆ / ਲੈਨਿਨ 35.00
16. ਰਾਜ ਅਤੇ ਇਨਕਲਾਬ / ਲੈਨਿਨ 50.00
17. ਦੂਜੀ ਇੰਟਰਨੈਸ਼ਨਲ ਦਾ ਪਤਣ / ਲੈਨਿਨ 45.00
18. ਖੇਤੀ ਵਿੱਚ ਪੂੰਜੀਵਾਦ / ਲੈਨਿਨ 15.00
19. ਰਾਜ / ਲੈਨਿਨ 10.00
20. ਸਾਮਰਾਜਵਾਦ, ਸਰਮਾਏਦਾਰੀ ਦਾ ਸਰਵਉੱਚ ਪੜਾਅ / ਲੈਨਿਨ 70.00
21. ਇੱਕ ਕਦਮ ਅੱਗੇ ਦੋ ਕਦਮ ਪਿੱਛੇ / ਲੈਨਿਨ 125.00
22. ਲੋਕਾਂ ਵਿੱਚ ਕੰਮ ਕਿਵੇਂ ਕਰੀਏ / ਲੈਨਿਨ 65.00
23. ਸਾਹਿਤ ਅਤੇ ਕਲਾ ਬਾਰੇ / ਲੈਨਿਨ 150.00
24. ਸਮਾਜਵਾਦ ਅਤੇ ਜੰਗ / ਲੈਨਿਨ 45.00
25. ਖੱਬੇ ਪੱਖੀ ਕਮਿਊਨਿਜ਼ਮ ਇੱਕ ਬਚਗਾਨਾ ਰੋਗ / ਲੈਨਿਨ 65.00
26. ਅਸੀਂ ਜਿਹੜਾ ਵਿਰਸਾ ਤਿਆਗਦੇ ਹਾਂ / ਲੈਨਿਨ 25.00
27. ਪ੍ਰੋਲੇਤਾਰੀ ਇਨਕਲਾਬ ਅਤੇ ਭਗੌੜਾ ਕਾਊਤਸਕੀ / ਲੈਨਿਨ 70.00
28. ਆਰਥਕ ਰੋਮਾਂਚਵਾਦ ਦਾ ਚਰਿੱਤਰ ਚਿੱਤਰਣ / ਲੈਨਿਨ 50.00

29. ਸੁਤੰਤਰ ਵਪਾਰ ਦਾ ਸਵਾਲ / ਮਾਰਕਸ, ਏਂਗਲਜ਼, ਲੈਨਿਨ 10.00
30. ਲੈਨਿਨਵਾਦ ਦੀਆਂ ਨੀਹਾਂ / ਸਟਾਲਿਨ 20.00
31. ਫ਼ਲਸਫਾਨਾ ਲਿਖਤਾਂ / ਮਾਓ-ਜ਼ੇ-ਤੁੰਗ 25.00
32. ਸੋਵੀਅਤ ਅਰਥਸ਼ਾਸਤਰ ਦੀ ਅਲੋਚਨਾ / ਮਾਓ-ਜ਼ੇ-ਤੁੰਗ 60.00
33. ਮਾਰਕਸਵਾਦ ਦੇ ਬੁਨਿਆਦੀ ਮਸਲੇ / ਪਲੈਖਾਨੋਵ 40.00
34. ਰਾਜਨੀਤਕ ਅਰਥਸ਼ਾਸਤਰ ਦੇ ਮੂਲ ਸਿਧਾਂਤ 60.00
35. ਫਿਲਾਸਫੀ ਕੋਈ ਗੋਰਖਧੰਦਾ ਨਹੀਂ 10.00
36. ਦਵੰਦਵਾਦ ਜ਼ਰੀਏ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਸੇਵਾ 10.00
37. ਇਤਿਹਾਸ ਨੇ ਜਦ ਕਰਵਟ ਬਦਲੀ 40.00
38. ਇਨਕਲਾਬ ਅੰਦਰ ਇਨਕਲਾਬ 20.00
39. ਮਾਓ-ਜ਼ੇ-ਤੁੰਗ ਦੀ ਅਮਿੱਟ ਦੇਣ 125.00
40. ਚੀਨ ਵਿੱਚ ਉਲਟ ਇਨਕਲਾਬ
ਅਤੇ ਮਾਓ ਦਾ ਇਨਕਲਾਬੀ ਵਿਰਸਾ 60.00
41. ਮਾਓਵਾਦੀ ਅਰਥਸ਼ਾਸਤਰ ਅਤੇ ਸਮਾਜਵਾਦ ਦਾ ਭਵਿੱਖ 60.00
42. ਲੈਨਿਨ ਦੀ ਜੀਵਨ ਕਹਾਣੀ 100.00
43. ਅਡੋਲ ਬਾਲਸ਼ਵਿਕ ਨਤਾਸ਼ਾ 30.00
44. ਮਾਰਕਸ ਅਤੇ ਏਂਗਲਜ਼
ਆਪਣੇ ਸਮਕਾਲੀਆਂ ਦੀਆਂ ਨਜ਼ਰਾਂ ਵਿੱਚ 75.00
45. ਪੈਰਿਸ ਕਮਿਊਨ ਦੀ ਅਮਰ ਕਹਾਣੀ 10.00
46. ਬੁਝ ਨਹੀਂ ਸਕਦੀ ਅਕਤੂਬਰ ਇਨਕਲਾਬ ਦੀ ਮਸ਼ਾਲ 10.00
47. ਦਹਿਸ਼ਤਗਰਦੀ ਬਾਰੇ ਭਰਮ ਅਤੇ ਯਥਾਰਥ 10.00
48. ਪੰਜਾਬ ਦਾ ਕਿਸਾਨ ਅੰਦੋਲਨ ਅਤੇ ਕਮਿਊਨਿਸਟ ਲਹਿਰ 10.00
49. ਜੰਗਲਨਾਮਾ : ਇੱਕ ਰਾਜਨੀਤਕ ਪੜਚੋਲ 10.00
50. ਭਾਰਤੀ ਖੇਤੀ ਵਿੱਚ ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ ਵਿਕਾਸ 20.00
51. ਅਮਿੱਟ ਹਨ ਮਜ਼ਦੂਰ ਸੰਗਰਾਮਾਂ ਦੀਆਂ ਚਿਣਗਾਂ 10.00
52. ਸਮਾਜਵਾਦ ਦੀਆਂ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ, ਪੂੰਜੀਵਾਦ ਦੀ ਮੁੜ ਬਹਾਲੀ
ਅਤੇ ਮਹਾਨ ਪ੍ਰੋਲੇਤਾਰੀ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਇਨਕਲਾਬ 20.00
53. ਕਿਉਂ ਮਾਓਵਾਦ ? 10.00
54. ਸੋਵੀਅਤ ਯੂਨੀਅਨ ਦੇ ਇਤਿਹਾਸ ਬਾਰੇ ਪ੍ਰਚਾਰੇ ਜਾਂਦੇ ਝੂਠ 10.00
55. ਰਿਜ਼ਰਵੇਸ਼ਨ : ਪੱਖ, ਵਿਪੱਖ ਅਤੇ ਤੀਸਰਾ ਪੱਖ 5.00
56. ਮਾਰਕਸਵਾਦ ਅਤੇ ਜਾਤ ਦਾ ਸਵਾਲ / ਸੁਖਵਿੰਦਰ 20.00

57. ਮਾਰਕਸਵਾਦ ਬਾਰੇ ਅੰਬੇਡਕਰ ਦੇ ਵਿਚਾਰ / ਰੰਗਾਨਾਇਕੰਮਾ 15.00
58. ਡਾ. ਅੰਬੇਡਕਰ ਅਤੇ ਭਾਰਤ ਦਾ ਸੰਵਿਧਾਨ / ਰੰਗਾਨਾਇਕੰਮਾ 15.00
59. ਡਾ. ਅੰਬੇਡਕਰ : ਜੀਵਨ ਅਤੇ ਵਿਚਾਰ / ਰੰਗਾਨਾਇਕੰਮਾ 10.00
60. ਭਾਰਤ ਦੇ ਇਤਿਹਾਸ ਵਿੱਚ ਜਾਤ-ਪਾਤ / ਪ੍ਰੋ. ਇਰਫ਼ਾਨ ਹਬੀਬ 10.00
61. ਉਦਾਰਵਾਦੀ ਨੀਤੀਆਂ ਦੇ 18 ਸਾਲ 5.00
62. ਚੋਰ, ਭ੍ਰਿਸ਼ਟ ਅਤੇ ਅਯਾਸ਼ ਨੇਤਾਸ਼ਾਹੀ 5.00
63. ਪਾਪ ਅਤੇ ਵਿਗਿਆਨ / ਡਾਈਸਨ ਕਾਰਟਰ 60.00
64. ਫਾਸੀਵਾਦ ਕੀ ਹੈ ਅਤੇ ਇਸ ਨਾਲ਼ ਕਿਵੇਂ ਲੜੀਏ ? 15.00
65. ਆਈਨਸਟੀਨ ਦੇ ਸਮਾਜਿਕ ਸਰੋਕਾਰ 10.00
66. ਨੌਜਵਾਨਾਂ ਨਾਲ਼ ਦੋ ਗੱਲਾਂ / ਪੀਟਰ ਕ੍ਰੋਪੋਟਕਿਨ 10.00
67. ਇਨਕਲਾਬ ਦਾ ਸੁਨੇਹਾ
(ਭਗਤ ਸਿੰਘ ਅਤੇ ਸਾਥੀਆਂ ਦੀਆਂ ਲਿਖਤਾਂ) 30.00
68. ਅਜਿਹਾ ਸੀ ਸਾਡਾ ਭਗਤ ਸਿੰਘ / ਸ਼ਿਵ ਵਰਮਾ 10.00
69. ਮੈਂ ਨਾਸਤਿਕ ਕਿਉਂ ਹਾਂ ? / ਭਗਤ ਸਿੰਘ 10.00
70. ਭਗਤ ਸਿੰਘ ਨੇ ਕਿਹਾ... / ਭਗਤ ਸਿੰਘ 5.00
71. ਭਗਤ ਸਿੰਘ ਤੇ ਉਸਦੇ ਸਾਥੀਆਂ
ਦਾ ਵਿਚਾਰਧਾਰਕ ਵਿਕਾਸ / ਪ੍ਰੋ. ਬਿਪਨ ਚੰਦਰਾ 10.00
72. ਇਨਕਲਾਬੀ ਲਹਿਰ ਦਾ ਸਿਧਾਂਤਕ ਵਿਕਾਸ / ਸ਼ਿਵ ਵਰਮਾ 10.00
73. ਸ਼ਹੀਦ ਚੰਦਰ ਸ਼ੇਖਰ ਆਜ਼ਾਦ / ਭਗਵਾਨ ਦਾਸ ਮਹੌਰ 10.00
74. ਗਦਰੀ ਸੂਰਬੀਰ / ਪ੍ਰੋ. ਰਣਧੀਰ ਸਿੰਘ 10.00
75. ਸ਼ਹੀਦ ਸੁਖਦੇਵ 20.00
76. ਸ਼ਹੀਦ ਕਰਤਾਰ ਸਿੰਘ ਸਰਾਭਾ 5.00
77. ਵਿਦਿਆਰਥੀ ਨੌਜਵਾਨ ਨਵੀਂ ਸ਼ੁਰੂਆਤ ਕਿੱਥੋਂ ਕਰਨ ? 10.00
78. ਸੋਧਵਾਦ ਬਾਰੇ 5.00
79. ਭਾਰਤ ਵਿੱਚ ਗਿਆਨ ਪ੍ਰਸਾਰ ਦੀ ਲੋੜ ਕਿਉਂ ? / ਸੁਖਵਿੰਦਰ 15.00
80. ਵਧਦੀ ਅਬਾਦੀ 15.00
81. ਯੁੱਗ ਕਿਵੇਂ ਬਦਲਦੇ ਹਨ ? / ਡਾ. ਅੰਮ੍ਰਿਤ 10.00
82. ਧਰਮ ਬਾਰੇ / ਲੈਨਿਨ 30.00
83. ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਵਿੱਚ ਮਾਤ-ਭਾਸ਼ਾ ਦਾ ਮਹੱਤਵ 20.00
84. ਇੱਕ ਪ੍ਰਤਿਭਾ ਦਾ ਜਨਮ / ਗੈਨਰਿਖ ਵੋਲਕੋਵ 100.00
85. ਭਾਰਤ ਵਿੱਚ ਨਵਉਦਾਰਵਾਦ ਦੇ ਦੋ ਦਹਾਕੇ / ਸੁਖਵਿੰਦਰ 20.00

| | |
|---|---|
| 86. ਕਾਰਲ ਮਾਰਕਸ ਦਾ ਕਲਾ ਦਰਸ਼ਨ | 200.00 |
| 87. ਸਤਾਲਿਨ - ਇੱਕ ਜੀਵਨੀ / ਰਾਹੁਲ ਸਾਂਕਰਤਾਇਨ | 150.00 |
| 88. ਪੋਰਨੋਗ੍ਰਾਫੀ : ਇਕ ਸਰਮਾਏਦਾਰਾ ਕੋਹੜ / ਅਜੇ ਪਾਲ | 10.00 |
| 89. ਔਰਤਾਂ ਦੀ ਗੁਲਾਮੀ ਦਾ ਆਰਥਿਕ ਅਧਾਰ / ਸੀਤਾ | 10.00 |

# ਅਨੁਰਾਗ ਟਰੱਸਟ (ਬੱਚਿਆਂ ਲਈ)

| | |
|---|---|
| 1. ਇਵਾਨ / ਵਲਾਦੀਮੀ ਬਗਾਮਲੋਵ | 35.00 |
| 2. ਵਾਂਕਾ / ਅਨਤੋਨ ਚੈਖੋਵ | 10.00 |
| 3. ਕਿਸਮਤ ਆਪੋ-ਆਪਣੀ / ਜੈਨੇਂਦਰ | 20.00 |
| 4. ਕੋਹੇਕਾਫ਼ ਦਾ ਕੈਦੀ / ਤਾਲਸਤਾਏ | 30.00 |
| 5. ਛੱਤ 'ਤੇ ਫਸ ਗਿਆ ਬਿੱਲਾ ਅਤੇ ਹੋਰ ਕਹਾਣੀਆਂ | 20.00 |
| 6. ਅਜੀਬੋ-ਗਰੀਬ ਕਿੱਸੇ / ਹੋਲਗਰ ਪੁੱਕ | 20.00 |
| 7. ਦੋ ਹਿੰਮਤੀ ਕਹਾਣੀਆਂ / ਹੋਲਗਰ ਪੁੱਕ | 15.00 |
| 8. ਨਵੇਂ ਜ਼ਮਾਨੇ ਦੀਆਂ ਪਰੀ-ਕਥਾਵਾਂ / ਹੋਲਗਰ ਪੁੱਕ | 20.00 |
| 9. ਅਸੀਂ ਸੂਰਜ ਨੂੰ ਵੇਖ ਸਕਦੇ ਹਾਂ / ਮਿਕੋਲ ਗਿੱਲ | 10.00 |
| 10. ਗੁਫਾ ਮਾਨਵਾਂ ਦੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ / ਮੈਰੀ ਮਾਰਸ | 20.00 |
| 11. ਕਿੱਸਾ ਇਹ ਕਿ ਇੱਕ ਪੇਂਡੂ ਨੇ ਦੋ ਅਫ਼ਸਰ ਸ਼ਹਿਰੀ ਅਫਸਰਾਂ ਦਾ ਢਿੱਡ ਕਿਵੇਂ ਭਰਿਆ / ਮਿਖਾਈਲ ਸ਼ਚੇਦ੍ਰਿਨ | 15.00 |
| 12. ਸਦਾਨੰਦ ਦੀ ਛੋਟੀ ਦੁਨੀਆਂ / ਸੱਤਿਆਜੀਤ ਰਾਏ | 10.00 |
| 13. ਬਾਜ਼ ਦਾ ਗੀਤ / ਮੈਕਸਿਮ ਗੋਰਕੀ | 10.00 |
| 14. ਬੱਸ ਇੱਕ ਯਾਦ / ਲਿਓਨਿਦ ਆਂਦਰੇਯੇਵ | 10.00 |
| 15. ਦਾਦਾ ਅਰਖ਼ੀਪ ਅਤੇ ਲਿਓਨਕਾ / ਗੋਰਕੀ | 20.00 |
| 16. ਦਾਨਕੋ ਦਾ ਬਲ਼ਦਾ ਹੋਇਆ ਦਿਲ / ਗੋਰਕੀ | 10.00 |
| 17. ਘਰ ਦੀ ਲਲਕ / ਨਿਕੋਲਾਈ ਤੇਲੇਸ਼ੋਵ | 20.00 |
| 18. ਗੁੱਲੀ-ਡੰਡਾ / ਪ੍ਰੇਮਚੰਦ | 10.00 |
| 19. ਹਾਰ ਦੀ ਜਿੱਤ / ਸ਼ੁਦਰਸ਼ਨ | 10.00 |
| 20. ਹਰਾਮੀ / ਮਿਖ਼ਾਇਲ ਸ਼ੋਲੋਖ਼ੋਵ | 20.00 |
| 21. ਕਾਬੁਲੀਵਾਲ਼ਾ / ਰਵਿੰਦਰਨਾਥ ਟੈਗੋਰ | 10.00 |
| 22. ਮੁਸੀਬਤ ਦਾ ਸਾਥੀ / ਸੇਰੇਗਈ ਮਿਖਾਲਕੋਵ | 10.00 |
| 23. ਪੋਸਟਮਾਸਟਰ / ਰਵਿੰਦਰਨਾਥ ਟੈਗੋਰ | 10.00 |

| | |
|---|---|
| 24. ਰਾਮਲੀਲਾ / ਪ੍ਰੇਮਚੰਦ | 10.00 |
| 25. ਸੋਮਾਗਾ ਕਿਵੇਂ ਫੜਿਆ ਗਿਆ / ਗੋਰਕੀ | 10.00 |
| 26. ਤੁਰਦਾ-ਫਿਰਦਾ ਟੋਪ / ਐੱਨ. ਨੋਸੋਵ | 10.00 |
| 27. ਬੇਜਿਨ ਚਰਾਗਾਹ / ਇਵਾਨ ਤੁਰਗੇਨੇਵ | 20.00 |
| 28. ਉਲਟਾ ਰੁੱਖ / ਕ੍ਰਿਸ਼ਨਚੰਦਰ | 35.00 |
| 29. ਵੱਡੇ ਭਾਈ ਸਾਹਬ / ਪ੍ਰੇਮਚੰਦ | 10.00 |
| 30. ਇੱਕ ਛੋਟੇ ਮੁੰਡੇ ਅਤੇ ਕੁੜੀ ਦੀ ਕਹਾਣੀ ਜਿਹੜੇ ਬਰਫ਼ੀਲੀ ਠੰਡ 'ਚ ਕਾਂਬੇ ਨਾਲ਼ ਮਰੇ ਨਹੀਂ / ਮੈਕਸਿਮ ਗੋਰਕੀ | 10.00 |
| 31. ਬਹਾਦਰ / ਅਮਰਕਾਂਤ | 10.00 |
| 32. ਹਿਰਨੋਟਾ / ਦਮਿਤਰੀ ਮਾਮਿਨ ਸਿਬਿਰੇਆਕ | 10.00 |

——::——

# हमारे पास आपको मिलेंगे

- विश्व क्लासिक्स
- स्तरीय प्रगतिशील साहित्य
- भगतसिंह और उनके साथियों का सम्पूर्ण उपलब्ध साहित्य
- मक्सिम गोर्की की पुस्तकों का सबसे बड़ा संग्रह
- भारतीय इतिहास के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण क्रान्तिकारी दस्तावेज़
- मार्क्सवादी साहित्य
- जीवन और समाज की समझ तथा विचारोत्तेजना देने वाला साहित्य
- प्रगतिशील क्रान्तिकारी पत्र-पत्रिकाएँ
- दिमाग़ की खिड़कियाँ खोलने और कल्पना की उड़ानों को पंख देने वाला बाल-साहित्य
- सुन्दर, सुरुचिपूर्ण, प्रेरक पोस्टर और कार्ड
- क्रान्तिकारी गीतों के कैसेट
- साहित्यिक व क्रान्तिकारी उद्धरणों-चित्रों वाली टीशर्ट, कैलेण्डर, बुकमार्क, डायरी आदि ...

**ऐसा साहित्य जो सपने देखने और भविष्य-निर्माण के लिए प्रेरित करता है!**

(हिन्दी, अंग्रेज़ी, पंजाबी और मराठी में)

**किताबें नहीं,**
**हम आने वाले कल के सपने लेकर आये हैं**
**किताबें नहीं,**
**हम असली इन्सान की तरह**

# जनचेतना

**मुख्य केन्द्र : डी-68, निरालानगर, लखनऊ-226020**

**फ़ोन : 0522-4108495**

***अन्य केन्द्र :***

- 114, जनता मार्केट, रेलवे बस स्टेशन रोड, गोरखपुर-273001, फ़ोन : 7398783835
- दिल्ली : 9999750940
- नियमित स्टॉल : कॉफ़ी हाउस के पास, हज़रतगंज, लखनऊ
  शाम 5 से 8 बजे तक

***सहयोगी केन्द्र***

- जनचेतना पुस्तक विक्रय केन्द्र, दुकान नं. 8, पंजाबी भवन, लुधियाना (पंजाब) फ़ोन : 09815587807

**ईमेल : info@janchetnabooks.org**

**वेबसाइट : www.janchetnabooks.org**

---

**हमारी बुकशॉप और प्रदर्शनियों से पुस्तकें लेने के अलावा आप हमसे डाक से भी किताबें मँगा सकते हैं। हमारी वेबसाइट पर जाकर पुस्तक सूची से पुस्तकें चुनें और ईमेल या फोन से हमें ऑर्डर भेज दें। आप मनीऑर्डर या चेक से या सीधे हमारे बैंक खाते में भुगतान कर सकते हैं। आप वेबसाइट पर दिये Instamojo के लिंक से भी भुगतान कर सकते हैं। हमारी किताबें आप Amazon और Flipkart से भी ऑनलाइन मँगा सकते हैं।**

**बैंक खाते का विवरण:**

**ACC. NAME: JANCHETNA PUSTAK PRATISHTHAN SAMITI**

**Acc. No. 0762002109003796**

**Bank: Punjab National Bank**

यदि आपको महज़ मनोरंजन चाहिए,
महज़ नशे की एक ख़ुराक,
दिल को बहलाने के लिए एक ख़याल
तो नहीं हैं ऐसी किताबें हमारे पास।
हम ऐसी किताबें लेकर आये हैं
जो आपकी मोहनिद्रा झकझोरकर तोड़ दें,
जो आज के हालात पर
आपको सोचने के लिए मजबूर कर दें।
हम किताबें नहीं
लड़ने की ज़िद
और हालात की बेहतरी की उम्मीदें
लेकर आये हैं,
हम आने वाले कल के सपने लेकर आये हैं।
हम लेकर आये हैं
एक सार्थक, स्वाभिमानी, मुक्त जीवन की तड़प।
किताबें नहीं
हम असली इंसान की तरह
जीने का संकल्प लेकर आये हैं।

# जनचेतना

**एक सांस्कृतिक मुहिम**
**एक वैचारिक प्रोजेक्ट**
**वैकल्पिक मीडिया का एक मॉडल**